गंगा-पुस्तकमाला का १३७वाँ पुष्प

टर्की का
मुस्तफ़ा कमालपाशा

रचयिता
श्रीशिवनारायण टंडन

मिलने का पता—
गंगा-ग्रंथागार
३६, लाटूश रोड
लखनऊ

प्रथम संस्करण

सजिल्द २)] सं० १९९० वि० [सादी १॥)

1933

दो शब्द

कमालपाशा ज़िंदा-दिल आदमी है, संगदिल शासक है, देश का भाग्य-विधाता है, वर्तमान टर्की का निर्माता है।

उसकी योग्यता असीम है, कार्य-शक्ति अदम्य है, देश-भक्ति अपूर्व है। हाँ, स्वभाव से उद्दंड है। उसके देशवालों ने उसे अपना सर्वेसर्वा डिक्टेटर बना रक्खा है।

उसने टर्की के दुश्मनों को पस्त किया है, देश के जयचंदों का ख़ातमा किया है। ख़िलाफ़त, सुल्तानियत और मज़हबी पागलपन को उसने मुल्क से उखाड़ फेका है। थोड़े में इतना कह देना अलम् होगा कि एक गिरती हुई क़ौम और टूटते हुए साम्राज्य को उठाकर उसने सभ्य और संगठित राष्ट्र बनाया है।

उसकी तुलना सुलेमानशाह, तैमूरलंग, चंगेज़ख़ाँ और नैपोलियन बोनापार्ट से की जा सकती है। यदि वह प्राचीन काल में जन्मा होता, तो उसने अलेक्ज़ांडर दि ग्रेट की तरह आधा संसार फ़तेह कर लिया होता, यह निर्विवाद है।

इस युग में लेनिन, गांधी, मुसोलिनी और कमालपाशा अपने विचारों और सिद्धांतों से दुनिया को जगा रहे हैं। ये मूर्तियाँ अपनी हस्ती और शक्ति से समूचे ब्रह्मांड को कंपित कर रही हैं। लेनिन और गांधी के विषय में बहुत कुछ लिखा जा चुका है, लिखा जा रहा है, पर कमालपाशा के प्राइवेट और सार्वजनिक जीवन पर लोगों ने अभी तक बहुत कम प्रकाश डाला है। कमाल

निस्संदेह अद्भुत व्यक्ति है, जिसके बारे में हिंदी-भाषा-भाषियों को जानकारी प्राप्त करने की महती आवश्यकता है।

* * *

कमाल को अपनी क़ौम की शक्ति में पूर्ण विश्वास है। उसे देश का भविष्य उज्ज्वल होने में कोई संदेह नहीं है। वह अपनी आवाज़ को टर्की की आवाज़ समझता है। उसका आत्मविश्वास बड़े ग़ज़ब का है।

"अभी कुछ दिनों तक और जनता को उन्नति के मार्ग पर बढ़ाना है। दस या पंद्रह साल का समय काफ़ी है। इस बीच में उसके पैर जम जायँगे, वह भला और बुरा समझने लगेगी, तब मेरे बच्चे अपने मुल्क पर ख़ुद ही शासन करेंगे।

"मैं डिक्टेटर हूँ, और अभी कई वर्षों तक डिक्टेटर रहूँगा भी ज़रूर, पर वह इसलिये कि भविष्य में किसी दूसरे डिक्टेटर की ज़रूरत न रह जाय। टर्की में डिक्टेटरशाही नहीं, प्रत्युत सच्चा प्रजातंत्र राज्य चले।"

कमालपाशा के ऐसे ख़यालात हैं। कहाँ तक उसे सफलता मिलेगी, यह या तो आगे आनेवाला ज़माना बतलाएगा, या भविष्य-वक्ता ही बतला सकते हैं।

* * *

पुस्तक का लेखक एक बार कमालपाशा से मिला था। उसने नैपोलियन, गैरीवाल्डी और अलेक्ज़ेंडर से उसकी तुलना करते हुए कहा कि आप तो इस युग के महापुरुषों में से एक हैं। यदि आप विदेशों में जायँ, तो लाखों आदमी अपलक होकर आपके दर्शनों को खड़े हो जायँ। इसके उत्तर में उसने जो कुछ कहा, वह आज भी कानों में घुँघरू की तरह बज रहा है। वह बोला, "मेरी इतनी प्रशंसा, तुलना और तारीफ़ काहे को करते हो भाई!

ऐसे-ऐसे ऐतिहासिक महापुरुषों से मुझ-से ख़ादिम की बराबरी करते शोभा नहीं देता। मेरा नाम सिर्फ़ मुस्तफ़ा कमाल है, पर यदि मेरा आदर ही किया चाहते हो, तो मुझे 'टर्की का मुस्तफ़ा कमाल' कह लो; बस, इसके आगे कुछ न कहो।" टर्कीवाले, कमालपाशा के देश भाई, उसकी इज़्ज़त में उसे ग़ाज़ी, विजयी, पाशा कहकर पुकारते हैं। जिस तरह भारतीय महात्माजी की इज़्ज़त करते हैं, ठीक उसी तरह टर्कीवाले कमाल को अपना ख़ुदा समझते हैं।

*   *   *

कमालपाशा अपने तौर-तरीक़ों, व्यवहार और यक़ीदों में पाश्चात्य सभ्यता का क़ायल है। वह समय की पाबंदी का बड़ा ख़याल रखता है। खेतों की बुवाई-जुताई में वह मोटर का उपयोग अपने हाथों करता है। कालर, नेकटाई, पैंट, हैट और बूट उसकी पोशाक में शामिल हैं। पाश्चात्य वेष-भूषा को वह बहुत पसंद करता है, और उसे सभ्य युग की पोशाक मानता है। उसके कारण टर्की के करोड़ों बाशिंदों ने योरपीय पोशाक और तर्ज़-तरीक़ों को अपनाया है। महिलाएँ और बालिकाएँ जो कभी हरमों में, ड्योढ़ियों में, सात-सात पर्दों में रहा करती थीं, वे आज ऊँची एँड़ी का जूता और फ़्रॉक पहने, मुँह खोले, बढ़िया रेशमी बाल कटाए, हँसती-खेलती बाज़ारों में चीज़ें ख़रीदती हज़ारों की तादाद में सड़कों पर नज़र आती हैं। कमाल के कहने से प्राचीनता-प्रिय तुर्कों ने सब कुछ किया है। पर्दे को विदा कर, बुरक़े को हटाकर, अंध-विश्वास को दूरकर और यहाँ तक कि भाषा की लिपि तक को बदलकर क्रांतिकारी परिवर्तन करने में कमाल ने कमाल कर दिखलाया है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि इतना बड़ा परिवर्तन इतने कम समय में, किसी एक आदमी ने आज तक

नहीं कर पाया था। नैतिक, शारीरिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक इनक़लाब की दुंदुभी को एक साथ बजाना कमालपाशा-जैसी महाशक्ति ही का काम है। जिन सुधारों को ज़बान पर लाने के कारण बादशाह अमानुल्ला को अफ़ग़ानिस्तान का तख़्त छोड़ विदेशों को भागना पड़ा, उन्हीं को कमाल ने चुटकी बजाते प्रचलित कर अपने को और भी लोकप्रिय बना लिया। इतिहासज्ञ संसार का अर्वाचीन इतिहास लिखते समय निस्संदेह कमाल की कृतियाँ स्वर्णाक्षरों में लिख जायँगे।

*   *   *

इतना सब होते हुए भी कमाल की विचार-धारा में पूर्व की छाप मौजूद है। टर्की का राष्ट्र आधा योरप में और आधा एशिया महाखंड में गिना जाता है। अतएव टर्की के भाग्य-विधाता के विचार-प्रवाह में कुछ एशियाई बू होनी ही चाहिए। बातचीत के दर्मियान में कुछ फ़िक़रे, जो उनके श्रीमुख से निकले, इस बात की पुष्टि करते हैं। वह कहने लगा—"भाई, सच पूछो, तो एक नहीं, पर दो कमालपाशा हैं। नंबर एक तो वह है, जो तुम्हारे सामने हाड़ और मांस का पुतला बना बातें कर रहा है। वह एक दिन ज़रूर गुज़र जायगा, दुनिया से अलविदा कह जायगा, अतएव मेरी दृष्टि में उसका कोई महत्व नहीं है। दूसरा मुस्तफ़ा कमाल वह है, जिसे मैं मरा हुआ नहीं कह सकता, जो सदा अमर रहेगा। उसे मैं रिप्रेज़ेंट नहीं करता। उसके सच्चे प्रतिनिधि (कमालपाशा ने प्रजातंत्र के सच्चे कार्यकर्ताओं की ओर उँगली उठाकर कहा) ये लोग हैं, जो देश के कोने-कोने में जाकर कमाल के नाम से नए जीवन की ज्योति जगाया करते हैं। मैं तो इनके कार्यों का, स्वप्नों का, अपने को प्रतिबिंब-मात्र समझता हूँ, और उसी के अनुरूप बनने की चेष्टा करता हूँ।" वाह! व्यक्तिवाद और अहं

को, यहाँ तक कि अपनी वास्तविक विशेषता तक को, न्योछावर कर देने की इस महापुरुष में कैसी ज़बरदस्त प्रवृत्ति है। जो देश की नौका का कर्णधार है, जो अंधकार में पड़े हुए देश में दीपक का काम दे रहा है, वह अपने को नगण्य और नाचीज़ समझता है—ज़रा शिक्षा लेने की बात है।

मुस्तफ़ा कमाल से बातें करते समय उसके व्यक्तित्व का अनुभव होता है। सैनिक ज्ञान, योग्यता, अनुभव, गंभीरता, देश-भक्ति और ख़यालातों की तेज़ी उसके चेहरे से टपकती है। जब टर्की के मुसीबत के दिनों का वह ज़िक्र कर रहा था, दुश्मन देश को रौंदने के लिये आगे बढ़ रहे थे, तब टर्की के नौजवानों ने जान पर खेलकर किस तरह मुल्क की आज़ादी को बचाया था, इसका ज़िक्र करते-करते उसकी भौंहें फड़कने लगीं, नीली आँखें ग़ुस्से से चमकने लगीं, रोंगटे खड़े हो गए। मालूम होता था, कोई सच्चा तारतारी, टर्की के अंदर से, अपने दर्द-दिल का इज़हार कर रहा है।

* * *

मुस्तफ़ा कमाल बारह-तेरह वर्षों के अविचल शासन और परिश्रम के बाद बहुत कुछ बदल गया है। युवावस्था की लुनाई चली गई है, बुढ़ापे ने अपना तक़ाज़ा शुरू कर दिया है। जिसने दस-बारह साल से उसे न देखा हो, वह उसे अब मुश्किल से पहचान सकता है। तब के और अब के चित्र में देखो, कितना अंतर है। हाँ, वही चौड़ी पेशानी, वही अकड़ी हुई गर्दन, वही तनी हुई छाती, वही ख़ूँख़्वार आँखें उसके कमाल होने का सुबूत देती हैं, वरना खाल पर झुर्रियाँ पड़ गई हैं, गाल पिचक गए हैं, बाल सफ़ेद हो गए हैं, अंग-अंग थक गए हैं। हमारा मतलब उस हाल-सांस के मुस्तफ़ा साहब से है, जिसे उसने स्वयं कमाल नं० एक बतलाया है। अपना सुख और अपना समय कैसा होता

है, यह कमाल ने जाना ही नहीं। कमाल का विवाहित जीवन बड़ा नीरस और अंत में बड़ा कटु रहा है। अब तो न धन है, न दौलत है; न मा है, न बाप है; न बीवी है, न बच्चा है; उसके लिये जो कुछ है, सो क़ौम और मुल्क है। देश के नाम कमाल ने अपनी जान और माल सभी की वसीयत कर रक्खी है।

* * *

अंगोरा और क़ुस्तुंतुनिया की कोई भी दूकान और हवेली ऐसी नहीं है, जिसकी दीवार पर कमालपाशा का चित्र न लटक रहा हो। कोई भी भोजनालय, होटल, वाचनालय और पुस्तकालय ऐसा नहीं है, जहाँ टर्की का त्राता मूक चित्र के रूप में मौजूद न हो। अंगोरा के लोग अपने को बड़ा भाग्यवान् मानते हैं, क्योंकि कमालपाशा घरेलू पोशाक पहने, रोज़मर्रा बाज़ारों के बीच टहलने निकलता और सभी आला व अदना से बातें करके ख़ुश होता है। पर क़ुस्तुंतुनिया के लोग ऐसे भाग्यशाली नहीं हैं। कमालपाशा की, जब-तब की बीमारी के कारण, तबियत-नासाज़ी की अफ़वाहें ज्यों ही शहर में फैलती हैं, सच मानिए, लोग बेचैन हो जाते हैं। ऐसे मौक़े आ चुके हैं, जब लोग ग़ाज़ी पाशा की मौत की अफ़वाह सुनकर सड़कों पर, चौराहों पर छाती पीटने और ज़ार-ज़ार रोने लगे, यहाँ तक कि कमालपाशा अफ़वाह को ग़लत साबित करने के लिये ख़ुद ही अंगोरा से हवाई जहाज़ पर उड़कर आया। "पाशा चिरजीवी हो" के नारों से लोगों ने ज़मीन-आसमान एक कर दिए। लोगों को शांत करते हुए कमालपाशा बोला—"भाइयो, मेरे पीछे इतनी घबराहट क्यों है। मैं तो भला-चंगा मुजस्सिम तुम्हारे सामने खड़ा हूँ। मेरे चेहरे की ओर देखो, क्या मैं बीमार मालूम होता हूँ ?"

लोग हिचकियाँ ले रहे थे, आँसू पोछ रहे थे, उन्हें समझाते

हुए कमाल कहने लगा कि यह बच्चों की-सी बात छोड़ो। मेरे शरीर के प्रति इतना मोह मत रक्खो। मैं, तुम और सब, एक दिन इस दुनिया से, मुसाफ़िर की तरह, अलविदा कह जायँगे, पर जब तक जियो, तब तक अपना कर्तव्य-पालन करो। इस नई सल्तनत में, प्रजातंत्र टर्की में, और तुर्कों की नवीन भाव-भंगी में—मैं रहूँ या न रहूँ—मेरा देश फले-फूलेगा, यह मैं विश्वास दिलाता हूँ। जब तक टर्की दुनिया के बीच इज़्ज़त की जगह नहीं पा लेता, तब तक मैं मरूँगा नहीं। कहते-सुनते, जनता की करतल-ध्वनि और सलामें क़बूल करते, हँसते, मुस्किराते और हाथ उठाते कमाल अपने निवास-स्थान बास्फ़ोरस के स्वास्थ्य-वर्धक टापू को उड़ गया। सवेरे शहर के कोने-कोने में ये ही बातें थीं कि कमाल-पाशा रात में आया था, वह ख़ुश था, तंदुरुस्त था और अभी बहुत दिनों तक ज़िंदा रहने का वादा करता था। अल्लाह उसकी उम्र में ज़रूर बरकत देता है, जिनकी शुभ कामना एक नहीं, दो नहीं, प्रत्युत लाखों और करोड़ों आदमी अपनी प्रत्येक श्वास में किया करते हैं। "कमालपाशा चिरंजीवी हो"—हम भी परवरदिगार से यही दुआ माँगते हैं।

काहू-कोठी }
कानपुर }

शिवनारायण टंडन
१०—४—२६

नोट

यह पुस्तक कई प्रसिद्ध लेखकों की कृतियों का भावानुवाद है। जिन पुस्तकों और लेखों से विशेष सहायता ली गई है, उनकी तालिका इस प्रकार है—

1. Grey Wolf By H. C. Armsstrong.
2. Mustafa Kemal of Turkey By H. E. Wortham.
3. Kemalist Turkey and the Middle East By Dr. K. Kruger.
4. London Times का एक लेख

इनके लेखकों को अनुवादक अनेक धन्यवाद देता है। क्योंकि यह उन्हीं के परिश्रम का फल है कि प्रस्तुत पुस्तक को इस रूप में हिंदी-संसार के सामने, इतने अप-टू-डेट तरीक़े से, रक्खा जा सका है।

टर्कों का
मुस्तफ़ा कमालपाशा

(१)

मुस्तफ़ा कमाल के माता-पिता, ज़ुबेदा और अलीरज़ा, बड़ी ग़रीबी में गुज़र-बसर करते थे। पर वे स्वाभिमानी तुर्क थे, अतएव कभी किसी के आगे हाथ नहीं पसारते थे।

उनका झोपड़ा सोलंकिया की ऊँची पहाड़ी के एक कोने में था। पुराने क़िले के दायरे में ग़रीबों का मुहल्ला था, बिलकुल गंदगी का घर था। पहाड़ी से नीचे धनाढ्य यहूदियों से आबाद, विशाल अट्टालिकाओं से घिरा हुआ, झाड़-फ़ानूसों से सजा हुआ, साफ़-सुथरा सोलंकिया का मशहूर व्यापारिक केंद्र और बंदरगाह था, जहाँ ऐश्वर्य और आनंद का सदा राग और गुलाल उड़ा करता था।

अलीरज़ा एक अनजान, अनबूझ व्यक्ति था। शहर में उसे कोई नहीं जानता था। भला ग़रीबों को जानने की किसे दरकार रहती है? फिर अलीरज़ा में न तो विद्या का प्रकाश था, और न कोई प्रतिभा थी। जब वह लड़का ही था, तभी अपने बुज़ुर्गों के

जन्म-स्थान अलबेनिया के पहाड़ों को छोड़ सोलंकिया के सरकारी दफ़्तरों में काम करने चला आया था। दूसरे, हज़ारहा क्लर्कों की तरह वह अपने काम को, रोज़मर्रा के चरखे को, बिना दिलचस्पी और उत्साह के चलाया करता। तनख़्वाह बहुत कम थी, वह भी महीनों पिछड़ी हुई रहती थी। चार-चार महीने बीत जाते, और एक कौड़ी की झाँकी न होती। ऐसी परिस्थिति में कुटुंब का निर्वाह बड़ा कठिन हो जाता, और पालन-पोषण के लिये कुछ-न-कुछ करना ही पड़ता, जिसे अली प्राइवेट व्यापार के तौर से ऑफ़िस के घंटों के बाद, अतिरिक्त समय में, किया करता था।

जिस महल्ले में और जिस मकान में ये दंपति रहते थे, वह बड़ा टूटा-फूटा, सकरा और कच्चा था। हालत यह थी कि आँधी-तूफ़ान आने या मेह बरसने पर ऐसा प्रतीत होता कि अब गिरा, तब गिरा। मकान के अंदर धूप का प्रवेश कभी नहीं हो पाता था, सरदी और अंधकार की प्रधानता रहा करती थी, जीवन और जागृति का दर्शन होना दुर्लभ था। सड़क पर कहीं धूल से भरे हुए, मैले-कुचैले कपड़े पहने, कुछ बच्चे खेलते होते, जिनके चेहरे कुम्हलाए हुए, मुरझाए हुए होते या कहीं दो-चार खाँसते-खखारते बूढ़े और अधेड़ दिखलाई पड़ते, जो काफ़ी के प्याले ढालते रहते या हुक़्क़ा गुड़गुड़ाते होते। अन्यथा सर्वत्र श्मशान-सी शांति दिखलाई पड़ती। कभी-कभी चश्मे या बावली से पानी लाने के लिये घर की बीबियाँ बुरक़ा डाले और मिट्टी का घड़ा बग़ल में

दवाए निकला करतीं, जो दिन-दहाड़े रेंगती हुई चुड़ैलों या भुतनियों-सी प्रतीत होतीं। मकानों के दरवाज़े सदा बंद रक्खे जाते, खिड़कियाँ भी उढ़की हुई रहतीं। स्त्रियाँ घोर अंधकार और मूर्खता का जीवन व्यतीत करतीं। थोड़े में इतना कह देना अलम् होगा कि उनकी जीवनियाँ कुत्ते और बिल्लियों से भी गई-बीती थीं।

ज़ुबेदा भी औरों की तरह घर की बाउंड्री में बंद रहा करती। जब मुस्तफ़ा पैदा हुआ, तब वह तीस साल की थी। जब वह सात साल की थी, तब से बुरक़े के अंदर रह रही थी। वह शायद ही कभी घर की देहरी के बाहर निकलती, और जब जाना ही पड़ता, तब अपने संरक्षकों से घिरी रहती! उसे शायद ही कभी लोगों से बात करने का मौक़ा मिलता—सिवा उन लोगों के, जो उसकी पड़ोसिनें थीं। ज़ुबेदा बिल्कुल निरक्षर थी—न लिख सकती थी, न पढ़ सकती थी। बाहरी दुनिया के रंग-रवैए और तौर-तरीक़ों से वह सर्वथा अपरिचित और अनभिज्ञ थी। तुर्क लोग अपनी स्त्रियों पर बहुत अविश्वास किया करते थे। उनकी दृष्टि में महिलाएँ खाना पकाने, गृहस्थी संभालने, बच्चे जनने और लड़कों को पालने के अर्थ ही जन्म लिया करती थीं।

फिर भी ज़ुबेदा अपने नन्हे-से कुटुंब की मालकिन थी। उसमें शासन करने की शक्ति थी। हाँ, गुस्सैल बहुत थी। ज़ुबेदा अच्छे किसान-ख़ानदान की लड़की थी। शरीर से लंबी और तंदुरुस्त थी। उसके बाल ख़ूब घने थे, आँखें नीली थीं,

पेशानी चौड़ी थी। बड़ी पाक, धर्मात्मा, देश-भक्त, पुराने ख़्यालातों और रीति-रिवाजों की हामी थी। सबसे बड़ी बात यह थी कि ज़ुबेदा होशियार और बुद्धिमती थी।

अन्यान्य तुर्की महिलाओं के समान ही उसका सारा ध्यान और समय बच्चों की परवरिश में ही लगा करता था। दो बच्चे थे—एक तो मुस्तफ़ा और दूसरी मक़बूला। मक़बूला मुस्तफ़ा की सगी बहन थी। शरीर से अच्छी और शक्ल की सुंदर थी। मुस्तफ़ा कमजोर और चुप्पा था। उसे न तो किसी से मुहब्बत थी, और न किसी का हुक्म मानने की आदत थी। मार खाने के नाम पर उसे बड़ी चिढ़ थी। लड़कपन से ही उसकी दोस्ती किसी से नहीं रही, एकांत, शांत और सुनसान स्थल में रहने तथा अकेले खेलने-कूदने की उसकी बान थी।

वेतन वग़ैरह के समय से न मिलने और बहुत कम मिलने से तंग आकर अलीरज़ा ने सरकारी नौकरी छोड़ दी। उसने लकड़ी का व्यापार शुरू किया। वह चाहता था कि मेरा बेटा मुस्तफ़ा सौदागर बने, ज़ुबेदा चाहती थी कि वह मुल्ला और मौलाना बने। पहले तो उसे मस्जिद के एक मकतब में भेजा गया, जहाँ उसने क़ुरान की आयतें घोकीं। उसके बाद एक दूसरे स्कूल में दाख़िल हुआ, जहाँ मुस्तफ़ा न अच्छी तरक़्क़ी की।

एकाएक अलीरज़ा की मृत्यु हो गई। चोब की सौदागरी में कुछ लागत तो लगी नहीं थी, उधार का माल था, सो लेन-

दारों की टुकड़ी आकर उठा ले गई। एक फूटी पाई का भी कहीं से सहारा न रहा, भूखों मरने की नौबत आ गई। जुबेदा ने झोपड़े में ताला डाल दिया, और अपने बच्चों को लेकर, सोलंकिया से बाहर, अपने भाई के समीप, जो खेती-बारी किया करता था, लज़सान-ग्राम में चली गई।

वहाँ मुस्तफ़ा से अस्तबल साफ़ करवाया जाता, घोड़ों और बैलों की लीद उठवाई जाती, गोरुओं को चारा देना होता, कौवे उड़ाने होते, और भेड़ें चरानी पड़तीं। ऐसा लगता था कि उसे वह जीवनी पसंद थी। सख़्त काम और खुले वायुमंडल ने उसके कमज़ोर शरीर की पुष्टि की। वहाँ उसकी तंदुरुस्ती अच्छी हो गई, पर उसकी एकांतप्रियता और किसी से न बोलने-चालने की आदत और भी बढ़ गई।

दो वर्ष के बाद जब मुस्तफ़ा ग्यारह साल का हुआ, जुबेदा ने अपनी एक बहन को उसकी स्कूल-फ़ीस देने के लिये राज़ी किया। इतने दिनों तक खेतों पर काम करने और जंगली जीवन व्यतीत करने से मुस्तफ़ा बड़ा अल्हड़ और ज़िद्दी हो गया था। वह जुबेदा की कोई बात न सुनता, सदा उसे चिढ़ाया और दुखाया करता—जुबेदा का लड़के पर कोई प्रभाव न रह गया था।

मुस्तफ़ा राम-राम करके सोलंकिया के स्कूल में भेजा गया। वहाँ वह सदा असंतुष्ट रहा। इतनी स्वतंत्रता के बाद उसे तमीज़ और अदब का जीवन बिलकुल नहीं सुहाता था। वह बहुधा मास्टरों से भी झगड़ बैठता। दूसरे लड़कों से उससे कभी

न पटती। उसकी प्रत्येक बात से घमंड और आत्म-विश्वास की मात्रा झलका करती। वह अन्य विद्यार्थियों के साथ खेल-कूद में भी शरीक न होता। लड़ाई-झगड़ा रोज़ ही रहा करता। एक दिन वह एक लड़के की छाती पर चढ़े घूँसे मार रहा था कि मास्टर साहब ने देख लिया। फिर तो वह उसे घसीटते हुए एक कमरे में ले गए, और मारे बेतों के चरसा उड़ा दिया। मुस्तफ़ा ने भी मास्टर साहब को ख़ूब गालियाँ दीं, और लातें मारीं। बस, उसी दिन से सोलंकिया के स्कूल की उसकी ज़िंदगी ख़तम हो गई। ग़ुस्से से लाल-पीला होकर वह घर भाग गया, और फिर वहाँ लौटकर जाने से उसने साफ़ इनकार कर दिया।

---

(२)

मुस्तफ़ा के इन कारनामों से ज़ुबेदा को बहुत दुःख पहुँचता। उसकी बहन ने इस शैतान लड़के पर एक पाई भी ख़र्च करने से इनकार कर दिया। सोलंकिया के स्कूल में जाने के लिये वह क़तई तैयार नहीं था। जब मा ने उसे समझाना-बुझाना चाहा, तो वह बैठे-बैठे सर हिलाता रहा। जब मा ने ज़बरदस्ती करनी चाही, तो वह ख़ूब लड़ा-झगड़ा। बेचारी अनाथ विधवा लड़के के उजड्डपन से तंग आ गई, और फिर कभी उसने उसे मजबूर करने का साहस न किया।

उसके चचा ने कहा कि यह इतना शरीर है कि कभी न तो लिखे-पढ़ेगा, और न कोई व्यापार करेगा। उनकी सलाह हुई कि मुस्तफ़ा को सैनिक-शिक्षा दी जाय। सोलंकिया में शाही सैनिक-स्कूल था, जहाँ फ़ीस कुछ नहीं लगती थी। अगर लड़के ने कुछ क़ाबिलियत दिखलाई, तो वह सिपहसालार हो जायगा, नहीं तो सिपाही बनकर ही कुछ कमाए-धमाएगा। उसके भविष्य जीवन का कुछ ठीक-ठौर तो हो जायगा।

ज़ुबेदा को यह बात पसंद न पड़ी, लेकिन मुस्तफ़ा को यह प्रस्ताव अपील कर गया। उसने निश्चय कर लिया कि वह फ़ौज में जायगा। अहमद, जो उसके एक पड़ोसी का लड़का था, अभी

सैनिक-स्कूल से पास होकर निकला था, और फ़ौजी वरदी पहने मुस्तफ़ा के आगे अकड़ा करता था। मुस्तफ़ा को फ़ौजी पोशाक बहुत पसंद थी, मस्जिद का मुल्ला बनने के नाम पर उसे नफ़रत थी। दुकानदारी, उसके ख़यालात से, बनियों, यहूदियों, ईसाइयों और आरमीनियन लोगों के लिये बनी थी, असली टर्क के लिये सिपाहियत ही शोभा देती थी। वह फ़ौज में भरती होगा, सिपाही बनेगा, वरदी पहनेगा, किसी दिन अफ़सर हो जायगा, और सैकड़ों हज़ारों सोल्जरों को हुक्म देगा— मुस्तफ़ा की यही दिली ख़्वाहिश थी।

विना किसी से कहे-सुने उसने अपने पिता के एक दोस्त से, जो फ़ौजी अफ़सर था, सिफ़ारिश करवाई। वह दाख़िले के इम्तहान में बैठ गया, और उसे सफलता मिली। शाही सैनिक-स्कूल में उसकी भर्ती की अर्ज़ी मंज़ूर हो गई।

मुस्तफ़ा सैनिक-स्कूल में क्या आया, उसे मन-चीती मुराद मिल गई। यहाँ उसके पैर जमे, उसे सफलता मिली, और स्कूल में उसकी धाक जम गई।

उसके मामले में चूँचरा करने की किसी सहपाठी की हिम्मत नहीं होती थी, अन्यथा वह तत्काल लड़ बैठता, और मार-पीट की नौबत आ जाती। जब साथी-संगी उससे खेल-कूद में शामिल होने और साथ रहने को कहते, तो वह झुँझला जाता और कहता कि मैं तुम-जैसी भेड़ों के झुंड में शामिल नहीं हो सकता, मैं कुछ होकर रहूँगा, और अपने रास्ते चला जाता।

मुस्तफ़ा बड़ा तेज़ विद्यार्थी था। मास्टरों का स्नेह-पात्र था। गणित और सैनिक-विज्ञान में उसका ज्ञान बहुत ज़्यादा था। अपने से ऊँचे दर्जे के विद्यार्थियों को वह गणित के प्रश्न समझाया करता। परेड के दिन उसका-जैसा चुस्त और तेज़ विद्यार्थी दूसरा नहीं दिखाई देता था।

दूसरे वर्ष स्कूल के हेडमास्टर ने उसकी योग्यता से खुश होकर उसे, पढ़ने के साथ-ही-साथ, फ़र्स्टइयर के विद्यार्थियों को पढ़ाने का काम भी सौंपा। एक दिन एक ऐसे जटिल प्रश्न को उसने शीघ्रता से हल कर दिया, जिसे अध्यापक महाशय स्वयं न समझा पाए थे। बस, उसी दिन से उन्होंने मुस्तफ़ा को मुस्तफ़ा कमाल के नाम से पुकारना शुरू किया। सैनिक-स्कूल में उसकी बड़ी इज़्ज़त थी। वह बड़ा खुश था। तभी से उसका नाम कमाल पड़ गया।

१७ साल का होते-न-होते उसने सारी कक्षाएँ पास कर लीं, और मुनस्तर (Monastir) के सीनियर सैनिक-विद्यालय में जा पहुँचा।

(३)

मुनस्तर में सैनिकों की छावनी थी। सैनिकों की टोलियाँ, मार्च और क्वीक मार्च करते, मारू बाजे बजाते, सड़कों पर घूमा करतीं। बंदूक़ों की ठायँ और तोपों की गुड़ुम-गुड़ुम की आवाज़ें सारे वातावरण में गूँजा करती थीं। ग्रीस ने टर्की पर हमला बोला था, और क्रीट (Crete) पर क़ब्ज़ा भी जमा लिया था। टर्की ने युद्ध की घोषणा कर दी थी, फ़ौजों का क़ाफ़िला युद्ध के मैदानों की ओर जा रहा था।

टर्की के लिये वह दिक़्क़त और तकलीफ़ का समय था, युद्ध और युद्ध की अफ़वाहों का बाज़ार गर्म था। ओटोमन-साम्राज्य आख़िरी सिसकियाँ ले रहा था। पाश्चात्य ईसाई-शक्तियाँ अपने-अपने जबड़े खोले, ख़ूँख़्वार दाँत निकाले एक दूसरे पर फुफकारें मार रही थीं। टर्की के छिन्न-भिन्न होते हुए साम्राज्य की बोटियाँ कौन कितनी ले भागता है, इसी बात की होड़ लगी थी।

देश में बड़ी अशांति थी। सुल्तान का राजतंत्र एकदम कमज़ोर आर निकम्मा था। जिसके संचालकों को सदा लूटने-खसोटने और व्यक्तिगत स्वार्थ साधने का ध्यान लगा रहता। प्रत्येक स्थल पर दरिद्रता का आवास था, भुखमरी का नज़ारा

था। टर्की के युवक सुधार-सुधार की पुकार मचाए थे, पर वहाँ कौन सुनता था।

सुल्तान अब्दुल हमीद बड़े शक्की स्वभाव के आदमी थे। वह विदेशियों से भी डरते तथा अपने देशवासियों और अपनी प्रजा से भी शंकित रहते। वह प्रत्येक नई भावना और नए विचार का दमन कर देते। सुधार देने के नाम पर खूब अत्याचार करते। उन्होंने सारे साम्राज्य को खुफ़िया पुलिस से भर दिया। जहाँ भी तीन आदमी इकट्ठा होते, वहाँ चौथा सी० आई० डी०वाला पहुँच जाता, और रिपोर्ट कर देता। उसके शासन में नागरिक अधिकारों का भी अपहरण हो गया था, जेलखाने भर गए थे, और सैकड़ों ईसाई फाँसी पर लटका दिए गए थे।

देश-भर में क्रांति और विप्लव का विचार-धारा बह रही थी। बाल्कन और मुनस्तर में तो विप्लवाग्नि खूब भड़की थी, और कोई ठिकाना नहीं था कि कब बम के गोले की तरह फटकर चारो ओर फैल जाती। नई विचार-धारा और स्वाधीनता की ज्योति तेज़ चश्मे की धार की तरह निरंतर आगे बढ़ रही थी।

एक तेजस्वी नवयुवक की तरह मुस्तफ़ा कमाल ने भी क्रांति की पोथी पढ़नी आरंभ की। वह शुरू से, जन्म से, ही क्रांतिकारी था। उसे सुल्तान का शासन क़तई पसंद नहीं था। वह बहुधा देश के भविष्य पर विचार किया करता, वार्तालाप किया करता और मुल्क को शत्रुओं से बचाने के बाँधनू बाँधा करता। वह लड़ाई के चित्र खींचता, जिसमें अपने को नेता और

सेनापति मानता। एक दिन सारा मजमा, सारा मुल्क, उसका कहा मानेगा, इसका उसे मानो लड़कपन से ही कुछ-कुछ आभास था।

छुट्टियों में वह सोलंकिया चला जाता, पर यथासंभव अपनी मा के मकान से दूर ही रहता। बात यह थी कि ज़ुबेदा ने रोदेस शहर के एक अमीर व्यापारी के साथ अपनी पुनः शादी कर ली थी। मुस्तफ़ा ने इस पुनर्विवाह का बड़ी तीव्रता से विरोध किया था, और साफ़ कह डाला था कि वह मा के इस आचरण से बहुत असंतुष्ट है। इसी बात पर मा-बेटे में लड़ाई-झगड़ा भी हुआ था। शादी होने के बाद मुस्तफ़ा ने अपनी मा के नए पति को कभी सौतेला बाप नहीं माना, और न उससे बोलना ही क़बूल किया।

सोलंकिया में कुछ योरपीय पादरी रहा करते थे। जब मुस्तफ़ा वहाँ जाता, तब फ्रेंच ज़बान सीखने का अभ्यास किया करता। फ़तेह उसका साथी और एकलौता मित्र था। वह फ्रेंच बहुत अच्छी जानता था। दोनो मिलकर वालटेयर, रूसो, हाब्स और स्टुअर्ट मिल के ग्रंथ पढ़ा करते; क्रांतिकारी साहित्य भी खूब पढ़ते। ये पुस्तकें ज़ब्तशुदा होतीं, जिन्हें पढ़ते हुए पकड़े जाने में जेलख़ाने का पूरा भय रहता। युवकों की बहुधा यह टेंव होती है कि जिस बात को मना कीजिए, जिस पुस्तक को पढ़ने से रोकिए, उसे वे ज़रूर करेंगे, ज़रूर पढ़ेंगे, उन्हें उसमें कुछ विशेष लुत्फ़ आता है। कमालपाशा के जीवन में भी हमको इस कथन की सत्यता का पग-पग पर आभास मिलता है।

मुस्तफ़ा कमाल ने व्याख्यान-कला सीखी, और इतना अच्छा बोलने लगा कि कॉलेज के सारे विद्यार्थियों को मात दे दी। टर्की, मातृभूमि टर्की, की ज़रूर रक्षा करनी चाहिए, उसे विदेशियों के चंगुल से बचाना है, और सुल्तान के अत्याचारी शासन-चक्र से छुड़ाना है—ऐसे-ही-ऐसे विचार उन दिनों मुस्तफ़ा के हृदय में हिंदोलित हुआ करते थे। वह स्वराज्य और स्वाधीनता पर बड़े तेजस्वी लेख लिखता, और ऐसी पुरजोश कविता करता कि सुननेवालों का जी फड़क जाता था।

अपने काम में, अपने अध्ययन में, मुनस्तर के विद्यार्थी-जीवन में भी वह खूब सफल रहा। टर्की-राज्य के युद्ध-सचिव को सूचना दे दी गई कि ऐसा तेजस्वी और होनहार विद्यार्थी कॉलेज में पहले कभी नहीं आया था। पर साथ ही उसकी उद्दंड प्रकृति और अजीबोगरीब ख़यालातों की रिपोर्ट भी दे दी गई। उस सूचना के अनुसार वार-ऑफ़िस ने कमाल को सब-लेफ़्टिनेंट बनाकर जनरल स्टाफ़ कॉलेज हरबिया, कुस्तुंनतुनिया को भेज दिया।

मुस्तफ़ा कमाल इस समय बीस साल का था। बदन छरहरा पर ख़ूब गठा हुआ, स्वभाव तेजस्वी, पर अहम्मन्यता से भरा हुआ, हर तरह से शक्ति-संपन्न, सेना के कष्ट और सख़्तियाँ झेलने क़ाबिल था।

पर उसे जीवन का कुछ अनुभव नहीं था। सोलंकिया एक छोटा-सा बंदरगाह था, लज्रान छोटा-सा क़स्बा था, और मुनस्तर भी एक साधारण-सा नगर था। पहले तो मा की देख-रेख रहती थी, पर अब बिलकुल स्वतंत्र था, तिस पर क़ुस्तुंतुनिया-जैसे अंतर्राष्ट्रीय केंद्र में उसका निवास था।

जवानी ने अपना तक़ाज़ा शुरू किया। इतना बड़ा शहर और ऐसी ऐश-आराम देखकर उसका युवक दिल भी उनकी ओर झुका, तो उसमें आश्चर्य काहे का। कुछ दिनों का उफान आया था, नए समुद्र में तूफ़ान आया था, अतएव कई महीनों तक मै और साक़ी का ख़ूब ही दौरदौरा रहा। टर्की की हूरें तमाम आलम में मशहूर हैं, आरमीनिया और ग्रीक की सुंदरियाँ क़ुस्तुंतुनिया में बाहुल्यता सें उपलब्ध हो जाती हैं। यह सब तो हुआ, पर कमाल किसी के मोहक प्रेम-जाल में नहीं फँसा। चंद महीनों के बाद जब वह नशा उतर गया, तब मुस्तफ़ा जी-

जान से अपने काम में जुट पड़ा। सारी परीक्षाएँ उसने बड़ी योग्यता-पूर्वक पास कर लीं, और सन् १९०५ के जनवरी-महीने में, सरकारी गजट में, फ़ौज में कैप्टेन की जगह पर उसकी नियुक्ति हो गई।

कमाल ने अपने कार्य-क्रम के साथ राजनीति सदा शामिल रक्खी। मुनस्तर में उसकी गणना सबसे तेज विद्यार्थियों में थी। स्टॉफ़ कॉलेज में जहाँ देश-भर के चुने-चुने युवा इकट्ठे हुए थे, वहाँ भी उसकी धाक थी।

कमाल को अनुभव हुआ कि ये सभी होनहार अफ़सरान क्रांतिकारी हैं। प्रत्येक युवा हृदय से सुल्तानियत और विदेशियों का द्रोही है। कॉलेज के अध्यापक और बहुत-से सीनियर अफ़सरान भी उनके साथ हैं। यद्यपि वे खुलासा तौर से विद्यार्थियों के साथ सहयोग नहीं करते थे, पर उनकी सारी हमदर्दी युवकों के साथ थी, और वे उनके किसी कार्य-क्रम में बाधक नहीं होते थे।

कॉलेज में एक क्रांतिकारी संस्था थी, जिसका नाम था 'वतन', जिसमें गुप्त सभाएँ होतीं, व्याख्यान होते, सलाह-मशविरा होता, और सुल्तान के शासन को उखाड़ फेंकने की तरकीब सोची जाती। यह संस्था राज्य के अधिकांश अफ़सरों को बेईमान और देश-द्रोही समझती थी। मुल्लाओं से नफ़रत करती, इस्लाम की पुरानी रूढ़ियों को कोसती, और मस्जिदों तथा धर्म के नाम पर चलाई जानेवाली संस्थाओं को ख़तरनाक

समझती। क़ुरान के आधार पर जो न्याय होता, उसे भी 'वतन' वाले मज़ाक़ समझते। बहुधा इन न्यायाधीशों से इन युवकों को नफ़रत हो जाती। जिसको चाहते फाँसी देते, जिसको चाहते जेल में ठेल देते। क़ुरानवाले जज शाह के हुक्म और ख़ुदा के नाम पर बड़े-बड़े अत्याचार और पापाचार किया करते थे।

वतन के सदस्यों ने क़समें खाईं कि हम—

१—सुल्तानियत की नादिरशाही को तोड़ेंगे।

२—देश में ऐसे शासन-विधान की स्थापना करेंगे, जो देश को सुखी बनावे, और जिसमें जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों का हाथ रहे।

३—जनता को मुल्लाओं के आतंक से बाहर निकालेंगे।

४—महिलाओं को हरम और परदे से बाहर करेंगे।

५—टर्की में नई ज्योति फूककर आगामी संतान का उत्थान और कल्याण करेंगे।

मुस्तफ़ा कमाल ने 'वतन' में अपना नाम लिखा दिया। वतन द्वारा प्रकाशित होनेवाले परचों के लिये वह ज़ोरदार लेख लिखने लगा। जनता में उसकी लिखी हुई, बेनाम की, कविता खूब पढ़ी जाने लगी। सभा के बहस-मुबाहिसे में भी वह प्रमुख पार्ट लेने लगा।

मिलीटरी कॉलेज के कमांडेंट—प्रधान—को वतन की करतूतों का सारा पता था, पर चूँकि उनके ख़यालात भी इस संस्था से

मिलते-जुलते हुए थे, अतएव उन्होंने कभी कुछ न कहा। जब सी० आई० डी०वालों को पता चला, और क़ुस्तुंतुनिया की जनता में उन्होंने भड़कन देखी, तब सुल्तान के पास महलों में ख़बर पहुँचाई। सुल्तान को यह सुनकर परेशानी हुई कि मेरी फ़ौज के भावी संचालकों में मेरे प्रति कैसी गंदगी थी। उन्होंने इस्माइल हाकी पाशा को जो मिलीटरी-ट्रेनिंग के डाइरेक्टर जनरल थे, हुक्म दिया, कि वह 'वतन' को फ़ौरन् तोड़ दें। इस अधिकारी ने कॉलेज के प्रधान की कड़ी आलोचना की, जिसके फल स्वरूप आगे से वतन की मीटिंगें कॉलेज की चहारदीवारी के अंदर न हो सकीं।

पर वतन का काम बाहर चलता रहा। उसका रंग वाद-विवाद-क्लब से बदलकर सरकार-विरोधिनी गुप्त संस्था के रूप में परिणत हो गया।

* * *

परीक्षाएँ ख़त्म हो चुकने के बाद उसे दो-तीन महीने की छुट्टी मिली। इसके बाद फ़ौजी ड्यूटी पर जाने की बात थी। उन दिनों कमाल की माली हालत अच्छी थी, क्योंकि मा ज़ुबेदा बेटे के मासिक ख़र्च के लिये काफ़ी भेज दिया करती थीं। उसी धन की सहायता से उसने वतन का कार्य-भार स्वयं अपने हाथों में ले लिया। सड़क के पिछाड़ी किसी गली में एक कमरा किराए पर लिया गया। वहीं वतन की नोटिसें लिखी जाती थीं। सभा की मीटिंगें इधर-उधर सर्वत्र हुआ करती थीं। कभी किसी के घर

पर बैठक हो गई, तो कभी किसी होटल में दावत के बहाने टुकड़ी जमा हो गई। इस तरह इन लोगों की कार्य-शक्ति और प्रचार-शक्ति दिन-पर-दिन बढ़ती जाती थी।

गुप्त संस्था के गुप्त कार्य-क्रम ने कमाल में बहुत सतर्कता ला दी। वह क्रांतिकारी संस्थाओं के संचालन करने की गति-विधि से परिचित होने लगा। कमाल ने बम बनाना भी शुरू किया, दूसरे सदस्यों ने भी सीखा। नए मेंबरों की कैसी परीक्षा लेकर सदस्य बनाना चाहिए, यह भी इन लोगों ने अनुभव से जाना, और बड़े ही कठोर नियमों का पालन करना शुरू किया। दूसरे के दस्तख़त बनाना, भेष बदलना, पुलीस और सी० आई० डी० पर निगाह रखना, सांकेतिक शब्दों में लिखना, बोलना और क़ौम एवं देश के नाम पर क़समें लेना इन लोगों ने सीख लिया।

पुलीसवाले इन लोगों पर सख़्त निगाह रखते थे। ख़ुफ़ियावाले प्रायः इन सबके पीछे पड़े रहते थे। वे इन लोगों को कोई राज-द्रोहात्मक कार्य करते हुए पकड़ना चाहते थे। भला यह कौन-सी कठिन बात थी, ख़ासकर तब जब कि वतन के संचालकगण अभी युवा और नौसिखिए थे। उनमें अनुभव की कमी थी, उत्साह-पूर्वक बकने-झकने की बाहुल्यता थी। कम बोलने और ख़ामोश रहने की क़ीमत कितने कम आदमी जानते हैं। एक दिन वतन के बहुत-से सदस्य एकत्रित थे। दो नए सदस्य, जो ख़ुफ़िया पुलीस के आदमी थे, दल के नेताओं से दीक्षा ले रहे थे कि पुलीसवाले सदल-बल

आ धमके। सभा-की-सभा गिरफ़्तार कर ली गई, और वे हथ-कड़ियों-वेड़ियों से जकड़े जाकर जेलख़ाने पहुँचा दिए गए।

कमालपाशा स्तंबोल की जेल में सबसे अलाहदा रक्खा गया। वह सबसे ख़तरनाक मुलज़िम समझा गया। पुलीस के पास उसके ख़िलाफ़ बहुतेरे सुबूत थे। वह काल-कोठरी की तनहाई में डाल-कर बंद कर दिया गया। भविष्य एकदम अंधकारमय था। अगर सुल्तान ने इसको ख़तरनाक प्राणी समझा, तो या तो जीवन का अंत हो जायगा, या आजीवन कारावास भुगतना पड़ेगा। उसके देखते-देखते स्तंबोल के ख़ूनी जेलख़ाने में न-जाने कितनों को क़त्ल कर डाला गया था।

ज़ुबेदा अपने लड़के से मिलने आई। उसकी बहन भी उसके साथ थी। बेचारियों ने घूस में रुपए भी ख़र्च किए, पर किसी तरह न मिल पाईं। हाँ, किसी तरह कुछ रक़म कमाल के पास पहुँचा दी गई थी, जिससे जेल में उसकी तकलीफ़ कम हो गई।

हफ़्तों बीतते जाते थे, पर कोई सुनवाई नहीं थी। उसी काल-कोठरी में रहना पड़ता, पाख़ाना-पेशाब भी वहीं करना होता! ऊपर छत के पास एक छोटा-सा छिद्र बना था, जिससे टिम-टिमाता हुआ प्रकाश घंटे-दो घंटे के लिये अंदर आ पाता। खाने-पीने का भी बड़ा कष्ट था। ओढ़ने के लिये चिल्लओंदार एक कंबल मिला था।

एक दिन, विना किसी सूचना के, दो फ़ौजी सिपाही एक

अफ़सर के साथ आए, और ताला खोलकर, कमाल को घेरे में करके जेलख़ाने के पिछवाड़े फ़ौजी शिक्षा के डाइरेक्टर जनरल इस्माइल हाकीपाशा के दफ़्तर में ले गए। कमाल ने जाते ही जंगी सलाम की, और फ़ौजी ढंग से—all attention होकर—खड़ा हो गया।

पाशा ने कमाल को बड़े गौर से देखा। हाकीपाशा पुराने ढर्रे के आदमी थे, काली-सफ़ेद दाढ़ी लहलहा रही थी, ढीले-ढाले कपड़े पहने हुए थे, पर बड़े नेक और शरीफ़ तबियत के बुज़ुर्ग थे। उन्होंने कमाल की योग्यता की बड़ी प्रशंसा सुन रक्खी थी, अतएव उसके प्रति वह कुछ सहृदय थे। हाकीपाशा उन दिनों सुल्तान के ख़ास आदमी समझे जाते थे।

"कमाल! तुमने स्कूल में, कॉलेज में और ऊँचे फ़ौजी विद्यालय में बड़ी योग्यता का परिचय दिया है। तुम अगर चाहो, तो तुम्हारा भविष्य सुल्तान की सेवा में बड़े आराम और इज़्ज़त से कट सकता है। पर तुमने अपने कृत्यों से इस फ़ौजी पोशाक और अपने चरित्र पर धब्बा लगाया है। तुम जुआ खेलते हो, शराब-ख़ाने में पड़े रहते हो, सुंदरी युवतियों के साथ घूमा करते हो। और, सबसे भयंकर बात यह है कि तुम शाह के ख़िलाफ़ बग़ावत का प्रचार करते हो। तुमने राजनीति में भाग लेना शुरू किया है, और सुल्तान के दुश्मनों से मिलकर तुम क्रांतिकारी बनते जाते हो। देखो, ये बातें बुरी हैं, इन बातों को अब छोड़ो।

"सुल्तान तुम पर दया करना चाहते हैं। इन सारे कारनामों

में वह तुम्हारे लड़कपन की झलक देखते हैं। तुम युवक हो और मूर्ख हो, अन्यथा ऐसे काम क्यों करो। तुम, मैं ने सुना है, परले सिरे के गँवार और उजड्ड भी हो।

"अच्छा, अब जाओ, और दमस्कस की घुड़सवार सेना (regiment) में कैप्टेन बनकर काम करो। तुम्हारा भविष्य तुम्हारे ही हाथों में है—यह ख़ूब समझ लो। अब तुमको दूसरी बार क्षमा नहीं मिलेगी, अतएव जाओ, और जी लगाकर अपनी सैनिक ड्यूटियों को पूरा करो।"

उसी रात में एक जहाज़ सीरिया के लिये छूटनेवाला था। पुलीस ने कमाल को सीधे वहीं पहुँचा दिया, उसे मा और मित्रों से भी मिलने का मौक़ा न दिया।

आठ दिन के समुद्री सफ़र के बाद वह बेरुथ-बंदरगाह में उतरा, जहाँ से घोड़े पर सवार हो, लेबानो के पहाड़ों को पार करता हुआ सीधे अपने रेजीमेंट में पहुँच गया।

*   *   *

रेजीमेंट विद्रोही दरवेशों के ख़िलाफ़ मार्च करने के लिये बिलकुल तैयार था; जब कमाल वहाँ पहुँचा। दरवेश फ़िरक़ेवाले बहुधा ही विद्रोह किया करते, लूट-मार मचाया करते, और फिर पहाड़ों में भाग जाते—उन्हीं को दमन करने का सामान और इंतज़ाम था।

इस चढ़ाई ने कमाल को वास्तविक सैनिक जीवन (active service) का बहुत ज्ञान कराया, पर रास्ता बड़ा ख़राब था। सर्वत्र

वीरान, नंगा, पथरीला, चढ़ाव-उतार का मैदान था। रास्ते में न तो हरियाली थी, और न पानी था। कोई पक्की सड़क भी नहीं थी। उन्हीं पहाड़ी पग-डंडियों से होकर चलना पड़ता था। दरवेश बड़े खूँख़्वार पहाड़ी-जाति के जंगली प्राणी थे। ज़मीन का चप्पा-चप्पा जिनका जाना-बूझा हुआ था।

दिन-पर-दिन बीतते गए, पर तुर्की फ़ौजें दरवेशों का कुछ बना-बिगाड़ न सकीं। ज्यों ही टर्की सेना उनके नज़दीक़ पहुँचती, वे अभ्यस्त प्राणी पहाड़ियों की गुफाओं में घुस जाते, या चोटियों पर चढ़कर पत्थरों की वर्षा करने लगते। कभी रात में छापा मारकर तुर्की फ़ौज की रसद और गोला-बारूद ले भागते, तो कभी चार-पाँच सौ की संख्या में सोती हुई सेना पर टूट पड़ते। तुर्की सेना जब उन्हें पकड़ न पाई, और न परास्त कर पाई, तब उसने उनके गाँव और घर उजाड़ डाले, जलाकर ख़ाक कर डाले, लहलहाते हुए खेत उखाड़कर घोड़ों को खिला दिए; और जो बचा, वह साथ लेते गए। जाड़े का मौसम नज़दीक़ था, बरफ़ गिरने लगी थी, अतएव तुर्की सेना दमस्कस को वापस आ गई।

मुस्तफ़ा कमाल को 'वतन' के लिये बेचैनी थी। किस प्रकार उस काम को यहाँ प्रारंभ और जाग्रत् किया जाय—यह एक जटिल समस्या थी। फिर भी कमाल ने उसकी स्थापना का कार्य प्रारंभ कर दिया, और अनेक देश-भक्त सेनावालों की सहानुभूति अपनी ओर खींच ली। जेल-जीवन की कठोरताएँ और हाक्री-पाशा की झिड़कियाँ उसे न तो डरा सकीं, और न उसके उठते हुए उत्साह को रोक ही सकीं। प्रकृति ने कमाल को क्रांतिकारी के कलेवर में जन्माया था। उसे न तो खुदा के प्रति श्रद्धा थी और न किसी व्यक्ति या संस्था के प्रति हमदर्दी थी। उसकी नज़र में पुरानी बातों का कोई महत्त्व न था, और न वह किसी शाह या संस्था को पाक और पवित्र समझता था। जवानी का जोश था, देश-भक्ति का अंगारा उसके जिगर में धायँ-धायँ कर जल रहा था। पर अब वह अपने कार्य में कहीं होशियार और समझदार हो गया था। आदमी ठोकरें खाकर सीखा करता है। कमाल ने कविता करना और लेख लिखना बिल्कुल बंद कर दिया। उसे निश्चय हो गया कि साहित्य और वतन का कार्य एक साथ नहीं चल सकते। साहित्य की सेवा उसकी आत्मा को नर्बल कर रही थी, शीघ्र निर्णय के मार्ग में साहित्य का सरोवर

एक बड़ी खाई के समान था, और आगे धँसने के मार्ग की मनोवृत्ति में बहुधा बड़ा बाधक होता था। दूसरी आपत्ति यह थी कि साहित्य-सेवा से प्रसिद्धि हो रही थी, जिससे चुपचाप, अन-जाने, अनबूझे काम करना प्रायः असंभव हो रहा था। अतएव उसने पुस्तकों को बाला-ए-ताक़ रक्खा, क़लम को रोका, ज़बान को बंद किया, और एक मन, एक प्राण हो क्रांतिकारी संस्था के संगठन में दत्तचित्त हो पड़ा।

उसे बीज बोने के लिये ज़मीन तैयार मिली। ठीक क़ुस्तुंतुनिया की तरह वहाँ भी युवक अफ़सरान असंतुष्ट थे, और ऊँचे ओहदे के सेनानी सहानुभूति रखते थे। इन लोगों के बीच में उसे मिलीटरी स्कूल का एक सहपाठी मिला, जिसका नाम मुफ़ीद लुत्फ़ी था। वह कमाल को कार्य में सहायता देने लगा। वतन की मेंबरी रोज़-ब-रोज़ बढ़ने लगी, और शीघ्र ही सीरिया-प्रदेश की सारी फ़ौजों में फैल गई। मुस्तफ़ा कमाल ख़ास आदमी समझा जाने लगा, पर शीघ्र ही उसे अनुभव हुआ कि उसने स्थान उपयुक्त नहीं चुना। उसने यह बाँधनू बाँधा था कि शीघ्र ही दमस्कस में वह विप्लवाग्नि भड़का देगा, पर वहाँ की जनता ने साथ न दिया।

मित्रों ने सलाह दी कि बाल्कन-प्रदेश में क्रांति की कली जल्दी ही फूलेगी। उसके लिये सोलंकिया में 'वतन' की स्थापना अनिवार्य थी।

कमाल ने सोलंकिया जाने का निश्चय कर लिया। इजाज़त मिले या न मिले, वह तो जाकर ही मानेगा।

जाफ़ा के बंदरगाह पर अहमद बे कमांडर था। वह वतन का एक प्रभावशाली सदस्य था, और कमाल की बड़ी इज़्ज़त करता था। उसने सहायता देने का वचन दिया, और अपने प्रदेश में रहनेवाली फ़ौज में मुस्तफ़ा का तबादला करवा लिया।

कुछ दिनों की छुट्टी लेकर, बहुत-से झूठे सफ़ेद कागज़ों पर दस्तख़त करके, अपना नाम और भेष बदलकर वह इजिप्ट के लिये रवाना हुआ। वहाँ से वह एथेंस पहुँचा, और एथेंस से सोलंकिया गया। कमाल ढीला-ढाला चोगा पहने, दाढ़ी लगाए एक व्यापारी का भेष बनाए था। रास्ते में उसे सभी जगह असंतोष, गुप्त समितियाँ और क्रांति के प्रारंभिक चिह्नों का नज़्ज़ारा दिखाई पड़ा।

सोलंकिया में पहुँचकर कमाल अपनी मा के पास ही ठहरा, और कई दिनों तक नीचे के तहख़ाने में छिपा रहा। उसने जो कुछ सुना था, वह क़तई ठीक था। सोलंकिया उन दिनों क्रांति-कारियों का अड्डा हो रहा था। मध्यम श्रेणी के ख़ास-ख़ास नव-युवक अफ़सरान वहाँ इकट्ठा हो रहे थे। एक बड़ा करिश्मा होने जा रहा था। अपनी मा और बहन के ज़रिए वह इन लोगों से ख़त-किताबत और बातचीत करने लगा, और कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों की सहायता से अपना ट्रांसफ़र वहीं करा लेने का प्रयास करने लगा।

इसी बीच में, लाख भेष बदलते रहने और लुकते-छिपते रहने पर भी, सुल्तान की ख़ुफ़िया पुलीस को मुस्तफ़ा की मौजूदगी

मालूम पड़ गई । क़ुस्तुंतुनिया से वार-ऑफ़िस का हुक्म आया कि कमाल को फ़ौरन् गिरफ़्तार कर ले। जेमिलपाशा पुलीस का प्रधान अधिकारी था । वह भी वतन का मेंबर था । शाही फ़रमान के आते ही उसने अपने विश्वस्त आदमी को भेजकर कमाल से सारा माजरा कहला दिया, और फ़ौरन् ही शहर छोड़कर किसी दूर प्रदेश में चले जाने का आग्रह किया । गिरफ़्तारी का वारंट किसी प्रकार दो दिन तक तो रोका जा सकता था, उसके बाद उसे डाल रखना असंभव था।

तब तो मुस्तफ़ा भागा । ग्रीस की सीमा को पार करते हुए कभी पैदल, कभी घोड़े पर, कभी नाव और कभी जहाज़ पर चढ़-कर वह जाफ़ा पहुँचा । जाफ़ा में अहमद बे के पास (जो मुस्तफ़ा का मित्र और संस्था का सदस्य था) उसकी गिरफ़्तारी का वारंट पहले ही से मौजूद था। यहाँ अहमद ने उसे बचाया। फ़ौजी वर्दी पहनाकर और ज़रूरी कागज़ात देकर कमाल को उसने जहाज़ पर से चुपचाप खिसका दिया, और उसकी जगह एक बनावटी व्यक्ति को पकड़ लिया, जो बाद में, शिनाख़्त न हो सकने से, छोड़ दिया गया। कमाल को अहमद बे ने सीधे गाज़ा के सीमाप्रांत पर भेज दिया, जहाँ मुफ़ीद लुत्फ़ी प्रधान सेनापति था। उस समय टर्की में इतनी अस्त-व्यस्तता थी, इतनी अशांति और बदइंतज़ामी थी कि ऐसी बातें संभव हो जाया करती थीं।

अहमद बे ने वारंट को क़ुस्तुंतुनिया लौटा दिया, और लिख दिया कि कमाल इस ओर से कभी नहीं गुज़रा । कमालपाशा

महीनों से गाज़ा के सीमांत प्रदेश में काम कर रहा है, वह सीरिया-प्रांत छोड़कर और कहीं नहीं गया है। सोलंकिया की पुलीस की मूर्खता और गलती है, जो एक योग्य राज-भक्त कैप्टेन के विरुद्ध उसने वारंट भेजा है।

हफ़्तों बाद जवाब लौटा। मुफ़ीद लुत्फ़ी से भी प्रश्न किया गया। उसने भी कमाल की मौजूदगी का क़समिया बयान दे दिया। कमाल इस बार मरते-मरते बच गया।

फिर एक साल तक वह बहुत ख़ामोशी से काम करता रहा। वह ख़ूब जानता था कि यदि इस बार वह सी० आई० डी० के हत्थे चढ़ गया, तो दुनिया से विदा कर दिया जायगा। उसने अपनी फ़ौजी ड्यूटी को ख़ूब मन लगाकर किया। अफ़सर उससे ख़ुश हो गए, और उन्होंने वॉर-ऑफ़िस को लिख दिया कि ऐसा क़ाबिल सेनानी यहाँ कभी नहीं आया था। क़ुस्तुंतुनिया की सरकार को विश्वास हो गया कि "पुलीस की गलती थी। कमाल अब सरकार का ख़ैरख़्वाह बन गया था, और अब कभी वह सुल्तान के ख़िलाफ़ बगावत का झंडा न उठाएगा।"

पर यह बात मुस्तफ़ा से कोसों दूर थी। वह सोलंकिया पहुँचने का बराबर प्रयत्न करता रहा। उस समय जब कि देश का घटना-चक्र तेज़ी से घूम रहा हो, वह श्मशान-से शांत सीरिया में पड़ा-पड़ा क्या करेगा। वतन के मेंबर वॉर-ऑफ़िस से लेकर सभी विभागों में थे। उनके ज़रिए उसने कोशिश जारी रक्खी, और आख़िरकार सफलता पा ली। मुस्तफ़ा कमाल को सोलंकिया

पहुँचने का हुक्म आ गया, उसी दिन जिस दिन ऑर्डर पहुँचा। कमाल घंटे-भर के अंदर अपना साजो-सामान बाँधकर क्रांति के केंद्र की ओर रवाना हो गया।

सोलंकिया में मुस्तफ़ा कमाल को नं० ३ फ़ौज में स्थान मिला। फ़ौजी ड्यूटी के कारण उसे कभी सोलंकिया में रहना पड़ता और कभी फ़ौजी मुआयने के लिये रेल में सफ़र करना पड़ता। अब वह अपनी बूढ़ी मा के पास ही रहता था। उसका दूसरा पति मर चुका था। एक बड़ा मकान और लाखों रुपए का सामान ज़ुबेदा को मिला था।

सोलंकिया में उसे साथ के पढ़े हुए बहुत-से साथी मिल गए। उनके ज़रिए उसने वतन की स्थापना करनी चाही, पर सफलता न मिली। वे उसकी बात सुनते थे, और सुनकर ख़ामोश रह जाते थे। बात यह थी कि वे लोग उसकी ओर से सतर्क थे। गिरोह बाँधे जब सब लोग बात करते होते, और मुस्तफ़ा आ जाता, तो वे वार्तालाप के ढर्रे को दूसरी ही ओर मोड़ देते। बातें कुछ महत्त्व की हैं—इसका उसे विश्वास था, पर उसकी समझ में यह न आता था कि लोग उसके नाम और शक्ल से इतना भड़कते क्यों थे।

आख़िरकार एक दिन भेद खुला। उसके एक सहपाठी मित्र ने उसके मकान पर, बंद कमरे में, उसे बतलाया कि सोलंकिया में Union & Progress*-नामक क्रांतिकारी समिति

* एकता-पूर्वक आगे धँसो।

मौजूद है, अतएव दूसरी संस्था की स्थापना यहाँ नहीं हो सकती। शहर में बहुतेरे यहूदी रहते थे, जो इटली के नागरिक थे और इटालियन मसोनिक लॉज के (फ़्री मेशन) संदस्य थे, अतएव गुप्त समितिवाले उन्हीं किसी के यहाँ सभाएँ किया करते थे, क्योंकि न तो उनके मकानों की तलाशी ली जा सकती थी, और न वहाँ पर वे गिरफ़्तार ही किए जा सकते थे।

फ़तेह और बहुत-से कमाल के साथी अफ़सर फ़्री मेसन हो गए थे। वे मेसोनिक लॉज में जाते और सुरक्षितावस्था के अधिकारों का फ़ायदा उठाकर उसी की बाउंड्री के अंदर राजद्रोही सभाएँ करते। यहूदियों से उन्हें इस काम के लिये यथेष्ट आर्थिक सहायता मिलती थी, क्योंकि वे भी सुलतानियत से ऊबे हुए थे।

Union and Progress की क्रांतिकारी कमेटी अभी तक कमाल की जाँच कर रही थी। जब उसे कमाल पर पूरा विश्वास और भरोसा हो गया, तब उसने मुस्तफ़ा कमाल को आने और शामिल होने की मंत्रणा दे दी।

*　　　*　　　*

मुस्तफ़ा कमाल 'लॉज' का सदस्य बनाया गया, पर उसे वहाँ का वातावरण पसंद न पड़ा। मसोनिक लॉज अंतर्राष्ट्रीय निहिलिस्ट-संगठन का एक हिस्सा था। उसमें अनेक क़ौमों और अनेक राष्ट्रों के प्रतिनिधि मौजूद थे, जो कभी रूस

और कभी वाइना की बातें करते। उसे अंतर्राष्ट्रीय बातों से कुछ सहानुभूति न थी, और न मसोनिक लॉज के सिद्धांतों से ही विशेष दिलचस्पी थी। वह सबसे पहले टर्क था, और उसे टर्क होने का बड़ा अभिमान था। उसे केवल टर्क के नाते टर्की से प्रेम था, अतएव वह सुल्तान और विदेशियों के प्रभुत्व के ख़िलाफ़ काम करना चाहता था।

वह यूनियन-कमेटी में बहुत देरी से आया था। जो उसके पुराने संचालक थे, उनका हुक्म चलता था। कमाल का यह चारित्रिक दोष या गुण था कि वह या तो स्वयं ही कार्य का संचालन करता, या उसमें कोई किसी प्रकार का भाग ही न लेता। उसने देखा कि कमेटीवाले काम तो कुछ नहीं करते, बात बहुत करते हैं। उसकी दृष्टि में संस्था का संगठन बहुत ढीला और निकम्मा था, अतएव उसने सभाओं में बड़ी कड़ी आलोचना की, एवं कुछ ठोस कार्य करने की ओर ज़ोर दिया।

उसे संस्था के लीडरों के प्रति कोई श्रद्धा न थी। इनवर, जमाल, नाज़ी, तलात वग़ैरह इसके संचालक थे, जिनमें से कोई हठी, कोई व्यक्तिगत स्वार्थी, कोई दक़ियानूसी, कोई निपट गँवार लड़ाका सिपाही और कोई पोस्ट-ऑफ़िस के क्लर्क थे। 'कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा'-वाली मसल के अनुसार ये स्वयंभू नेता लीडरी के पद पर आसीन हो गए थे।

मुस्तफ़ा कमाल इन सबको आड़े हाथ लेता रहता। वह

इन लोगों से जब बहस-मुबाहसा या बातें करता, तब ऐसा लगता, मानो एक गुरु अपने चेलों को राजनीति की शिक्षा दे रहा है। कमाल कभी किसी की तारीफ़ नहीं सुन सकता था। यदि किसी ने कमालपाशा को पालीटीशियन बतला दिया, तो उसने झट कमाल के मुख से राजनीतिज्ञ की महानता पर एक छोटा-सा महत्त्व-पूर्ण व्याख्यान सुन लिया। उसके साथी अफ़सरान इसीलिये कुछ तो उसके मुँह लगते घबराते और कुछ उससे नाराज़ रहते थे, पर उसकी योग्यता के सब क़ायल थे। यहूदी उस पर अविश्वास करते थे।

घर में भी उसके मारे लोग परेशान थे। एक ज़ुबेदा ही संसार-भर में उसकी आलोचना कर सकने में समर्थ थी, और मा के नाते उसे डाँट दिया करती थी। पर उससे भी कभी-कभी कमाल लड़ बैठता, और फिर कई-कई दिन तक बोलचाल बंद हो जाता।

कमाल अपने कार्य-क्रम में किसी तरह की दस्तंदाज़ी बरदाश्त नहीं कर सकता था। एक बार गुप्त समितियों के उसके कुछ मित्र आए, और घर पर बंद कमरे में वार्तालाप करते रहे। ज़ुबेदा ने उनकी भयंकर स्कीमें सुन लीं। मित्रों के चले जाने पर वह अपने बच्चे के कमरे में पहुँची, और बड़ी सख़्ती से पेश आई। कमाल ने मा को समझाना चाहा, पर पुराने ज़माने की बूढ़ी अपने राजा को क़त्ल करने और राज्य-शासन उलटा देने की बात से कैसे सहमत होती। दोनो एक

दूसरे से विगड़ गए, कमाल मा से रूठ गया। विना उठे, विना वोले और खाए-पिए दो दिनों तक विस्तर पर पड़ा रहा, आखिर मा क्या करती—राज़ी हो गई। उसे ख़तरा था कि वह बुढ़ापे में अपने इकलौते लड़के को खो देगी। यह कहीं चला जायगा, और फिर लौटकर न आवेगा—यह धारणा वूढ़ी को वहुत सताती थी। संभव है, कमाल की वात ही सही हो, यही सोचकर वह वेटे के कार्य-क्रम से सहमत हो गई, और उसके गुप्त कार्यों में सहायता देने लगी। पर ईश्वर और राजा के ख़िलाफ़ वग़ावत करना गुनाह है—यह वात वह वहुधा और वार-वार कमाल को वतलाती रहती थी।

इन ख़यालातों ने मा-वेटे के वीच में दूरी पैदा कर दी। कमाल जिस धातु का वना था, वह कुछ और ही था। घर की रातो दिन की ठक-ठक, स्त्रियों का कलह, उनकी वक-झक की आदत और अपने ऊपर होनेवाले प्रहार उसकी वरदाश्त से वाहर थे। उसने एक अलाहदा कमरा ले लिया, और मा की आलीशान हवेली छोड़ दी। चाहे जो कुछ नतायज भुगतना पड़ें, उसकी स्वतंत्रता ज्यों-की-त्यों अक्षुण्ण रहेगी। वह अक्सर वूढ़ी मा से आकर मिल जाता था। जो कुछ वह कहा करती, ख़ामोशी से एक कान से सुनकर दूसरे से निकाल देता। कमाल की यह धारणा थी कि उसके मार्ग में किसी को रोड़ा अटकाने का कोई हक़ नहीं था।

दिन-भर वह अपने फ़ौजी काम को वड़ी लगन से करता।

शाम को होटलों और काफ़ो में कभी यहाँ और कभी वहाँ षड्यंत्रकारियों से मिलता-जुलता। प्राइवेट मकानों में, जिनमें गृहस्थ रहते होते, इनकी गुप्त मीटिंगें हुआ करतीं। वहाँ खाते-पीते, बात करते सारी-की-सारी रातें बीत जातीं। मुस्तफ़ा कमाल प्रायः सभी सभाओं में शामिल होता, पर धीरे-धीरे उसका उत्साह घटता गया, और वह क्रियात्मक भाग कम लेने लगा। बात यह थी कि सभा के नेता उसे अपने दायरे के अंतरंग के अंदर घुसने नहीं देते थे। किसी कार्य की बागडोर उसके हाथ में सौंपते डरते थे। लोग उसकी कुछ नहीं सुनते थे, कमाल या तो सर्वेसर्वा होकर रह सकता था, या पृथक् होकर; वह गुप्त समिति की ओर से उदासीन हो गया।

उसकी एकांत-प्रियता बढ़ती गई, और बहुधा वह बहुत कम लोगों से मिलने और बातचीत करने लगा।

---

(७)

एकाएक विना किसी सूचना या पूर्ण तैयारी के क्रांति हो पड़ी। न्याज़ीपाशा ने कुछ आदमी इकट्ठे किए, और दक्षिणी मैसीडोनिया में जाकर सरकार के ख़िलाफ़ बग़ावत कर दी। इनवर ने भी विप्लव के पक्ष में अपनी विज्ञप्ति निकाल दी, और पूर्वीय मैसीडोनिया में क्रांति की अग्नि जाग्रत् कर दी। न तो कोई पक्का संगठन था, और न कोई ख़ास तैयारियाँ ही थीं। Union and Progress-कमेटी के कार्य-शील सदस्यों की संख्या तीन सौ से अधिक नहीं थी। इस आंदोलन में सेना का रुख़ क्या रहेगा—इसकी भी उन्हें जानकारी नहीं थी।

मुस्तफ़ा एकदम इन सबसे अलग और ख़ामोश रहा। वह अपनी फ़ौजी ड्यूटियों का पालन बड़ी तत्परता के साथ कर रहा था। वह ऐसे असंगठित आंदोलन में सहायता देने की मूर्खता करनेवाला जीव नहीं था। जब वह सहयोग देगा, तब उसके पहले वह सारी स्कीमों पर पूर्ण विचार कर लेगा, और सफलता की आशा और निराशा को भी ख़ूब तौल लेगा,

पर इस अनायास के असंगठित आंदोलन में ही सफलता मिल गई। आगामी कई महीनों की हिस्ट्री बड़ी अव्यवस्थित और विचित्र थी। कई सौ विद्रोही और उनके नेता पहाड़ों में

छिपे हुए थे। जो सेनाएँ उनके दमन के लिये भेजी जातीं, वे विद्रोहियों का साथ देने लगतीं। वर्षों से फ़ौजी सिपाही असंतुष्ट थे। उन्हें तनख़्वाहें और नई वर्दियाँ नहीं मिली थीं। उन्होंने काम करने से इनकार कर दिया, और बगावत कर दी। जब क़ुस्तुंतुनिया से ख़ास रिज़र्व फ़ौज भेजी गई, और उसने भी यही किया, तब तो लोगों ने दाँतों-तले अंगुली दबा ली मानो क्रांति के नाम में कुछ जादू था। जिस तरह तूफ़ान आने पर पत्तियाँ टूट-टूटकर गिर पड़ती हैं, उसी तरह सुल्तान की शक्ति का ह्रास हो रहा था। फिर तो कोई चारा न देख सुल्तान ने रंग बदला। तुरंत नए शासन-विधान का एलान कर दिया, ख़ुफ़िया पुलीस का महकमा तोड़ दिया, और आंदोलन-कर्ताओं के सहयोग की प्रार्थना कर उनका स्वागत किया। न्याज़ी और इनवर विजयी सेनापतियों की तरह सोलंकिया में दाख़िल हुए। नागरिकों ने उनके स्वागत में आँखें बिछा दीं। ईसाइयों और टर्कों ने जय-जय के नारों से दिग्दिगंत कंपित कर दिया।

मुस्तफ़ा कमाल यूनियन और प्राग्रेस-कमेटी के उन अन्यान्य मेंबरों के साथ, जिन्होंने इस आंदोलन में कोई प्रमुख भाग नहीं लिया था, विजयी वीरों से सोलंकिया में मिला। इनवर ने नए शासन-विधान की घोषणा ओलंपस पैलेस होटल की बारहदरी से की। उसके पीछे सैनिक अफ़सरों की पंक्तियाँ थीं, जिनमें कमाल भी अनजाना, अनबूझा-सा एक कोने में

खड़ा था। उस समय तक बहुत कम लोग जानते थे कि कमाल की क़ाबिलियत इतनी ऊँची थी।

इस समाचार के विदेशों में पहुँचते ही वे देश-भक्त और राजनीतिज्ञ, जिन्हें निर्वासित हुए बीसों वर्ष हो चुके थे, टर्की के लिये चल पड़े। उनमें शाहज़ादे, वज़ीर, और प्रत्येक कोटि के मंत्री तथा कार्यकर्ता थे। उन अनुभवी और त्यागी व्यक्तियों के आते ही युवक पीछे हट गए। यूनियन और प्राग्रेस-कमेटी पर भी इन लोगों ने अधिकार जमा लिया, और शक्ति तथा शासन किसके हाथों में रहे, इसका झगड़ा मचा। न्याज़ीपाशा अल्बेनिया गया हुआ था, जहाँ उसे किसी ने मार डाला। इनवर बर्लिन का फ़ौजी प्रतिनिधि बनाकर जर्मनी भेजा गया, और कमालपाशा को त्रिपोली की सेना-संबंधी रिपोर्ट के लिये उत्तरीय आफ़्रिका में पटका गया।

नई चीज़ मिली थी, अतएव एकदम लोगों में बौखलाहट आ गई। नई शक्ति हाथों में आई थी, जिसे सँभालकर रखने और संगठन करने की किसी ने कोई ज़रूरत न समझी और परस्पर के वैमनस्यों में पड़कर उसकी दुर्दशा कर डाली। ऐसे कठिन समय में एकता की महान् आवश्यकता थी, न कि आपस की फूट की। पर परिस्थिति बराबर बिगड़ती ही गई। जितनी शीघ्रता से क्रांति को सफलता मिली थी, उतनी ही जल्दी वह नष्ट भी होने लगी। सभी परिस्थितियाँ केवल परस्पर के वैमनस्य और फूट के कारण प्रतिकूल होती गईं। ऑस्ट्रिया ने

बोसनिया और हरज़ीगोविनिया पर क़ब्ज़ा कर लिया। ग्रीस ने क्रोटी पर अधिकार जमा लिया। बल्गेरिया ने, रूस की भ्रष्ट-पोषणता से, स्वतंत्रता घोषित कर दी। अल्बेनिया और अरब में विद्रोह हो गया। ईसाई और मुसलमान एक दूसरे से लड़ने-भिड़ने लगे। देश की स्वतंत्रता की सारी आशा समाप्त हो गई।

इस आपस के विग्रह का फ़ायदा सुल्तान के समर्थकों ने खूब उठाया। उन्होंने थैलियों के मोहरे खोलकर फ़ौजों को ख़रीद लिया। मुल्ला और मौलाना लोग हज़ारों की संख्या में गाँव-गाँव को भेजे गए कि ये नई सरकारवाले विलायती चूहे के समान इस्लाम-धर्म की पोथी को कुतर डालेंगे। ये लोग कोई यहूदी हैं, कोई फ़्रीमेशन हैं। सच्चे मुसलमान और टर्क तो इनमें विरले ही हैं। नई सरकारवाले मुसलमान धर्म को नष्ट कर रहे हैं।

बस, फिर क्या था। मुसलमानों में सर्वत्र धर्मांधता होती है। फ़ौजों ने नई सरकार से विद्रोह कर दिया, अफ़सरों को मार डाला, और गदर बोल दिया। क़ुस्तुंतुनिया पर क़ब्ज़ा जमा लिया गया, कमेटीवालों को बाहर खदेड़ दिया गया, और मज़हब तथा सुल्तान की जय-जयकारों के बीच राजधानी पर एक बार फिर सुल्तान का प्रभुत्व स्थापित हो गया।

मैसीडोनिया-प्रांत क्रांतिकारियों के हाथों में था। यदि मैसी-डोनियावाले और फ़ौजें मोर्चा लेने को कटिबद्ध हो जायँ, तो अब भी कुछ नहीं बिगड़ा था, अन्यथा सारे देश में अब्दुल-हमीद की सरकार का पुनःस्थापन हो जायगा। मैसीडोनिया का

कमांडिंग अफ़सर शौक़तपाशा था। कमालपाशा शौक़त का असिस्टेंट था। शौक़त का मन एक ओर सुल्तान का पद ग्रहण करने को कहता और दूसरी ओर जनता का साथ देने को मजबूर करता। आख़िर कमाल और उसके फ़ौजी स्टाफ़ ने उसे बहुत समझा-बुझाकर कमेटी का पक्ष लेने के लिये तैयार किया। तब कभी झिझकते, कभी आनाकानी करते उसने तीन फ़ौजों को क़ुस्तुंतुनिया पर धावा बोलने का हुक्म दिया। इनवर भी जर्मनी से वापस आ गया था, और मैसीडोनियावालों को कमेटी के पक्ष में रखने का अहर्निश प्रयत्न कर रहा था। वह भी फ़ौजों के साथ था। कमाल इस फ़ौजी यात्रा में सैनिक स्टाफ़ का प्रमुख अफ़सर था।

शाही क्रांति को ख़त्म कर दिया गया, सुल्तान अब्दुल हमीद क़ैद कर लिया गया, उसका भतीजा नाम-मात्र को गद्दी पर बैठाया गया, और फिर से कमेटीवालों का शासन राजधानी पर हो गया।

कमेटी जब पुनः एकत्रित हुई, तो सबने इनवर को बहुत मान दिया। वह कमेटी और देश का संरक्षक समझा गया। इनवर जानता था कि आत्मविज्ञापन कैसे किया जाता है। वह पब्लिक की निगाहों में शीघ्र ही चढ़ गया। पर कमाल में यह ख़ूबी नहीं थी, वह चुपचाप बड़ी ख़ूबी से काम करने का आदी था। सच पूछिए, तो इस विजय यानी कमेटी की पुनः-स्थापना का श्रेय बहुत कुछ कमाल ही को था, पर किसी ने

सार्वजनिक रूप से प्रशंसा न की। जनता उसे जानती तक नहीं थी, लीडर उसे चाहते नहीं थे। कमेटीवाले उसे अच्छा सेनापति (कमांडर) समझते थे, पर उसके स्वभाव, उसकी कड़ी आलोचना और ज़िद्दी प्रकृति से नाराज़ थे। बहुत-से लोग उसको घमंडी भी समझते थे। कमाल की यह हालत थी कि उसे न तो कोई चाहता था, और न उसके कोई मित्र थे। इस सफलता के बाद ही कमेटीवालों ने उसे फिर मैसीडोनिया वापस भेज दिया, जहाँ मुस्तफ़ा कमाल पूरी शक्ति और योग्यता से सेना के सुधार और पुनर्निर्माण में जुट पड़ा।

मुस्तफ़ा कमाल जन्म से ही शूरमा सिपाही है। उसमें फ़ौजी मनोवृत्ति और शक्ति कूट-कूटकर भरी हुई है। उसने अटूट परिश्रम से सेना का पुनः संगठन किया, प्रत्येक सिपाही से व्यक्तिगत संबंध स्थापित किया, सैनिक-इतिहास का पाठ पढ़ा, और नैपोलियन की चढ़ाइयों का सविस्तार मनन कर लिया। पूरे तीस वर्ष का होते-होते वह मैसीडोनिया की तीसरी फ़ौज का अध्यक्ष बन गया।

सन् १९१० में जनरल अलीरज़ा टर्की के फ़ौजी मिशन के प्रधान की हैसियत से फ़्रांस गए थे। कमालपाशा भी इस मिशन में साथ थे। लौटने पर अलीरज़ा ने कमाल की बड़ी प्रशंसा की, अतएव वार-ऑफ़िस ने उसे सोलंकिया के सैनिक-स्कूल का प्रधान बना दिया।

कमाल ने स्कूल का संगठन एकदम नई पाश्चात्य शैली से किया। पर उसे अपनी परिस्थिति से असंतोष था। वह राज-नीतिज्ञ बनना चाहता था, पर ऐसा लगता था कि उसके लिये राजनीतिक क्षेत्र में कोई स्थान ही न था।

रिवोल्यूशन होने के बाद भी देश की स्थिति में कोई सुधार न हो सका। इनवर, तलात और जमाल देश के शासक थे।

सुप्रसिद्ध यहूदी जेबिड़ अर्थ-सचिव था। इन सबसे कमाल चिढ़ता था। उसकी दृष्टि में ये सब क्षुद्र आदमी थे, जिनके लिये टर्की-जैसे विशाल साम्राज्य का शासन करना असंभव था।

कमाल अपने इन ख़यालातों को छिपाकर नहीं रखता था—नहीं रख सकता था। वह ऑफ़िसर स्कूल में प्रधान की हैसियत से और सार्वजनिक रूप में जनता-पक्ष के एक व्यक्ति के पोज़ीशन से अपने विचारों का खुले आम प्रचार करता। वह कहा करता कि ये बड़ी शक्तियाँ टर्की की बोटियों के लालच में डूबी हुई हैं। जरमनी अपना पंजा देश के गले पर लगाए है। उसके बड़े-बड़े अर्थशास्त्रज्ञों ने विशेषाधिकारों के ख़रीदने में ग़ज़ब कर रक्खा है। बग़दाद-रेलवे पर भी उनका आधिपत्य जम गया है। जेबिड़ ने देश को विदेशियों के हाथों बेच डाला है। जर्मनी ने तो मुल्क पर क़ब्ज़ा ही जमा रक्खा है। यह सब अनुचित है, अन्याय है। टर्की पर टर्कों का शासन होना लाज़िमी है। बाहरी शक्तियों को हमारे बीच में दस्तंदाज़ी करने की क्या ज़रूरत है। टर्की की अंदरूनी दशा दिन-पर-दिन भयंकर होती जाती है। ग़रीबी सर्वत्र आफ़त ढा रही है, और ख़ासकर फ़ौजों में बड़ा असंतोष है। जिसमें देश की रक्षा हो, टर्की के साम्राज्य का कल्याण हो, वैसा कार्य करने की तुरंत आवश्यकता है।

* * *

मुस्तफ़ा कमाल अब एक ऊँचे दर्जे का अफ़सर था। वह जनरल स्टॉफ़ का एक प्रमुख सदस्य था। उसकी ख्याति बढ़ रही थी—फ़ौजों के बीच उसका नाम हो रहा था। फ़ौजों के अफ़सरों ने उसकी बात को सुनना पसंद किया। वे उसे अपना नेता मानने लगे, और जो कुछ वह स्थिति का बयान करता, उसे समझने का वे लोग प्रयत्न करते थे।

कमाल ने अपने तौर-तरीक़े बदले। उद्दंडता छोड़कर वह पहले से ज़्यादा मिलनसार बने। उनकी यह इच्छा होने लगी कि आम लोग उसकी इज़्ज़त करें, उसकी बात सुनें, और उसे नेता माने। अपने सहायकों और साथियों के साथ कमाल दोस्ताना व्यवहार रखता। वह धीरे-धीरे सोलंकिया जनता के बीच महान् व्यक्ति और आंदोलन का प्रवर्तक नेता माना जाने लगा।

इसकी रिपोर्ट युद्ध-सचिव मुहम्मद शौक़तपाशा को दी गई। वह वे इस व्यक्ति को जानते थे, और उसकी विचार-धारा को भी पहचानते थे। उन्होंने कमाल की बदली सोलंकिया की नं० ३८ फ़ौज में कर दी। लेकिन इससे कोई अंतर न पड़ा, बल्कि और भी अधिक अफ़सरों की सहायता कमाल को मिलने लगी।

यहाँ उसने अपना कार्य-क्रम और भी मज़बूत बनाया। सायं-काल के समय गुप्त सभाओं में जाता, उन्हें काम करने का मार्ग दिखलाता, और नए शासन-विधान की बुराइयाँ समझाता। उसका कथन था कि विदेशियों को देश से निकाल दिया जाय। और,

'टर्की टर्कों के लिये हो' (Turkey for the Turks) यह कमालपाशा का क़ौमी नारा था !

गवर्नमेंट के दूतों ने रिपोर्ट कर दी कि कमाल बड़ा ख़तरनाक साबित हो रहा है। कमेटी ने उसे सज़ा देने की आज्ञा दी। शौक़तपाशा ने उसे बुलवा भेजा, और सेना में सरकार के ख़िलाफ़ प्रचार करने का दोष लगाया। कमाल ने अपनी सफ़ाई दी, पर उससे शौक़तपाशा को संतोष न हुआ। इसके साथ ही कमाल के विपक्ष में उनके पास लिखित प्रमाण भी नहीं थे, अतएव उन्होंने कमाल को ख़बरदार हो जाने के लिये कहा, और सोलंकिया से तबादला करके अपने पास, वार-ऑफ़िस में ही, उसे रख लिया।

कमाल को किस तरह से समझा या जाय—यह एक समस्या थी। धमकियाँ और घुड़कियाँ उस पर कोई असर ही न करती थीं, क्योंकि कमाल में ज़बरदस्त निर्भयता थी। वह ऐसे ढंग से काम करता था कि उसके ख़िलाफ़ सुबूत इकट्ठा करना भी ज़रा टेढ़ी खीर थी। फिर भी वार-ऑफ़िस में रहते हुए उसका पीछा किया जा सकता था, और वह बाल्कन के क्रांतिकारी दल से पृथक् था—अधिकारियों को इससे बड़ी तसल्ली थी।

* * *

क़ुस्तुंतुनिया के राजनीतिक क्षेत्र में अब भी बड़ी खलबली थी। राजनीतिज्ञ अपने-अपने हाथों में शासन की बागडोर रखने के लिये लड़-झगड़ रहे थे। मंत्रिमंडल हफ़्ते-दो हफ़्ते से

ज़्यादा न चलते। महीने में कम-से-कम दो बार नया चुनाव होता, नए आदमी आते। किसी एक महान् नेता की आवश्यकता थी, जो भिन्न-भिन्न दलों को मिलाकर देश में स्थायी सरकार की स्थापना कर सके। मुहम्मद शौक़तपाशा ज़रूर एक ऐसे व्यक्ति थे, जो नेताओं पर अपना प्रभाव रखते थे, पर जब वह भी रोज़मर्रा की कठिनाइयों से परेशान हो गए, तब आख़िरी मार्के के मौक़े पर इस्तीफ़ा दे पीछे हट गए।

एक पार्टी ऐसी थी, जिसका नेतृत्व जमालपाशा के हाथ में था, जो जर्मनों से विद्वेष रखती थी। वे लोग जर्मनी को टर्की-सेना में देखना पसंद नहीं करते थे। वान वेनगेनहीन, जो जर्मन-राजदूत था, इनवरपाशा का दोस्त था। बड़ा मक्कार, स्वदेश-भक्त, क्रूर और ऐसा कर्त्तव्य-परायण व्यक्ति था कि अहर्निश टर्की को जर्मनी के लिये कामधेनु और जर्मन-सरकार के हाथ का खिलौना बनाने के प्रयत्न में लगा रहता था।

मुस्तफ़ा कमाल से इस पार्टी के नेताओं से मैत्री भाव हो गया। पाठकों को चाहिए कि राजनीतिज्ञों की मैत्री को सरल, सच्ची मित्रता के रूप में कभी न समझा करें। अँगरेज़ी में एक कहावत है—In politics the friend of today is the foe of tomorrow or foe of today is the friend of the morrow अर्थात् राजनीतिक दोस्ती बड़ी विचित्र होती है। कल का दोस्त परसों दुश्मन हो जाता है, और आज का दुश्मन कल मित्र बन जाता है। कमालपाशा की इस नई दोस्ती

में इन्हीं भावों का प्राचुर्य है। कमाल का विश्वास था कि वह शीघ्र ही इस पार्टी का एक रत्न समझा जाने लगेगा, पर उसके बुरे स्वभाव, चिड़चिड़ेपन और सदा ऐब निकालते रहने की प्रवृत्ति से लोग नाराज़ रहते थे। यहाँ क़ुस्तुंतुनिया में उसकी सहायता करनेवाली कोई शक्ति भी नहीं थी। सोलंकिया में तो उसे नेता माननेवाली योग्य अफ़सरों की टोली थी, जनता के बीच उसकी ख्याति थी, पर क़ुस्तुंतुनिया में तो किसी को कमाल के संबंध की जानकारी ही नहीं थी। अभाग्य-वश किसी फ़िल्म में भी कमाल के ऐक्टिंग की चाह नहीं हो पाती थी।

पर निःसंदेह जमाल और उसके दलवाले कमाल का मान करते थे। वे उसे होनहार महान् सेनापति मानते थे, और इनवर-पाशा तथा जर्मन-राजदूत से मोर्चा लेने के लिये कमाल की आवश्यकता अनिवार्य समझते थे।

* * *

इसी समय—सन् १९११ के ऑक्टोबर-महीने में—इटली ने उत्तरीय आफ़्रीका में त्रिपोली पर चढ़ाई बोल दी। शहर पर क़ब्ज़ा कर लिया, और सारे समुद्री किनारे पर आधिपत्य जमाने के लिये इटैलियन सेना खड़ी कर दी। टर्की पर नई विपत्ति आनेवाली थी।

देश पर विपत्ति आई देख कमाल ने राजनीति को त्राल-ए-ताक़ कर दिया। देश के प्रति कर्तव्य निवाहना था। कमाल ने इटली-वालों से लड़ने के लिये आफ़्रिका जाने का निश्चय कर लिया।

त्रिपोली का प्रदेश टर्की-राज्य के अंतर्गत था। पर वहाँ पहुँचने के लिये रास्ता बड़ी दूर का, सीरिया तथा मिश्रदेश होकर, था। इटली ने दर्रे दानियाल पर पहले ही से क़ब्ज़ा जमा लिया था, अतएव समुद्री रास्ता भी बंद था। टर्की के पास केवल दो जहाज़ थे, जो एक ज़माने से बेमरम्मत पड़े थे। उनके ज़रिए फ़ौजें भेजना असंभव था। त्रिपोली की रक्षा के लिये सेना तो थी, पर वहाँ अच्छे अफ़सरों की बड़ी कमी थी। इनवर फ़ौरन् ही चला गया था, फ़तेह बे भी पेरिस से भेष बदलकर वहाँ जा पहुँचा था।

कमाल भी अपने दो मित्रों के साथ ख़ुश्की के रास्ते से युद्ध-स्थल के लिये चल पड़ा। एशिया-माइनर पार करते हुए, फ़िलस्तीन होते हुए, कभी रेल और कभी घोड़े पर सफ़र करते ये लोग एलेग्ज़ैंड्रिया-बंदर तक पहुँचे। वहाँ देखते क्या हैं कि अँगरेज़ महाराज विराजमान हैं। इजिप्ट को तटस्थ घोषित करके रास्ता बंद किए बैठे हैं।

मुस्तफ़ा की गुस्सा का क्या पूछना। मिश्र टर्की का उपनिवेश था, अँगरेज़ों को उस पर क्या अधिकार था। टर्कीवालों के लिये उधर से आने-जाने का रास्ता भी रोक देना कितना ज़ुल्म था।

पर हो क्या सकता था। लाचारी दर्जे इन सबने एक दूसरे का साथ छोड़ दिया, और भेष बदल-बदलकर भिन्न-भिन्न मार्गों से त्रिपोली का रास्ता लिया।

मुस्तफ़ा कमाल ने अरबवाले सौदागर का भेष बनाया। हुक्क़ा हाथ में लिया, पर उसकी नीली आँखों, भूरे बालों और तेजस्वी मुखड़े ने राज़ खोल दिया। इजिप्ट के सीमा-प्रदेश पर जब वह अरबी की पोशाक में उतरा, तो वहाँ के अफ़सर ने उसे पहचान लिया। उसके पास पहले ही से कमाल का विवरण आ चुका था।

पर वह अफ़सर सच्चा मुसलमान था। अँगरेज़ों और इटलीवालों से उसे नफ़रत थी। उसकी सारी सहानुभूति टर्की के साथ थी, पर हुक्म की पाबंदी भी तो करनी थी। कमाल के स्थान पर उसने एक दूसरे टर्क को, जिसकी हुलिया मुस्तफ़ा से मिलती-जुलती हुई थी, रोक रक्खा, और कमाल को बड़े आदर और प्रेम से आगे बढ़ने की इजाज़त दे दी।

* * *

इस तरह मुस्तफ़ा क़िस्मत से टर्की की फ़ौजी छावनी में पहुँच गया। दरना के बंदरगाह से १५ मील की दूरी पर सेना का पड़ाव पड़ा था।

सेना ने मुस्तफा का जी खोलकर स्वागत किया। मुस्तफ़ा इस जगह से भली भाँति परिचित था। क्योंकि पहले भी कई वार इस क्षेत्र में वह सेनाओं का संचालन कर चुका था। वहाँ के वाशिंदों और चप्पा-चप्पा ज़मीन से उसकी जानकारी थी।

उसे फ़ौज में मेजर का स्थान मिला। उसके चार्ज में सामने के हमले का मोर्चा सौंपा गया, जो सवसे कठिन था। वहाँ की आधी फ़ौज का कमाल आला अफ़सर था।

इटलीवालों ने जहाज़ों की सहायता से समुद्री किनारे पर क़ब्ज़ा कर लिया था ज़रूर, पर थल-युद्ध में वीर टर्कों ने उन्हें आगे न वढ़ने दिया। आस-पास के सारे प्रदेश में मज़हव के नाम की दुहाई फेर दी गई कि ईसाई-शक्तियाँ इस्लाम-धर्म को कुचलने के लिये आई हैं, सव लोग युद्ध में सहायता करें। फिर क्या था, वहादुर तुर्कों के क़ाफ़िले-के-क़ाफ़िले आ-आकर फ़ौज में शरीक होने लगे।

इनवरपाशा प्रधान सेनापति थे। वह ख़लीफ़ा, सुल्तान और इस्लाम-धर्म के सवसे वड़े प्रतिनिधि थे। सेनुस्सी के शेख़ ने अपनी फ़ौज भेजी, और इनवर को भाईजान कहकर संवोधित किया। इन शेख़ महोदय की वहुत वड़ी पदवी और कीर्ति थी।

तंवू तने हुए थे, क़ालीनें विछी हुई थीं। वड़ी-वड़ी निगालियों के हुक़्क़े सामने जमे हुए थे। इन्हीं में इनवरपाशा वड़े ठाट-

बाट से रहते और शेख़ों तथा आए हुए क़ाफ़िलों से मिलते। इनवर स्वयं अपने हाथों फ़िरक़ों में रक़म बाँटते थे, और मृत सैनिकों की बेवाओं को रुपया भिजवाते थे। उनका रुतबा ख़ूब बढ़ गया, उनके झंडे के नीचे हज़ारहा तुर्क जवान इटली से लड़ने-मरने को आमादा हो गए।

कमाल बराबर इनवर के संपर्क में रहता और उन्हें स्थिति की सूचना देता रहता था।

पर इन दोनो में पटती नहीं थी। दोनो स्वभाव के कड़ुए थे, झगड़ालू थे, वीर थे, निर्भय थे, और अपने-अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाना चाहते थे।

इनवर बड़े-बड़े सिद्धांतों को लेकर चलते, और उन्हीं के मनन में गर्क़ हो जाते। कमाल प्रत्येक बात की तह तक पहुँचे बिना और आख़ीरी नतीजा सोचे बग़ैर एक क़दम भी आगे नहीं बढ़ाता था।

कोई एक साल तक युद्ध होता रहा। टर्की-सेना की बहादुरी और जमकर लड़ने की शक्ति के आगे इटलीवालों का मक़सद न पूरा हो सका।

एकाएक सन् १९१२ के ऑक्टोबर-महीने में मांटीनिग्रो ने टर्की से युद्ध छेड़ दिया। बाल्कन-प्रदेश की सारी ईसाई-शक्तियों ने मिलकर टर्की पर सम्मिलित हमला बोल दिया। टर्की-सरकार ने घबराकर जल्दी में इटली से संधि कर ली। क़ुस्तुंतुनिया से आदेश आया कि सारी फ़ौजें जल्दी-से-जल्दी देश में पहुँचें।

देश पर आपत्ति आई थी। दुश्मन दरवाज़े पर खड़ा था—टर्की की हस्ती खतरे में थी।

संधि हो जाने पर मुस्तफ़ा कमाल ने फ़ौज की बागडोर दूसरों के हाथ में दे दी, और स्वयं टर्की का रास्ता लिया। जितनी जल्दी वह टर्की में पहुँच सके, उतना ही अच्छा। रास्ते में उसे कई जगह रुकना पड़ा, अतएव कोई दो महीने बाद वह क़ुस्तुंतुनिया पहुँच सका।

सारा बंदोबस्त अस्त-व्यस्त था। पराजय का टीका टर्की के भाल पर प्रत्यक्ष दिखलाई देता था। टर्की-फ़ौजें सभी रणक्षेत्रों में बरबाद हुई थीं। सरवियावाले उत्तर से बिना रोक-थाम के आगे बढ़ आए थे। दक्षिण से ग्रीकों के हमले ग़ज़ब ढा रहे थे, और सोलंकिया तक पर क़ब्ज़ा जमा बैठे थे। २५ हज़ार तुर्क उनकी क़ैद में थे। बलगेरिया की फ़ौजें सीधे क़ुस्तुं-तुनिया पर हमला बोल रही थीं, और चल्दजा के मैदान में, जो राजधानी से केवल १२ मील की दूरी पर था, पड़ाव डाले पड़ी थीं। योरपीय टर्की का सारा हिस्सा, सिवा एड्राइनोपिल तथा राजधानी के, इर्द-गिर्द के दुश्मनों के हाथ में पड़ चुका था—योरप महाखंड से शीघ्र ही टर्की का अंत होनेवाला था।

उस दुर्दशा के ज़माने में केवल एक ही आशा-जनक स्थल

था। रऊफ़ बे, जो एक नौजवान जल-सेना का अफ़सर था, हमीदिया क्रूज़र (पनडुब्बी) को लिए दुश्मनों को तंग करता फिरता था। उसने शत्रुओं के कई जहाज़ डुबा दिए थे। रऊफ़ आस-पास के समुद्रों से भली भाँति परिचित था, अतएव अकेला होते हुए भी उसने हमीदिया द्वारा दुश्मनों को बहुत नुक़सान पहुँचाया था।

क़ुस्तुंतुनिया में घायलों की संख्या बहुत ज़्यादा थी। अस्पताल, गिरजे, मस्जिदें, मकान और स्कूल उनसे भरे पड़े थे। खाद्य पदार्थों की कमी पड़ रही थी। कालरा और टाइफ़ायड से हज़ारों नित्य मर रहे थे, भूख और सर्दी से भी सैकड़ों नागरिक काल के कवल हो रहे थे, पर राजनीतिज्ञ—नेता लोग—अब भी आपस में लड़ रहे थे, अपना-अपना प्रभुत्व जमाने के लिये सभी आतुर थे। कोई मज़बूत सरकार न रह गई थी, जिसके अनुशासन को लोग मानते।

* * *

मुस्तफ़ा कमाल ने अपने कुटुंब की ख़ैर-ख़बर के लिये बहुत कोशिश की। सोलंकिया दुश्मनों के हाथ में पहुँच गया था, जहाँ उसकी मा और बहन रहती थी। सोलंकिया से जो लोग भाग सके थे, वे भाग आए थे, बाक़ी ग्रीक-सेना की तलवार की धार उतार दिए गए थे। कमाल इस समाचार से बड़ा दुःखी था। वह उन सब कैंपों को देखता फिरता था, जिनमें निर्वासित व्यक्ति ठहरे हुए थे। आख़िर उसकी बूढ़ी मा और

बहन मक़बूला एक फटे-चिथड़े तंबू में ठहरी हुई मिलीं, जो कई दिनों की थकी हुई और भूखी-प्यासी थीं।

कमाल को देखकर दोनो बहुत प्रसन्न हुईं, और बहुत रोईं। उन्होंने अपनी जो दुर्दशा बयान की, उसे सुनकर कमाल की छाती हिल गई। तुरंत ही उसने शहर में एक कमरा लिया, और दोनो को उसमें ले जाकर रक्खा। मा ज़ुबेदा ६० से ऊपर थी। उम्र और तकलीफ़ के तक़ाज़ों से वह पस्त और कमज़ोर पड़ गई थी। उसकी दृष्टि भी धुँधली हो गई थी। सोलंकिया से भागने की दौड़-धूप तथा भूख और सरदी के कारण वह ८० वर्ष की बूढ़ी मालूम पड़ती थी। कई दिनों तक कमाल लगातार मा की सेवा-सुश्रूषा में लगा रहा, और जब वह स्वस्थ होने लगी, और ख़ुदा से दुश्मनों के नाश की मज़े में दुआ माँगने लगी, तब कमाल ने उनका पूरा इंतज़ाम कर अपने आगमन की सूचना वार-ऑफ़िस को दे दी।

युद्ध-विभाग को कमाल की सख़्त ज़रूरत थी। बलगेरिया-वाले क़ुस्तुंतुनिया पर दाँत गड़ाए, भेड़ियों के झुंडों-जैसे आगे बढ़े आ रहे थे। गैलीपोली में टर्की-सेना उनसे मोर्चा ले रही थी। यदि वहाँ शिकस्त हो गई, तो दर्रे दानियाल पर दुश्मनों की फ़ौज क़ब्ज़ा कर लेगी, और क़ुस्तुंतुनिया तक आने की राह साफ़ हो जायगी। अतएव कमाल की तत्काल वहाँ नियुक्ति बोल दी गई। वह बुलेयर के फ़ौजी मोर्चे का अध्यक्ष बनाकर भेज दिया गया। इसी मोर्चे की जीत और हार से

टर्की की क़िस्मत का फ़ैसला हो जायगा। कमाल वहाँ पहुँच ही पाया था कि जनरल सावा सोफ़ की प्रधानता में दुश्मनों ने हमला बोल दिया।

टर्कों ने हमले को बरदाश्त कर ग्रीक-फ़ौज को आगे बढ़ने से रोका। लड़ाई बड़ी भयानक हुई, पर शत्रुओं का क़दम आगे न बढ़ सका। आख़िर जब टर्की और शत्रु-राष्ट्रों में समझौता हो गया, तब युद्ध रुका।

उसके बाद बड़ी-बड़ी शत्रु-शक्तियों ने मिलकर एक संधि-कान्फ्रेंस की बैठक की। बाल्कन, पैननसुला की रियासतें कहती थीं कि कुस्तुंतुनिया को छोड़कर टर्की का सारा योरपीय हिस्सा हमको मिलना चाहिए। बलगेरियावाले कहते थे कि एड्रिया इनोपिल पर हमारा क़ब्ज़ा होना चाहिए। सभी टर्की के बटवारे के लिये जी-जान से लगे थे।

टर्की में दो विचारों के दल थे—एक तो बूढ़े प्रधान मंत्री कामिलपाशा अपने साथियों-सहित चाहे भी जिस शर्त पर संधि कर लेने के पक्ष में थे, दूसरे, सेना के युवक अफ़सर और देश-भक्त इस बेइज़्ज़ती और तबाही के समझौते के सर्वथा ख़िलाफ़ थे। राजनीतिक दल एक दूसरे के दुश्मन हो रहे थे। एक ओर देश की गर्दन पर छुरी चल रही थी, और दूसरी ओर वे अपने-अपने स्वार्थ-साधन और चील-चुथौवल में पड़े थे।

इस अराजकता और दुरवस्था के बीच में इनवरपाशा त्रिपोली से लौटे। उन्होंने बिना एक क्षण खोए कमेटी (Union

& Progress Committe) की मीटिंग की, सारे अफ़सरों को इकट्ठा किया, और फ़ौज के देश-भक्तों को साथ में ले कामिल-पाशा के मंत्रिमंडल पर हमला बोल दिया। उस समय उनकी अंतरंग सभा की मीटिंग हो रही थी। इनवर ने देश के जय-चंद युद्ध-सचिव नाज़िमपाशा को फ़ौरन् ही गोली मार दी। कामिलपाशा और उनके साथी ऐसे भागे कि उनका पता ही न चला। तलातपाशा, जमाल और शौक़तपाशा के साथ इनवर ने राजतंत्र को अपने हाथों में ले लिया।

इनवर ने फिर तो बड़ी दृढ़ता से काम लिया। उन्होंने शासन के कार्य में कोई कमज़ोरी न दिखलाई। जिन विपक्षियों ने उनके मार्ग में रोड़े अटकाए, उन्हें उन्होंने फाँसी लगवा दी। जहाँ विद्रोह हुए, वहाँ उन्होंने सख़्ती से दमन किया। संधि-कान्फ़्रेंस की शर्तों को उन्होंने देश की रक्षा के नाम पर रद्दी की टोकरी में फेक दिया।

लेकिन एड्रियाइनोपिल को बचाना ज़रूरी था। सौभाग्य-वश इसी समय बाल्कन-प्रदेश के राज्यों में परस्पर तना-तनी हो गई। सरविया और ग्रीस ने मिलकर बलगेरिया को पीटा। बलगेरियावाले जब हारे और भागे, तब टर्कीवाले भी शेर हो गए। इनवर ने कमाल की अध्यक्षता में चुनी हुई फ़ौज भेजी, जिसकी मार के आगे थके हुए, जी टूटे हुए बलगेरियन सिपाही न ठहर सके। इनवरपाशा प्रधान सेनापति और युद्ध-सचिव की हैसियत से इस चढ़ाई में साथ-साथ थे। इसमें

कोई शक नहीं कि इनवर बड़े भारी राजनीतिज्ञ और दूरदर्शी नेता थे। जब वह युद्ध-क्षेत्र से लौटे, राजधानी की सड़कें और फाटक उनके स्वागत के लिये खूब सजाए गए, और जनता ने 'एड्रियाइनोपिल का विजयी वीर' के नारे लगाकर इनवर के प्रति अपनी श्रद्धा के हार्दिक उद्‌गार प्रकट किए।

यद्यपि विजय का बहुत कुछ श्रेय कमालपाशा को था, पर उसे बाहर कौन जानता था। वह तुर्की सेना का सिर्फ़ लेफ़्टिनेंट कर्नल ही तो था।

कमालपाशा कुस्तुंतुनिया में अपनी मा और बहन के साथ रहने लगा। उसका-जैसा कार्यशील व्यक्ति अकमण्य बनकर विना काम कैसे बैठ सकता था।

राजनीतिक प्रभुता पाने की कमाल को सदा से ही लौ लगी हुई थी। वह फिर अपने विचारों को कार्य-रूप में परिणत करने के लिये राजनीतिज्ञों से मिलने-जुलने लगा। पर समय बदला हुआ था, टर्की में इनवर का नाम पुज रहा था। मुहम्मद शौक़त को किसी ने क़त्ल कर डाला था। तलात, इनवर और जमाल का तिगड्डम मज़बूती से शासन की बागडोर अपने हाथों में थामे हुए था, अतएव कमाल के प्रस्तावों का अनुमोदन किसी ने न किया।

इनवर टर्की की फ़ौज को पाश्चात्य ढंग से संगठित करना चाहते थे। इसके लिये उन्होंने जर्मन जनरल लाइमन वॉन सांडर्स को बुलाया—यह सेनापति बड़ा अनुभवी और प्रसिद्ध सेनानी था।

कमालपाशा इस खबर को सुनकर बहुत बिगड़ा। पर बेचारे का क्रोध उस नपुंसक की गुस्सा के समान था, जो कुछ कर नहीं सकता। उसने इनवर की इस करतूत के विरुद्ध प्रोपेगैंडा करना शुरू किया।

"टर्की-फ़ौज की अफ़सरी के लिये जर्मनों को बुलाना बड़ी भारी हिमाक़त है। हम टर्कों को अपना इंतज़ाम स्वयं ही करना चाहिए। विदेशी की मातहती में टर्की की वीरवाहिनी को रखना राष्ट्र का अपमान करना है।"

पर नक्कारखाने में तूती की आवाज़ कौन सुनता है। इनवर वग़ैरह ने जब देखा कि कमाल पाजीपन पर उतारू है, तो उन्होंने उसे सोफ़िया जाने का हुक्म दिया, जहाँ उसका दोस्त फ़तेह बे मिनस्टर था।

* * *

मुस्तफ़ा फ़ौजी हुक्म के अनुसार तुरंत ही सोफ़िया चला गया। उसकी क़ाबिलियत में तो कोई संदेह था ही नहीं; वहाँ भी उसने अपने काम को बड़ी ख़ूबी से निबटाया। वह सोफ़िया में टर्की के मंत्री का फ़ौजी सलाहकार था।

यों ही कुछ दिन बीते। सोफ़िया में भी उसने अपने विचार न बदले। सैनिकों और अफ़सरों के बीच कमाल बहुत प्रिय हो गया।

इसी समय योरपीय महायुद्ध का घननाद उठा। सरबिया की सीमा के पार आरच ड्यूक मार डाला गया था। सभी महान् शक्तियों ने एक दूसरे के प्रति हथियार उठा लिया। टर्की ने जर्मनी का साथ दिया।

कमाल सोफ़िया में पड़े-पड़े ऊब रहा था। उसका विश्वास था कि टर्की को युद्ध में हरगिज़ नहीं पड़ना चाहिए। उसका

विचार यह था कि जब कुछ दिनों तक युद्ध हो चुके, तब जीतती हुई पार्टी का, टर्की का, साथ देकर अपना स्वार्थ-साधन करे।

लेकिन टर्की के कर्णधारों का मत इसके प्रतिकूल था। कमाल का ख़याल था कि चंद हफ़्तों में लड़ाई का फ़ैसला हो जायगा; पर जब महीने से भी ज़्यादा हो गया, तब युद्ध-क्षेत्र पर जाने के लिये उसका जी उतावला होने लगा। उसने इनवर को तार दिया कि मुझे फ़ौज की कमांड देकर रण-क्षेत्र पर भेजो, पर वहाँ से नम्रता-पूर्वक नाहीं का जवाब आ गया। उसने फिर तार किया, जिसका कोई उत्तर ही न आया। इस तरह महीनों बीत गए। आख़िर जब वह इस्तीफ़ा देकर लड़ती हुई फ़ौज में, साधारण सिपाही की हैसियत से, भरती होने जा रहा था, तब उसे तत्काल क़ुस्तुंतुनिया लौटने का आर्डर मिला।

इनवर इस समय टर्की से बाहर थे। वह फ़ौज के साथ रूसियों से लड़ने के लिये काकेशिया गए हुए थे। हाकीपाशा इस समय युद्ध-सचिव था। वह कमाल से परिचित था, और उसके संबंध में बड़े ऊँचे विचार रखता था। अतएव मौक़ा पाते ही उसने कमाल को तार से बुला भेजा, और जनरल वॉन सांडर्स से उसकी बड़ी प्रशंसा कर उसे किसी मोर्चे का सेना-पतित्व देने के लिये कह दिया। वॉन सांडर्स ने कमाल को दक्षिण गैलीपोली के मोर्चे की आधी कमांड देकर तत्काल युद्ध-क्षेत्र पर भेज दिया।

टर्किश अफ़सरों के प्रति वॉन सांडर्स की धारणा अच्छी नहीं थी, पर कमालपाशा के विषय में उन्होंने शीघ्र ही अपनी राय बदली। कमाल की तेज़ी और कर्तव्य-परायणता देखकर उस बहादुर जनरल को बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने कमाल के विषय में कहा—

"A splendid officer......a leader said Von Saunders about Kamal, and trusted him." वह तो निहायत लायक़ अफ़सर है, सच्चा लीडर है। कमाल सर्वथा मेरा विश्वास-पात्र है।

और कमाल—वही कमाल—जो विदेशियों से घृणा करता था, और सांडर्स की नियुक्ति के ख़िलाफ़ था, अपने इस बड़े अफ़सर की योग्यता देखकर दंग रह गया। उसने मान लिया कि वॉन सांडर्स का सैनिक ज्ञान महान् था, अतएव उसने अपने को इस जर्मन अफ़सर के चार्ज में सर्वथा सौंप दिया।

"Liman Von Saunders" he said in an unusually generous moment, for he rarely spoke well of anyone "Is all that a superior officer ought to be." We disagree often, but once he has given his orders, he leaves me free to carry them out as I think fit." अर्थात् वॉन सांडर्स सर्वथा उस उच्च पद के लायक़ है, जिस पर वह प्रतिष्ठित है। कमाल बहुधा किसी की तारीफ़ नहीं करता था, पर वॉन सांडर्स के बारे में उसके विचार इतने ऊँचे हो गए थे कि वह जनरल की प्रशंसा किए विना न रह सका। सचमुच जनरल वॉन सांडर्स सर्वथा प्रशंसा के योग्य था।

* * *

कैरो और एथेंस से समाचार-पर-समाचार आ रहे थे कि अँगरेज़ हमला करनेवाले हैं। अस्सी हज़ार सेना इजिप्ट में तैयार खड़ी थी, ब्रिटिश जहाज़ी बेड़ा भी बंदरगाह में लैस था।

वॉन सांडर्स टर्की फ़ौज का सबसे बड़ा अफ़सर था। उसके लिये बड़ी कठिनाई आ पड़ी थी कि क्या करे। गैलीपोली पैनन-

सुला बावन मील लंबी थी। इस बावन मील के समुद्री किनारे पर कहीं भी ब्रिटिश सेना आकर उतर सकती और किसी एक ऊँचे पहाड़ी टीले को तोप के गोले से उड़ाकर, रास्ता साफ़ कर सीधे क़ुस्तुंतुनिया पर धावा बोल सकती थी।

उसके पास साठ हज़ार तुर्क जवान थे, जो जान दे देने को तैयार थे। उसने उन्हें पैननसुला के तीन मुख्य स्थलों पर बीस-बीस हज़ार की टुकड़ी में बाँट दिया। इंतज़ार करना पड़ेगा कि कब और कहाँ से हमला होता है। जहाँ भी दुश्मनों का धावा होगा, वहाँ उसके मुक़ाबले में चौथाई टर्की-सेना मोर्चा लेगी। क्योंकि सारी कुमक तो दो या तीन दिन बाद वहाँ पहुँच सकेगी। दर असल बड़ी जटिल समस्या थी।

इनवर रूस से वापस आ चुके थे। उन्होंने आते ही कमाल की मुख़ालिफ़त की, और मोर्चे के प्रधान सेनापतित्व से हटा देने का हुक्म दिया। वह प्रधान युद्ध-सचिव थे, अतएव वॉन सांडर्स के लिये उनकी आज्ञा मानना अनिवार्य था। पर उन्होंने खुले शब्दों में इस कार्य पर दुःख प्रकट किया, और २० हज़ार की रिज़र्व फ़ौज का प्रधान बनाकर कमाल से मैदोस में रुकने और स्थिति के अनुसार काम करने को कह दिया।

इनवर की इस काली करतूत से कमाल बहुत चिढ़ा, पर उसे संतोष था कि उसका प्रधान अफ़सर उस पर विश्वास और भरोसा रखता है। उसने अपनी सारी सेना का निरीक्षण किया, एक-एक बात का अनुशीलन किया, और प्रत्येक सैनिक में उत्साह

और देश-प्रेम की आग को भड़का, सैनिक प्रदेश की चप्पा-चप्पा ज़मीन का हिसाब समझ, हमले के नक़्शे बना, डटकर लड़ने-मरने के लिये पूरी तरह तैयार हो गया। टर्की के भविष्य का बहुत कुछ निपटारा इसी लड़ाई में होगा।

* * *

२५ एप्रिल को इतवार था। ख़बर आई कि अँगरेज़ों ने चढ़ाई शुरू कर दी। समुद्र के ऊपर कोहासा छाया हुआ था, उसी की छाया में विशाल जहाज़ों की पंक्तियाँ लहरों को चीरती हुई ड्रेडनाटु डेस्ट्रायर और क्रूज़रों के साथ बढ़ी चली आ रही थीं। उनके एक छोटे-से भाग ने टर्की का ध्यान आकर्षित करने के लिये बुलेयर के उत्तरीय भाग में आक्रमण किया। सांडर्स धोका खा गया। उसने उसी को मेन अटैक (मुख्य हमला) माना। एक भाग ने दक्षिण पर भी गोलाबारी कर दी, ध्यान बँट गया, पर उनका मुख्य हमला पैननसुला के सेंटर में, बीचोबीच मध्य भाग में, होने जा रहा था।

सेंटर में ६० हज़ार से ज़्यादा सेना उतरी। ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ सामने थीं, जिनको पार करने के लिये सेना चढ़ने लगी।

मुस्तफ़ा को इसका कुछ पता न था, क्योंकि सारी कार्यवाही अत्यंत गुप्त रीति से कुहासे के आवरण में की गई थी। उसने सुबह ५-३० मिनट पर अपनी सबसे वीर फ़ौज नं० ५७ को हुक्म दिया कि परेड करे, और चोनक बेयर में चाँदमारी करे। इसी समय पहाड़ों की आगे रहनेवाली रखवाल सेना के सिपाही

दौड़ते हुए आए और जब वे चोटी पर चढ़ रहे थे, कमाल ने चिल्लाकर पूछा—"माजरा क्या है ?"

अँगरेज़-फ़ौज मुल्क में उतर आई है। हम लोग समुद्र के किनारे पहाड़ियों पर बैठे देख-रेख कर रहे थे, आपको ख़बर देने के लिये आए हैं। हममें से बहुत हताहत भी हो चुके हैं।

"वे कहाँ उतरे हैं, उनके जहाज़ किस बंदर पर लगे हैं ?"

"ऐरी बरनू पर।"

"एकदम बंदूकें सीधी करो और घूम पड़ो।"—कमाल ने परेड करती हुई फ़ौज को हुक्म दिया। कुछ ही क्षण के बाद नवें डिवीज़न से भी यही ख़बर आई, उन्होंने बाएँ किनारे पर इमदाद माँगी थी।

मुस्तफ़ा कमाल ने बहुत सोचा-विचारा। वह यह तो जानता था कि वॉन सांडर्स का ख़याल है कि बुलेयर के नज़दीक़ उत्तरी भाग पर हमला होगा, लेकिन बिल्कुल उसके प्रतिकूल होने जा रहा था। चोनक बेयर का दर्रा यदि दुश्मनों के हाथ में चला गया, तो ग़ज़ब हो जायगा। चोनक बेयर को फ़ौरन् बचाना चाहिए, उसने एक लमेह में निश्चय कर लिया। अन्यथा क़ुस्तुंतुनिया और तमाम टर्की पर दुश्मनों का ज़रूर क़ब्ज़ा हो जायगा। पर वॉन सांडर्स से इतने जल्दी ऑर्डर नहीं मिल सकता था—नहीं आ सकता था। उसने जो कुछ किया, ख़ुद ही अपनी ज़िम्मेदारी पर किया। अगर पाँसा ठीक पड़ा, तब तो कुछ नहीं; अन्यथा कमाल का सारा भविष्य अंधकारमय हो

जायगा। जो कुछ भी हो, देश को बचाने के लिये इतना ख़तरा तो रहेगा ही, यह सोचकर कमाल ने अपने विचारानुसार काम करने का निश्चय कर लिया।

"कारतूसें ख़ाली हैं या भरी हुई?" उसने मातहत अफ़सर से पूछा।

"भरी हुई हैं जनाब।" एक मेजर ने, जो पास ही खड़ा था, तेजस्विता से जवाब दिया।

"तब बढ़े चलो मेरे शेरो, और जितनी जल्दी हो सके, बढ़कर चोनक बेयर पर क़ब्ज़ा कर लो।"

उसके पास एक छोटा-सा नक़्शा था, एक कंपास था, उसी के सहारे कोई दो सौ घुड़सवारों को लिए कमाल सबसे आगे चल पड़ा। उसकी रफ़्तार इतनी तेज़ थी कि चोनक पहुँचते-पहुँचते कोई बीस सवार ही साथ रह गए। पहाड़ी की चोटी से खड़े होकर उसने देखा कि नीचे टीड़ी-दल की तरह दुश्मनों के झुंड-के-झुंड ऊपर चढ़ रहे थे।

ज्योंही पहली टुकड़ी उसके समीप पहुँची, उसने हुक्म दिया कि दुश्मनों पर गोली दाग़ दी जाय। ज्योंही दूसरी टुकड़ी पहुँची, उसने आक्रमण का हुक्म दे दिया। ज्यों-ज्यों जितनी भी सेना पहुँचती गई, उसने घोर युद्ध का हुक्म अपनी ज़िम्मेदारी पर दे दिया। एक सिपाही भी रिज़र्व में न रहा। उसे विश्वास हो गया था कि यही मुख्य आक्रमण (Main attack) है। यदि इसमें कुछ भूल हुई, और वॉन सांडर्स की

रिज़र्व फ़ौज के लिये माँग आई, तो गज़ब हो जायगा। कमाल मुँह दिखाने क़ाबिल न रहेगा। पर उसने गलती नहीं की थी, उसकी सूझ एकदम ठीक थी।

नीचे से चढ़नेवाली दुश्मन-फ़ौज के लिये ऊपर ऊँचे टीले पर डटी हुई टर्की-फ़ौज ने मुसीबत ढा दी। शत्रु-सेना कोई ⅔ हिस्सा ऊपर चढ़ आई थी या ठीक पहाड़ी पगडंडों के बीचो-बीच में थी। वह फिर एक क़दम भी आगे न बढ़ सकी। पर टर्की की सैन्य-संख्या दुश्मनों के मुक़ाबिले बहुत कम थी। जब तक नई कुमक न आवे, तब तक दुश्मन को रोक रखना हर तरह से ज़रूरी था, चाहे एक-एक तुर्क बच्चा मर जाता। रात होती, फ़ौजें कुछ सोतीं, कुछ आराम करतीं, पर मुस्तफ़ा को एक मिनट के लिये भी दम लेने की क़सम थी। उसने हमले-पर-हमले किए, कभी शत्रु-सेना को पीछे ढकेला, कभी स्वयं तोपों की बौछार से बचने के लिये पहाड़ियों की छाया में हो गया। कमाल एकदम मतवाला हो रहा था। उसे परवाह नहीं थी कि जिए या मरे। एक ही धुन थी कि कैसे चोनक बेयर की रक्षा करे। चोनक बेयर जाने के माने थे, दर्रे-दानियाल के जाने के और दर्रे-दानियाल के शत्रुओं के क़ब्ज़े में होने के अर्थ थे, क़ुस्तुंतुनिया चले जाने के। अगर दर्रे-दानियाल और क़ुस्तुंतुनिया हाथ से जाते रहे, तो टर्की का अंग-भंग हो जायगा, जर्मनी से संबंध-विच्छेद हो जायगा, और मजबूरन् दुश्मनों की मर्ज़ी के मुताबिक़ सुलहनामा सही करना पड़ेगा। ग्रीस,

रुमानिया और बल्गेरिया, जो अभी तक तटस्थ थे, टर्की की दुर्दशा देख अँगरेज़ों के साथ हो जायँगे। इसका प्रभाव (Moral effect) संसार पर बहुत बुरा पड़ेगा। रूस के लिये रास्ता साफ़ हो जायगा, और वह हथियार तथा खाद्य पदार्थ बाहुल्यता से प्राप्त कर सकेगा। ऐसा मालूम होता था कि अब की बार टर्की का अंतिम संस्कार किया जायगा।

ऐसी-ऐसी एक-से-एक भयावही संभावनाओं और दुश्मनों के भयानक हमलों के बीच मुस्तफ़ा कमाल कर मिट या मर मिट की लगन लिए डटा था। या तो यहीं से उसका और उसके प्यारे वतन का पाँसा पलट जायगा, या वह यहीं अपनी सारी शक्ति, सेना और शरीर की क़ुरबानी चढ़ा देगा। देखनेवाले प्रत्यक्ष-दर्शियों ने लिखा है कि उन दिनों कमाल का उत्साह, लगन, देश-भक्ति और योग्यता का पारा बहुत ऊँची डिगरियों पर था, जिससे आला से लेकर अदना सैनिक तक को बड़ा साहस और जोश का ख़मीर मिलता जाता था।

एक दूसरे को अपनी-अपनी पोज़ीशनों से हटाना नामुमकिन था। एक ओर अँगरेज़ों की आस्ट्रेलियन सेना खाइयाँ खोदे आगे बढ़ने को तैयार थी, और दूसरी ओर कमाल और उसकी वीरवाहिनी प्राणों पर खेलकर रोड़ा अटकाए थी।

खाइयाँ खोदी गईं, वीरों की पंक्तियाँ लगाई गईं। कटीले तारों की बाउंड्री बाँधी गई, व्यूह-रचना की गई। जगह-जगह तोपें लगा दी गईं। चौकसी के लिये संतरी नियुक्त किए गए, और इस तरह युद्ध के अंत होने की तिथि बहुत लंबी हो गई। टर्की से नई कुमक आ पहुँची थी।

कमाल तो सितम ढा रहा था। सेना का एक-एक सिपाही उस पर क़ुरबान था। जहाँ सबसे ज़्यादा ख़तरा होता, वहीं कमाल जाकर खड़ा हो जाता। और ख़ुद ही तोप के पहिए को आगे खींचने लगता। सारे हमलों में उसका क़दम सबसे आगे रहता। एक बार बड़ी भीषण गोलाबारी हो रही थी, उस दिन शत्रुओं ने कमाल को उड़ा देने की बंदिश बाँधी थी। टर्क मुख़बिरों ने यह ख़बर लाकर दी। सैनिकों ने कमाल से हट जाने की बार-बार प्रार्थना की।

उसने कहा—"नहीं, मैं ऐसा हरगिज़ नहीं कर सकता।

ऐसी बुज़दिली का काम मुझसे नहीं होगा। मैं इसी बरसती आग के बीच या तो अपने वीरों के साथ जिऊँगा, या उन्हीं के साथ मर मिटूँगा, पर मैं एक क़दम भी पीछे नहीं हटूँगा।"

उसने उसी भयंकर गोलाबारी के बीच सिगार जलाया और नज़दीक की एक तोप में जाकर फ़लीता देने लगा। इतने में एक गोला उसके पैरों के पास आकर फटा, पर क्या मजाल कि कमाल के चेहरे पर एक सिकुड़न भी पड़ी हो। वह बड़ी ख़ामोशी से सिगरेट का धुँआ उड़ाता हुआ उधर ही चला गया, जिधर उसे जाना था।

उसे यक़ीन था, अटल विश्वास था कि गोला तो क्या, गोली का एक छर्रा भी उसे नहीं लग सकता। वह बिल्कुल अभय, एकदम निर्भय हो गया था।

जून के महीने में उसे एक स्थल पर दुश्मन की कमज़ोरी दिखाई पड़ी। उसका ख़याल हुआ कि वह नई फ़ौज के साथ एकाएक टूट पड़े, तो प्रतिपक्षी भाग खड़े हों। २८वीं जून को उसने धावा बोलने का निश्चय किया। सारी तैयारियाँ हो गई थीं, सिर्फ़ उस तारीख़ का इंतज़ार था।

ता० २६ को एकाएक इनवर आ धमका। वह इस समय युद्ध-सचिव और वाइस-कमांडर-इन-चीफ़ था। ज्यों ही उसने धावे की बात सुनी, उसने मना कर दिया। कमाल ने ग़ुस्से में आकर इस्तीफ़ा दे दिया। जब कमांडर-इन-चीफ़ वॉन सांडर्स ने बहुत समझाया-बुझाया, तब कहीं वह माना। इनवर ने

अपनी बात वापस ले ली, पर वह तारीख़ टल चुकी थी। धावे की ख़बर दुश्मनों के कानों तक पहुँच गई थी। अतएव वह स्कीम नाकामयाब रही। इसकी सारी ज़िम्मेदारी इनवर ने कमाल के मत्थे सार्वजनिक रूप से मढ़नी आरंभ की।

कमाल-जैसे तेजस्वी व्यक्ति के लिये यह बात असहनीय थी। उसने सारी परिस्थिति का उल्लेख करते हुए एक विज्ञप्ति प्रकाशित कर दी, और फ़ेल होने की ज़िम्मेदारी इनवर पाशा के गले डाली। इससे दोनो में और भी मन-मुटाव हो गया। कमाल ने फिर इस्तीफ़ा दिया, वॉन सांडर्स ने बहुत कह-सुन-कर उसे वापस लेने को फिर मजबूर किया। सांडर्स ने विख्यात सेना-नायक क़ाज़िम कारा बेकर पाशा से कमाल को समझाने को कहा। टेलीफ़ोन से क़ाज़िम ने पूछा—"कहो कमाल, कैसी तबि-यत है?"

कमाल ने जवाब दिया—"शरीर तो अच्छा है, पर दिमाग़ नहीं सही है।"

"आख़िर बात क्या है? कहो न, मुझसे कहने में क्या हर्ज है?"

"अजी, बात-वात कुछ नहीं है। स्थिति बड़ी कठिन है। उसको बचाने की एक ही तरकीब है।"

"और वह क्या है?"

"सारी फ़ौजों को मेरे अधीनस्थ कर दो, परिस्थिति अब भी सुधर सकती है।"

"बस क्या इतनी-सी बात है। लेकिन क्या इतनी बड़ी फ़ौज तुम्हारे लिये अधिक नहीं है?"

"बहुत ही थोड़ी है"—कमाल ने जवाब देकर टेलीफ़ोन के चोगे को रख दिया। इनवर राज-काज से कुस्तुंतुनिया चला गया था, कमाल ने अपना इस्तीफ़ा वापस ले लिया, और पूर्व के अनुसार अपना काम-काज करने लगा!

जुलाई के अंत में यह निश्चय हो गया कि अँगरेज़ एक दूसरा भयंकर आक्रमण करेंगे। इजिप्ट और ग्रीक टापुओं से टर्की के एजेंटों ने यह खबर भेजी थी कि बहुत-सी नई सेना और नए फ़ौजी सामान इँगलैंड से आ-आकर इकट्ठा हो रहे हैं।

जहाँ तक हो सका, प्रायद्वीप की रक्षा के लिये नई कुमक टर्की-सरकार ने भेजी। लेकिन जैसा कि पहले आक्रमण में यह नहीं पता था कि ५२ मील के समुद्री किनारे के किस भाग से धावा होगा, वैसी ही परिस्थिति अब की बार फिर हुई। फ़ौजें इकट्ठा हो रही थीं, पर इस अनिश्चय के कारण न तो व्यूह-रचना हो सकती थी, और न क़िलेबंदी की जा सकती थी।

* * *

ता० ६ अगस्त की रात को आक्रमण का आरंभ हुआ। दुश्मनों की दृष्टि होजा चमन पहाड़ की चोटी पर थी। यह चोटी चोनक बेयर के उत्तर में थी, जहाँ से वह एक दर्रे के द्वारा चोनक से मिली हुई थी। मुस्तफ़ा कमाल की दाहनी ओर की खाइयों से भी, जहाँ से हमला रोका जा सकता था, यह स्थली दूर थी। अगर अँगरेज़ों ने इस चोटी पर क़ब्ज़ा जमा लिया, तो

वे वहीं से चोनक बेयर को उड़ा देंगे और क़ुस्तुंतुनिया तक पहुँचने की राह साफ़ कर देंगे।

इँगलिश फ़ौज ने इसके अलावा पच्चीस हज़ार सैनिक वहाँ से पाँच मील दूर, सुवला की खाड़ी में उतारे, जहाँ से यह बंदोबस्त था कि वे रास्ता साफ़ करते हुए होजा चमन के आक्रमण-कारियों से मिल जायँगे, और फिर सब फ़ौजें साथ मिलकर, आगे बढ़कर दर्रे-दानियाल और क़ुस्तुंतुनिया पर क़ब्ज़ा कर टर्की की गर्दन मरोड़ देंगे।

दसवीं तारीख़ एकदम अँधेरी रात थी। सोलह हज़ार शत्रु-सेना उस अंधकार के आवरण में अपने ख़ीमों से चींटी-दल की तरह निकली। वह अपने प्रोग्राम के अनुसार पौ फटते-न-फटते होजा चमन पहुँच जानेवाली थी।

पर टर्की-सेना के भी गुप्त दूत लगे हुए थे। उन्होंने इस आक्र-मण की सूचना तुरंत ही वॉन सांडर्स को दी। जनरल ने तुरंत ही कैननगियर की अध्यक्षता में नं० ९ के डिवीज़न को आगे बढ़कर शत्रुओं को रोकने का आदेश दे दिया।

खेतों और पहाड़ी पगडंडियों से चलकर कैननगियर अपनी टुकड़ी के साथ ठीक ४–३० बजे उस चोटी पर पहुँच गया, जिस पर दुश्मनों का दाँत था। सुबह की धुँधली रोशनी में उसने देखा कि शत्रु-सेना थकी हुई-सी, बड़ी कठिनाई से पहाड़ी पर चढ़ने की चेष्टा कर रही थी। कैननगियर के पास फ़ौज तो थोड़ी ही थी, पर गोला-बारूद काफ़ी थी। उसने हुक्म दिया कि

एकदम गोलियों की बौछार छूटे। अँगरेज़ों ने समझा कि शत्रु सिर पर आ गया और बड़ी संगठित सेना से सामना करना पड़ेगा। गोलियों की बौछार बड़ी तेज़ी से बहुत बड़ी तादद में हो रही थी। अतएव उनका दिल टूट गया। गर्मी इतनी थी कि चट्टानें तप रही थीं। टर्क-सेना ऊपर थी, दुश्मन नीचे थे। ऊपर से पत्थरों और गोलियों की वर्षा थमती ही न थी। अँगरेज़-फ़ौज ने वहाँ छावनी डाल दी, और मोर्चेबंदी की फ़िक्र करने लगी। दूसरे दिन तुर्क-सेना के पास भी नई कुमक आ गई थी। अब इस स्थान पर अँगरेज़ों को जल्दी से सफलता नहीं मिलनेवाली थी।

* * *

पर अभी सवला की खाड़ी में अँगरेज़-फ़ौज डटी थी। वह न-जाने किस दिन आगे बढ़े। उसका सामना करने के लिये यथेष्ठ टर्क-सेना नहीं थी।

ता० ९ अगस्त को वॉन सांडर्स ने मुस्तफ़ा को बुलवाया। जर्मन सेनापति अनाफारता के गाँव में ठहरा हुआ था। कमाल जब वहाँ पहुँचा, तो जनरल के गुस्से का पारावार न था। उसने सवला के मोर्चे के लिये क़ुस्तुंतुनिया से जो नई फ़ौज मँगाई थी, वह अभी तक न पहुँच पाई थी। उसने बार-बार टेलीफ़ोन और तार द्वारा जल्दी करने की आज्ञा दी थी, पर अभी तक कोई ख़बर नहीं आई। ऐसा मालूम होता था कि यदि अँगरेज़ों ने चंद घंटे के अंदर कहीं हमला बोल दिया, तो स्थिति बड़ी नाज़ुक हो जायगी।

"मैं चाहता हूँ कि होजा चमन के मोर्चे के साथ-ही-साथ तुम सवला के रण-क्षेत्र का भी चार्ज ले लो। मैं नई-पुरानी और आनेवाली सारी फ़ौजों का चार्ज तुम्हें देता हूँ—बोलो कमाल, अपनी सम्मति दो।"

मुस्तफ़ा कभी ज़िम्मेदारी लेने से डरता नहीं था, अपने जनरल को सलाम कर सारे बोझ को उठाने के लिये तैयार हो गया। ज़िम्मेदारी और कठिनाइयों के बीच ही कमाल अपने जलवे दिखलाता था।

दर-असल मुस्तफ़ा क़िस्मतवर भी था। कोई दो घंटे बाद ही ख़बर आई कि बुलेर से फ़ौजें आ रही हैं, और घंटे-भर के अंदर ही पहुँचनेवाली हैं।

रात तक सारी पहुँचनेवाली फ़ौजें नियत स्थान पर पहुँच गईं। कमाल ख़ुश हुआ और अपने ओजस्वी व्याख्यान द्वारा सैनिकों में देश-रक्षा का भाव भरता हुआ, घोड़े की पीठ से फ़ौजों का मुआयना करने लगा।

"देखो मेरे बच्चो, जितनी जल्दी तैयार हो सको, दुश्मन पर हमला कर दो, उसे आक्रमण करने का मौक़ा ही न दो।"

अँगरेज़ी फ़ौज ने आक्रमण तो पहले ही कर दिया होता, पर उनका कमांडर सर हैमिल्टन तब तक पहुँचा नहीं था। दो दिनों से उनके आगमन का इंतज़ार देखा जा रहा था, उनकी इस देरी से टर्कीवालों को मौक़ा मिला। सवला की फ़तेह में भी अँगरेज़ों को संदेह होने लगा।

होजा चमन से टेलीफ़ोन आया कि फ़ौज कमाल को चाहती है। आदमियों के दिल टूट रहे हैं, शत्रु आगे बढ़ रहे हैं। उनके आने ही से सैनिक उत्साहित हो सकते हैं।

उन्हें क्या मालूम था कि सवला का प्रधान सेनापतित्व भी मुस्तफ़ा के हाथों में दे दिया गया है।

"मेरे बच्चों से कह दो कि घबराएँ नहीं। जैसे भी हो सके, चौबीस घंटे और डटे रहें। मैं नई कुमक के साथ बहुत जल्द पहुँचूँगा, और तब सब ठीक हो जायगा।" उसकी आवाज़ में वह रस, वह ओज और वह उत्साह था कि सैनिकों का समूह अपने सेनापति की आज्ञा पाकर आख़िरी दम तक लड़ने-मरने को कटिबद्ध हो गया।

सवला में पूरा इंतज़ाम करके कोई छत्तीस घंटे के बाद कमाल अपनी सेना के बीच चोनक बेयर-पहुँचा। बिना एक क्षण दम लिए कमाल काम में जुट पड़ा। वॉन सांडर्स ने डेढ़ हज़ार नई फ़ौज और भेज दी थी। उन्होंने नक़्शा बनाया और निश्चय किया कि कल ही अँगरेज़ों को ढकेलकर समुद्र के किनारे पहुँचा देंगे।

कमाल के उत्साह ने सैनिकों में नई जान डाल दी। रात-भर तैयारियाँ होती रहीं। तीन बजे सुबह जब बिल्कुल अँधेरा ही था, कमाल ने फ़ौज को एक ओर से ऊपर से पत्थर ढकेलने और गोली चलाने का हुक्म दिया तथा दूसरी ओर से ७००० टर्की-सेना ले दुश्मनों के बीच में घुस गया। अँगरेज़ों ने भी गोले

चलाए। पर वे ऊँची पहाड़ी पर खड़े हुए तुर्कों का कुछ न बिगाड़ सके। कमाल के भी एक गोली लगी, जिससे उसकी घड़ी चूर-चूर हो गई। दो तरफ़ की भयंकर मार के आगे, उस सेना की प्रचंड मार के आगे जो देश की रक्षा के नाम पर कमाल-से सेनापति की अधीनता में जान की बाज़ी लगाकर लड़ रही थी, अँगरेज़-सेना न ठहर सकी और मोर्चा छोड़कर भागी। चोनक बेयर की चाभी पूरी तरह टर्की के हाथ में आ गई। अँगरेज़-फ़ौज समुद्र के किनारे खाइयाँ खोदकर पड़ गई।

एक-एक मिनट की क़ीमत थी। रिज़र्व सेना के १५०० सिपाहियों को साथ लेकर कमाल सवला के मोहाने पर पहुँच गया। तीन-चार दिन के आराम के बाद फ़ौजें लड़ने को तैयार खड़ी थीं। दो मरतबे अँगरेज़ों ने आक्रमण किया और दोनो मरतबे उन्हें पीछे हटना पड़ा। दोनो ही बार कमाल और उसकी १५०० रिज़र्व सेना ने मार्के का काम किया था।

आख़िर दिसंबर में झख मारकर अँगरेज़ों ने मोर्चा उठा लिया। बड़े दिन के पहले ही सारा मैदान साफ़ हो गया। मुस्तफ़ा कमाल अब पाशा बना दिया गया था। यह टर्की सेना में बड़े आदर और रुतबे का पद था।

मुस्तफ़ा कमालपाशा जब कुस्तुंतुनिया में दाख़िल हुआ, सारे शहर ने बड़े उत्साह से उसका स्वागत किया। वह अब एक चीज़ था, देश का प्राण था, दर्रे-दानियाल और राजधानी का बचानेवाला एवं टर्की का संरक्षक कहा जाता था। उसकी सैनिक योग्यता की धाक जम चुकी थी। अब वह राजनीतिक क्षेत्र के चूहों का मुँह न ताकेगा, प्रत्युत वे ही उससे परामर्श करके कार्य किया करेंगे। देश के शासन में उसका भी हाथ होगा।

उसने इनवर के विरुद्ध प्रचार करना शुरू किया, जर्मनों से उसे आंतरिक नफ़रत थी। इनवर और उसके जर्मन-सलाहकारों की देश में दिन-पर-दिन इज़्ज़त कम ही होती जाती थी। उसे (इनवर को) क़त्ल कर डाले जाने का सदैव खटका लगा रहता था।

इसी बीच में एक षड्यंत्र का भेद खुल गया। एक जैकब जमाल नामक व्यक्ति ने, जो इनवर का जानी दुश्मन था, इनवर की हत्या का प्रयत्न किया। वह कमाल पर बहुत श्रद्धा रखता था, और चाहता था कि देश की बागडोर कमालपाशा के हाथों में रहे। जैकब और उसके साथियों को इनवर ने फाँसी

लटकवा दिया, यह सोचकर कि कमाल ही सारे झगड़े की जड़ है। इनवर ने उसे काकेशस की टर्की सेनाओं का प्रधान सेनापति बनाकर, कुस्तुंतुनिया से बहुत दूर, दायर बेकर के हेड क्वार्टर भेजवा दिया। कमाल जितनी ही दूर रहेगा, इनवर उतना ही प्रसन्न और सुरक्षित रहेगा।

कुस्तुंतुनिया से अंगोरा तक ही रेल जाती थी। वहाँ से कमाल को घोड़ा, गाड़ी और मोटर पर ६०० किलोमीटर (मील) जमीन तय करनी पड़ी।

बड़ी दुःखदायी यात्रा थी। सड़क टूटी-फूटी अवस्था में थी। जल की बड़ी कठिनाई थी। सारे प्रांत में कंगाली और भुखमरी अपना अड्डा जमाए हुए थीं।

*　　　*　　　*

मुस्तफ़ा कमाल ने काकेशस पहुँचकर टर्की-सेना का जो हाल-चाल देखा, उससे उसे बड़ी निराशा हुई। इनवर गत वर्ष बड़ी-बड़ी स्कीमें बनाकर यहाँ आए थे, पर वह बर्फ़ गिरने का सीजन था। उस साल इतनी हिम-वर्षा हुई कि हजारों टर्क सिपाही ठिठुरकर मर गए। ये टर्की की सेना के सबसे अच्छे सिपाही थे।

तब से, जब से इनवर वहाँ से चले गए थे, किसी ने काकेशस-प्रदेश की सेनाओं की कोई ख़ैर-ख़बर न ली थी। रूसियों ने आगे बढ़कर अपनी रेल बना ली थी, सड़कें बनाई थीं, और वान, त्रितलिस, मुश तथा इरजुरम प्रभृति स्थानों पर अपनी अमलदारी कर ली थी। ग्रांड ड्यूक निकोलस,

रूस का ज़ार, जो रूसी सेना का कमांडर-इनचीफ़ था, स्वयं ही टर्की पर आक्रमण करने आया हुआ था।

मुस्तफ़ा ने तार किया कि फ़ौजें, गोला-बारूद, दवाइयाँ और बंदूक़ें फ़ौरन् भेजी जायँ, पर कोई जवाब न मिला। तब इनवर को गालियाँ देते और कोसते हुए उसने सेना का पुनः संगठन आरंभ किया। पर वह जानता था कि यदि रूस की सेना ने हमला कर दिया, तो तख़्ता तबाह हो जायगा। फिर भी कमालपाशा हार मानना तो जानता ही नहीं था। इस्मत और क़ाज़िम कारा बेकरपाशा-से अफ़सर उसके मातहत थे। उनकी सहायता से उसने सारी सेना का चोला ही बदल डाला।

इस्मत बहुत होशियार, तजुर्बेकार नाटा-सा मज़बूत आदमी था। बड़ा विकट सैनिक था। कुछ-कुछ बहरा था। ख़ामोशी से जुटकर काम करने का उसे अभ्यास था।

क़ाज़िम कारा बेकर एक लहीम-शहीम, अक़्ल का कुछ कुंद नायक था, पर वह भी बड़ा मेहनती, अपने सैनिकों का प्रिय और वीर पुरुष था।

दोनो ही ने आगे चलकर कमाल के साथ नवीन टर्की के निर्माण में बड़ा काम किया है। इसी समय से इन दोनो ने कमाल की क़ाबिलियत मानकर उसे अपना अफ़सर मान लिया।

इस समय भी क़िस्मत ने कमालपाशा का साथ दिया। मनुष्य का भाग्य-चक्र चाहे, तो उसे ऊँचा उठाकर सोने के

सिंहासन पर बैठा दे, और चाहे, तो नीचे गिराकर धूलि-कणों में मिला दे। पर कुछ भी हो, मनुष्य को कर्तव्यपरायण और कार्यशील अवश्य ही होना चाहिए। क्योंकि सफलता देवी उसी पुत्र के गले में जयमाल डाला करती हैं, जो 'कार्यं वा साधयामि, शरीरं वा पातयामि' की लगन से कार्य-क्षेत्र में अवतीर्ण होता है। इस समय भी यही हुआ। रूस से भयंकर क्रांति का समाचार आया। वहाँ बोल्शेविज़्म का प्रचार बढ़ रहा था। सेनाओं का संगठन टूट रहा था, लेनिन का दल-बल बढ़ रहा था। ग्रांड ड्यूक ने मास्को से ख़तरे की घंटी सुन रूस का रास्ता लिया, और वसंत-ऋतु का आक्रमण रोक दिया गया।

बाद में रूस से और भी भयंकर समाचार आते रहे। धीरे-धीरे फ़ौजें खिसकने लगीं, और जाकर बोल्शेविकों के दायरे में मिलने लगीं। सन् १९१७ के अंत तक सारी रूसी सेना अपने देश को वापस चली गई।

अब तो कमालपाशा के लिये राह एकदम साफ़ थी। वह धीरे-धीरे आगे बढ़ता गया, और बॉन, वितलिस तथा मुश प्रभृति स्थानों पर एक बार फिर कमाल ने टर्की का झंडा फहरा दिया।

* * *

वह प्रदेश खतरे से खाली था। रूसवालों को अपने घरेलू विग्रह के कारण इस ओर ताकने तक का अवकाश नहीं था।

पर सुना गया कि सीरिया होकर अँगरेज़ों का आक्रमण फिर से होनेवाला है।

क़ुस्तुंतुनिया से अरजेंट हुक्म आया कि फ़ौजें उस ओर को भेजी जायँ। कमालपाशा को सीरिया के मोर्चे का सेनापति बना दिया गया।

कमाल ने क़ाज़िम कारा बेकर को अपनी फ़ौज की बागडोर दे दी, और स्वयं क़ुस्तुंतुनिया के रास्ते सीरिया की ओर चल पड़ा, जहाँ उसकी ज़रूरत थी।

ख़तरे का दायरा मैसोपोटामिया और सीरिया में था। अँगरेज़ों ने हिंदोस्तान से काली फ़ौज मँगा ली थी, जो अँगरेज़ी सेना से कहीं वीर और कहीं जमकर लड़नेवाली थी। हिंदोस्तानी वीरों ने बग़दाद फ़तेह कर लिया, और मोसल पर चढ़ाई करने का मंसूबा बाँधा। हिंदोस्तानी वीरवाहिनी फ़लस्तीन और सीरिया पर भी क़ब्ज़ा करने के फ़िराक़ में थी। पर उनको रोकना होगा और बग़दाद को फिर से हासिल करना पड़ेगा।

इनवर के कहने से जर्मन हाई कमांडर ने वॉन फ़ाकेनहेंन को नई सेना के संगठन के लिये भेजा था। इनका हेड क्वार्टर अलप्पो में था। और भी कई जर्मन सेनापति आनेवाले थे। मुस्तफ़ा कमाल को इनके अंडर में या इनकी सलाह से काम करना पड़ेगा।

कमाल के लिये यह स्थिति असहनीय थी। उसने जर्मन-प्रभुत्व का घोर विरोध किया। वान सांडर्स से तो उससे ख़ास तौर से पट गई थी, पर फ़ाकेनहेन से पद-पद पर झगड़ा होने लगा। जब फ़ाकेनहेन ने क़मालपाशा को किसी तरह न पुचकार पाया, तब एक दिन उसने गिन्नियों से भरा हुआ एक क़ीमती बक्स कमाल के पास भेजा। कमाल जले-तन हो गया, और

उसने बक्स को उठाकर ज्यों-का-त्यों हाई कमांडर के पास भेज दिया।

सैनिक स्टॉफ़ की पहली मीटिंग हुई। उसमें सिर्फ़ चार व्यक्ति मौजूद थे। इनवर, जमाल, कमाल और फ़ाकेनहेन। कमाल ने फ़ाकेनहेन के विचारों का तीव्र विरोध किया, और उसे बेवक़ूफ़ तक कह डाला। जमाल कमालपाशा का साथ दे रहा था।

मत भेद इतना बढ़ गया कि मुस्तफ़ा कमाल ने इस्तीफ़ा दे दिया। इनवर ने इस्तीफ़ा तो नामंज़ूर किया, पर बीमारी की छुट्टी देकर उसे जाने दिया। इनवर कमालपाशा से डरने लगे थे। उन्हें ख़तरा था कि यह व्यक्ति किसी-किसी दिन घोर विरोध खड़ा कर देगा, अतएव उसके ख़िलाफ़ कोई कार्यवाही भी नहीं किया चाहते थे। कमाल की ख्याति बहुत बढ़ चुकी थी, वह सबसे बड़ा तुर्क-सेनापति माना जा चुका था।

* * *

कमाल कुछ दिनों तक क़ुस्तुंतुनिया में आकर ठहरा। कोई हफ़्ते-भर अपनी मा के पास रहा, बाद में पीरा होटल में एक कमरा लेकर अपने क्रांतिकारी विचारों का प्रचार करने में जुटा। पुलिस और सी० आई० डी० के लिये उसका पीछा करना उसकी पोज़ीशन के कारण अब असंभव था। वह खुलकर इनवर और जर्मनों की बुराई करने लगा। पर उसके पास पैसा नहीं

था। जमाल सदा से उसकी सहायता करता आया था, उसी ने इस समय भी पेशगी देकर कमाल का आर्थिक कष्ट निवारण किया।

इनवरपाशा कमाल की करतूतों से दुखी थे। कमाल ने उनकी दृष्टि में शैतान का दिमाग़ पाया था, जो कभी ख़ाली बैठ ही नहीं सकता। उसने बहुत-से अफ़सरों को अपने दल में मिलाया, राजनीतिज्ञों को समझा-बुझाकर अपने पक्ष में किया। लोग उसकी क़द्र भी करते थे और डरते भी थे। इनवर के कानों तक जब ये समाचार पहुँचे, वह बहुत व्याकुल और चिंतातुर हो कमाल को किसी तरह क़ुस्तुंतुनिया से बाहर भेजने का ज़रिया सोचने लगे।

* * *

दिसंबर का महीना था। जर्मन-जंग छिड़ा हुआ था। टर्की ने शुरू से ही अपना भाग्य-सूत्र जर्मनी के साथ बाँध दिया था। लड़ाई छिड़े वर्षों हो गए थे, पर कुछ निबटारा न हो पाता था। बेचारा नन्हा-सा टर्की मित्र राष्ट्रों की विशाल जल-थल-सेना के मारे तोबा-तिल्ला कर रहा था, बिल्कुल तबाह हो रहा था, और अज़हद परेशान था।

कंगाली, भुखमरी और फूट तुर्कों की चिरसंगिनी थी। युद्ध-क्षेत्र पर गई हुई तुर्की सेनाएँ सर्दी और खाद्य पदार्थों की कमी के कारण ठिठुर-ठिठुरकर मर रही थीं। तुर्की सेना के अफ़सरों

और सेनापतियों को लंबी-लंबी घूसें मिलती थीं। देश में युद्ध-क्षेत्र से सच्ची खबरें ही न आ पाती थीं।

सुल्तान अब्दुल हमीद टर्की के नाम-मात्र को बादशाह थे। इनवरपाशा जो जर्मन-राजदूत के हाथ की कठपुतली थे, टर्की-साम्राज्य के प्रधान कार्यकर्ता और वज़ीर आज़म थे।

* * *

इस समय टर्की के प्रति, स्वदेश की रक्षा के प्रति जर्मन-सेना की उदास वृत्ति देखकर शाहज़ादा वहीदुद्दीन का रुख़ बदला। वहीदुद्दीन सुल्तान अब्दुल हमीद का सबसे बड़ा बेटा था। वही गद्दी का वारिस था। वहीदुद्दीन खुद तो बिल्कुल नाक़ाबिल और नातजुर्बेकार था, पर कमाल से कुछ ऊँची पोज़ीशन के मिलने-जुलनेवालों ने उसका ध्यान युद्ध-क्षेत्र की ओर खींचा। शाहज़ादे के मन में यह बात पैठ गई कि चाहे भी जो हो, जर्मन-सेना के हेड क्वार्टरों में चलकर वहाँ की दशा देखनी चाहिए। जर्मन-राजदूत और इनवर भी इस राय से सहमत हो गए। उन्होंने सोचा कि शाहज़ादा वहाँ जाकर, विलियम क़ैसर से मिलकर, बहादुर जर्मन सिपाहियों को देखकर और युद्ध-क्षेत्र का पेचीदा जाल लखकर प्रभावित हो जायगा। अतएव वे लोग शाहज़ादे को सैनिक स्टॉफ़ के सहित वहाँ भेजने का प्रबंध करने लगे।

क़मालपाशा लिखता है कि इनवर ने मुझे क़ुस्तुंतुनिया से टालने के ख़याल से शाहज़ादे के सैनिक स्टॉफ़ में शामिल कर दिया। मैं भी उन दिनों बेकार और फ़ाक़ेमस्त था।

कुछ अनुभव मिलेगा, पैसा मिलेगा, और जर्मनों की असलियत से परिचित होने का सुअवसर प्राप्त होगा, अतएव मैंने एप्वाइंटमेंट मंज़ूर कर लिया।

कमाल कहता है कि मेरी पूर्वीय विजयों के कारण शाहज़ादा मुझसे खुश था। पर उससे मिलकर मुझे बड़ी नाउम्मेदी हुई। रवानगी से एक दिन पहले शाहज़ादे से मुलाक़ात करने के लिये मेरी बुलाहट हुई। यह मेरी उससे पहली मुलाक़ात थी। उसका कमरा क़ीमती अरबी क़ालीनों से सजा हुआ था। ढीले-ढाले चोग़े पहने हुए मुसाहिबों ने वहीदुद्दीन को चारो ओर से घेर रक्खा था। एक सोफ़े पर शाहज़ादा बैठा हुआ था। दो आराम-कुर्सियाँ सामने पड़ी थीं, जिनमें से एक पर उसने मुझे बैठ जाने का इशारा किया। मैं बैठ गया। सोचा कि शाहज़ादा कुछ कहेगा, पर उसने दूसरे ही क्षण अफ़ीमचियों की तरह आँखें बंद कर लीं, और सोफ़े से लगकर पीनक में मस्त हो गया। कोई पाँच मिनट बाद उसने अपनी डेढ़-डेढ़ पाव की पलकें ऊपर उठाई और बोला—"ऐ मुस्तफ़ा कमाल, तुझसे मिलकर मैं खुश हुआ।" बस, फिर वही पीनक और वही ख़ामोशी और वही सुषुप्ति का नज़्ज़ारा दिखाई पड़ा। मैं तो समझा था कि अब यह और कुछ न बोलेगा, पर कुछ क्षणों बाद जब वह फिर होश में आया, तो बोला—"देखो, तुम्हें कल स्पेशल ट्रेन से मेरे साथ जर्मन फ्रंट को चलना होगा, और वहाँ बड़ी ख़ूबी से अपने मित्रों की स्थिति को जाँचना होगा। अच्छा, अब जाओ, कल स्टेशन पर

ठीक वक्त से आ जाना।" इतना कहते-कहते वह कटे दुंबे की तरह सोफ़े पर चित हो गया। मैंने अपने करम ठोंके कि अच्छे के साथ पाला पड़ा। ऐ ख़ुदा, क्या इन्हीं नाज़ुक हाथों में तू टर्की का भाग्य-सूत्र सौंपेगा।

दूसरे दिन दोपहर को १२ बजे वहीदुद्दीन को फिर देखा। जर्मन-फ़ौज का मुआयना करने, शाहज़ादा ढीला-ढाला चारजामा पहने, दोनो हाथों से सलामें करते मैदाने-जंग को जा रहा था, यह देखकर मेरा जी जल गया। उसके ख़ास अरदली से दरियाफ़्त करने पर मालूम हुआ कि शाहज़ादा फ़ौजी पोशाक की कड़ाई और पाबंदी को बरदाश्त नहीं कर सकता। यद्यपि मैंने स्टेशन पर उसकी भाँड़ों-सी पोशाक का विरोध किया, और ख़ाकी फ़ौजी वरदी धारण करने के लिये कहा, पर सब व्यर्थ। दोनो हाथों को उठाकर बार-बार सलामों का जवाब सलाम से देने के लिये भी रुकवाना चाहा, पर असफल रहा। गाड़ी चल पड़ी—मैंने देखा, मेरा डब्बा सबसे पीछे मेरी बेइज़्ज़ती करने के लिये ही लगाया गया था। पर ख़ैर, कोई दो घंटे बाद शाहज़ादे ने मुझे याद किया, और अपने ही ख़ास डब्बे में बुलवा भेजा। वहाँ शाहज़ादे से बहुत खुलकर बहुत-सी गोपनीय बातें हुईं, और तभी मैंने समझा कि वहीदुद्दीन उतना निकम्मा नहीं है, जितना मैंने सोच रक्खा था, पर उसके मुसाहिबों ने उसे चौपट कर रक्खा था।

१७वीं दिसंबर को गाड़ी स्पा पहुँची। वही स्पा, जहाँ विशाल

जर्मन-सेना का हेड क्वार्टर था। मेहमानों की आव-भगत में कोई कसर न रक्खी गई थी। शाहज़ादे के स्वागत के लिये स्वयं सम्राट् क़ैसर विलियम, प्रधान सेनापति वान हिंडेनबर्ग, फ़ील्ड मार्शल, लूडन डोर्फ़ प्रभृति महान् व्यक्ति स्टेशन पर उपस्थित थे। बड़े-बड़े क़दावर जर्मन जवान गार्ड्स ऑफ़् आनर बाँधे खड़े थे। क़ैसर बड़े तपाक से आगे बढ़े, और शाहज़ादे को अपने हाथ का सहारा देकर प्लेटफ़ार्म पर नीचे उतार लाए। बाद में सम्राट् क़ैसर ने शाहज़ादे के सैनिक स्टॉफ़ से परिचय प्राप्त किया, और जब कमालपाशा का नाम लिया गया, तो उन्होंने बड़े इख़लाक़ से आगे बढ़कर, अनातोलिया का विजयी वीर कहकर प्रगाढ़ मैत्री के नाते हाथ मिलाया। क़ैसर पहले ही से कमालपाशा के नाम और काम से परिचित थे। वान सांडर्स ने इस व्यक्ति को हर तरह से संतुष्ट और ख़ुश करने के पैग़ाम पहले ही से भेज रक्खे थे। अतएव सम्राट् इस टर्की-सेनापति को हर तरह से सम्मानित कर लौटाना चाहते थे।

पर कमाल तो दूसरी ही धातु का बना था। उसे इन सारे आदर-प्रबोधनों के अंदर कुछ रहस्य समझ पड़ा। इसे उसने जर्मनी की कमज़ोरी का आभास-मात्र समझा। जब शाह-ज़ादा अखिल जर्मन सेना के सेनापति वान हिंडेनबर्ग के दफ़्तर में ले जाया गया, कमाल भी उसके साथ था। हिंडेन-बर्ग उन दिनों समूची जर्मन, आस्ट्रियन और तुर्की सेना के सर्वप्रधान अफ़सर थे। वह प्रिंस वहीदुद्दीन को जर्मनी की

विजय-वार्ता सुनाने लगे, और विश्वास दिलाते रहे कि शीघ्र ही वह अपने सहायक राष्ट्रों के साथ विजयी होंगे। इस पर शाहज़ादा वहुत ख़ुश हुआ, और वयोवृद्ध सेनापति को धन्यवाद देने लगा। कमालपाशा लिखता है कि मेरा मन वार-वार करता था कि पूछ लूँ कि ये चिकनी-चुपड़ी वातें वास्तविक हैं, या हम लोगों को ख़ुश करने के लिये कही गई हैं। पर वीच में दस्तंदाज़ी करना वदतमीज़ी समझ ख़ामोश रह गया। इसके वाद ही जनरल लूडन डोर्फ़ से साक्षात् हुआ। उनसे कमाल ने ख़ूव खुलकर वातचीत की। जनरल वहुत चढ़-वढ़कर कह रहा था कि उसका हमला शत्रु-सेना को पश्चिमीय क्षेत्र में वहुत दूर तक ढकेल देगा। इस पर कमाल पूछ वैठा कि ज़्यादा-से-ज़्यादा कितनी दूर तक छापा मारा जा सकेगा। आपने कौन-सा मुक़ाम मुक़र्रर किया है, जिसे लक्ष्य में रखकर हम लोगों की सेनाएँ धावा वोलेंगी। लूडन डोर्फ़ इस प्रश्न को सुनने के लिये विलकुल तैयार न था। वह क्या जानता था कि इस उल्लू के पट्ठे शाहज़ादे के साथ कोई योग्य सैनिक भी आया है। पर जवाव देना अनिवार्य समझ वोला कि हम लोग प्रयत्न कर रहे हैं कि ज़्यादा-से-ज़्यादा दूरी तक पहुँचें, पर वीच की घटनाएँ न-जाने क्या-क्या गुल खिलाएँ। अतएव आपको किस तरह निश्चित मुक़ाम वतलाएँ। इस उत्तर से सर्वथा असंतुष्ट होकर कमाल ने कह ही तो डाला कि शायद अभी युद्ध का नक़्शा ही वन रहा है। कमाल के इस तरह

के सवाल-जवाब से लूडन डोर्फ़ बहुत सतर्क हो गया, और उसने सम्राट् क़ैसर को भी आगाह कर दिया।

जर्मन-हेड-क्वार्टर में जो कुछ कमाल ने देखा, उससे उसे निराश ही होना पड़ा। विजय का उल्लास तो सम्राट्, सेनापति या सैनिक किसी के चेहरे पर नज़र ही न आता था। "जर्मनी जल्दी ही हारेगा" कमाल ने साफ़-साफ़ शब्दों में शाहज़ादे को बतला दिया। कमाल इन दिनों शाहज़ादे का बड़ा प्रिय पात्र था। वह बहुधा उसके साथ टर्की के भविष्य के संबंध में बातचीत किया करता था। एक दिन इसी विषय पर वार्तालाप छिड़ा हुआ था, सब कोई होटल के बड़े कमरे में बैठे हुए थे कि सैनिक बूटों की चरमराहट सुनकर चौकन्ने हो गए। दरवाज़े के संतरी ने उसी क्षण सम्राट् क़ैसर के आने की सूचना दी। जब तक शाहज़ादा अपनी पेशवाज वग़ैरह सँभालकर खड़ा हो, तब तक संसार-प्रसिद्ध विलियम क़ैसर कमरे के बीचोबीच आकर खड़े हो गए। उनकी चुस्त पोशाक, भड़कीला रवाब, चेहरे का तेज, बलिष्ठ शरीर और सैनिक ज्ञान सचमुच उन्हीं के अनुरूप था। जर्मनी के तख़्त पर बैठने के लिये क़ैसर सर्वथा योग्य थे। उस पर उनके सौजन्य, नम्रता, समानता के व्यवहार और प्रत्येक सैनिक के साथ मिल-जुलकर काम करने की प्रवृत्ति क़ैसर को और भी ऊँचा उठा दिया था। कमाल ने जब क़ैसर और अपने बादशाह की तुलना की, तो उसे बिलकुल ज़मीन-आसमान

का फ़र्क़ जान पड़ा। टर्की के सुल्तान के नाम पर उसे रोना आता था। क़ैसर ने टर्की के मैत्री भाव, सहायता और सहयोग की जिस अच्छे ढंग से प्रशंसा की, उससे सभी कोई मुग्ध हो गए। पर जब वह इनवरपाशा की शराफ़त और ख़ूबियों को बयान करने लगे, तब कमाल के कान खड़े हुए, क्योंकि इनवरपाशा को वह पहले ही से क़ैसर का वेतन-भोगी कर्मचारी समझता था। आख़िर वहीदुद्दीन ने कहा—"ऐ सम्राट्! दुश्मनों ने टर्की का अंजर-पंजर ढीला कर डाला है। जर्मन-सेनाएँ आज तक टर्की की सहायता और रक्षा के लिये नहीं पहुँच पाई हैं। दुश्मन हमले-पर-हमले कर रहे हैं, और आप लोग केवल पश्चिमीय युद्ध-क्षेत्र पर व्यस्त हैं।" इस पर क़ैसर ने बहुत कुछ ढाढ़स बँधाया, और वहीदुद्दीन को आनरेबिल शाहज़ादा तथा टर्की का भावी सम्राट् कहकर संबोधित किया। सम्राट् ने यह भी यक़ीन दिलाया कि जर्मनी की विजय को आप निश्चित समझिएगा। जब मैं स्वयं आपको विश्वास दिला रहा हूँ, तब आपको कोई संदेह नहीं रह जाना चाहिए। यह कहकर सम्राट् ने झुककर वहीदुद्दीन से हाथ मिलाया। बाद में वह कमाल की ओर मुड़े, और वीरवर सेनापति कहकर उससे भी शेक हैंड किया।

कमालपाशा वहीदुद्दीन के साथ कोई एक हफ़्ते तक जर्मन-युद्ध-क्षेत्र पर ठहरा था। वहाँ वह जितने दिनों रहा, सेना की व्यवस्था, निरीक्षण, बलाबल और भविष्य पर विचार करता

रहा। उसकी निश्चित धारणा हो गई कि जर्मनी ज़रूर हारेगा। जर्मनी की भावी पराजय का टर्की पर क्या प्रभाव पड़ेगा—यह विचारणीय विषय था। टर्की को आनेवाली मुसीबतों से किस प्रकार उबारा जाय, इसी समस्या को सुलझाना था।

जर्मन-सम्राट् ने बिदाई भी बड़े ठाट की दी। शाहज़ादे को जर्मनी की बनी हुई बहुतेरी नायाब चीज़ें भेंट की गई। स्वयं क़ैसर अपने पूरे स्टॉफ़ के साथ शाहज़ादे को पहुँचाने आए थे। शाहज़ादे के हाथ को अपने हाथ में लिए वह जिस ढंग से टहल रहे थे, उस तर्ज़ से घूमने-फिरने का सिर्फ़ बड़े जिगरी दोस्त ही साहस कर सकते हैं। सम्राट् क़ैसर दुनिया के रंग-ढंग देखे हुए तजुर्बेकार महापुरुष थे। पूर्वीय देशों के राजकुमारों को कैसे फुसलाया जाता है—इसे वह ख़ूब जानते थे। जिस तरह उसके स्वागत में तोपों की बाढ़ दगी थी, वैसे ही उसकी बिदायगी में १०१ तोपों की सलामी दी गई। शाहज़ादा तो शाही मान-सम्मान में अंधा हो रहा था, पर कमाल सब कुछ देख रहा था। क़ैसर के प्रत्येक कार्य में उसे जर्मनी की पस्ती और शिकस्ती के चिह्न दृष्टिगोचर होते थे।

रास्ते में, रेल के डिब्बे में शाहज़ादे ने कमाल से बहुतेरी बातें कीं। शाहज़ादा बेवक़ूफ़ होते हुए भी एकदम काठ का नहीं था। वह कमाल की उक्तियों को ख़ूब समझ रहा था, और उसे स्वतः भी जर्मनी की पराजय का निश्चय-सा हो गया था। फिर तो गाज़ीपाशा ने बहुत खुलकर वार्तालाप

किया। टर्की के राज्य-विधान की दुर्दशा, सेनाओं की अव्यवस्था और अनवर की नीचता का कच्चा चिट्ठा उसने वहीदुद्दीन को सुना डाला। अंत में यह भी कह दिया कि टर्की का बेड़ा मँझधार में डूब रहा है, उसे अब भी बचाया जा सकता है, बशर्ते कि.......

इतना कहने के बाद कमाल कुछ रुका। वह शाहज़ादे का रुख़ जानना चाहता था। आख़िर बशर्ते कि क्या—कहते क्यों नहीं हो ? शाहज़ादे ने पूछा।

कमाल ने तनकर खड़े होते हुए कहा कि बशर्ते कि मेरी ख़िद-मत क़बूल की जाय, वतन के जहाज़ को इन बाजुओं से खिवाकर ज़रा देखा जाय। मुल्क के ख़ातिर मैं अपनी जान क़ुरबान कर सकता हूँ, मेरी और अपनी ज़िंदगी को आप एक सूत्र में बाँधकर उसकी रक्षा कर सकते हैं। जर्मन-सेना की रंग-रवैया देखकर यह निश्चय समझना चाहिए कि ख़तरे की घंटी बज चुकी है। ग़ाफ़िल रहने में मुल्क के लिये पूरा ख़तरा है।

शाहज़ादा—"तब आख़िर तुम्हारी इच्छा क्या है ?"

कमाल—"आपने अभी-अभी देखा है कि जर्मनी के शाह-ज़ादे किस तरह अपनी सेनाओं का संचालन करते हैं। उनके कामों के विभाग अलग-अलग बँटे हुए हैं, जहाँ वह स्वयं या अपने प्रतिनिधियों द्वारा कार्य करते हैं। आप भी किसी सेना की बागडोर अपने हाथों में लीजिए, और मुझे अपने सैनिक

स्टाफ़ का हेड मुक़र्रर कीजिए। फिर उसका नतीजा देख लीजिए कि क्या होता है।"

"किस सेना की ओर तुम्हारा इशारा है कमाल !" वहीदुद्दीन ने पूछा।

"नं० ५ की फ़ौज बेहतर होगी जनाब !"

"पर उस फ़ौज पर तो क़ुस्तुंतुनिया की रक्षा का भार है। शहंशाह को ऐसी बात कैसे क़बूल हो सकती है ?"

"क्यों नहीं हो सकती ?" कमाल बोला—"क्यों न हो सकने का कारण क्या है ? आप क्या इस लायक़ नहीं हैं कि राजधानी की रक्षा कर सकें ? शहंशाह तो रात-दिन ज़नानख़ाने में हिजड़ों, हूरों और ग़िल्मों के फेर में पड़े रहते हैं। उनके नाम पर शासन तो इनवरपाशा करते हैं।"

"अच्छा, ख़ामोश रहो। अब्बाजान की बहुत बुराइयाँ न करो। वह चाहे भी जैसे हैं, मेरे वालिद हैं, बुज़ुर्ग हैं। तुम मेरे कौन हो ? ये कान ऐसी गंदी बातें सुनने के आदी नहीं हैं।"

कमाल एकदम स्तंभित रह गया। राजनीतिक संसार में पिता-पुत्र का ममत्व कैसा। अब्बाजान, वालिद और बुज़ुर्गी के शब्द चाहे भी जैसे मीठे और बाइज़्ज़त हों, पर जब देश पर संकट है, और वह कान में तेल डाले पड़े हैं, तब देश के नाम पर क्या होनहार शहंशाह ऐसे ही कर्तव्य निबाहा करते हैं। देश एक क्या अनेकों, सहस्रों माता-पिताओं से ऊपर है। देश की रक्षा के लिये बड़ी-से-बड़ी क़ुरबानी भी कोई

चीज़ नहीं है। जिसके दिल में देश का दर्द नहीं, वह हृदय नहीं है, पत्थर है। और, भावी सम्राट् के मन में ही मुल्क की बेहतरी का क़तई लिहाज़ नहीं है, तो इससे ज़्यादा चिंता और परिताप की क्या बात हो सकती है। शाहज़ादे का रुख़ देखकर कमाल के जिगर के टुकड़े-टुकड़े हो गए। कल का छोकड़ा वहीदुद्दीन, निकम्मे बाप की नालायक़ औलाद वहीदुद्दीन, आराम-कुर्सी पर लेटा हुआ, टर्की के सबसे बड़े और लायक़ उस सेनापति को डाट बता रहा था, जिसके दिल का ज़र्रा-ज़र्रा देश की बेहुर्मती के नाम पर रो रहा था। जर्मन-शाहज़ादों और टर्की के इस वलीअहद में कितना अंतर था। शायद उसी दिन से कमाल राजतंत्र का जानी दुश्मन बन गया, और शायद इस घटना ने भी टर्की में प्रजातंत्र क़ायम करने के मंसूबे को कमाल के दिल में और भी पक्का कर दिया।

स्वदेश पहुँच जाने पर कमालपाशा की पिंडलियों में घोर दर्द उठा। उसे इलाज के लिये वीयना जाना पड़ा। वहीं, सन् १९१८ के जुलाई महीने में, उसने सुना कि सुल्तान का इंतक़ाल हो गया, और वहीदुद्दीन गद्दीनशीन कर दिया गया। कमालपाशा का कथन है कि उस वक्त मेरी समझ में कुछ न आया कि इस ख़बर को सुनकर हँसूँ या रोऊँ। बात कहते, पलक मारते एक नातजुर्बेकार नौजवान साहबज़ादा समूचे मुस्लिम जगत् का सुल्तान और ख़लीफ़ा बन गया। पर वह कर ही क्या सकता था? ज़माना किसी से बुराई मोल लेने की परवानगी नहीं देता था। उसने बहुत सोचने-विचारने के बाद वहीदुद्दीन को बधाई का तार भेज दिया।

अगस्त के महीने में कमाल टर्की को लौटा, और मीरा-शाही महल में छठे सुल्तान मुहम्मद (वहीदुद्दीन) से भेंट करने गया। शाही मुलाक़ात का रंग-ढंग अच्छा था। शाह ने कमाल को बैठने के लिये कुर्सी दी, पीने को बढ़िया सिगार दिया। वहीदुद्दीन निस्संदेह कमालपाशा की इज़्ज़त करता था, या उसकी सैनिक योग्यता और सर्व-प्रियता के

कारण भय खाता था। इन बातों से प्रोत्साहित होकर कमाल ने अपना पुराना राग अलापा। सेना की बागडोर को खुद अपने हाथों में ले लेने की सिफ़ारिश की, और स्वयं सब तरह से सेवा और सहायता का वचन दिया। "अच्छा, इस पर फिर विचार करूँगा।" कहकर बादशाह ने उस बात को उस वक्त टाल दिया।

दूसरी बार की मुलाक़ात में शाह ने अपने एडीकैंप को साथ ही रक्खा, अतएव कोई महत्त्व की बात न हो पाई। हाँ, सुल्तान ने इतना जरूर खुलासा कर दिया कि भविष्य में सारा राज-काज इनवर और तलात के सलाह-मशविरे से हुआ करेगा। कमाल के मुख्य शत्रु और प्रतिद्वंद्वी से शाह का मैत्री भाव—कमाल को बड़ी कड़ी चोट लगी। वह अभी तक धोके में था, और वहीदुद्दीन की सहायता से प्राप्त हो सकनेवाले बड़े-बड़े स्वप्न देख रहा था। पर आज वह चौकन्ना हो गया।

अनवरपाशा को कमाल से सदा ही भय बना रहता था। वह कमाल को अपने उरूज के मार्ग का रोड़ा समझता, अतएव उसे दूर करने के लिये अनवर ने जबरदस्त चाल चली। सीरिया में तुर्की सेनाओं की बुरी दशा थी, फ़ौजें अस्त-व्यस्त थीं, और निरंतर हार-पर-हार खा रही थीं। इस सेना की बागडोर प्रसिद्ध जर्मन अफ़सरों के हाथ में थी। अतएव कमाल को वहाँ भेजकर अनवर ने उनकी शुभ्र विजयों के

यश पर कलंक-कालिमा पुतवानी चाही। कमालपाशा सीरिया की फ़ौजी हालत से परिचित था, एक बार इस्तीफ़ा भी दे चुका था, अतएव फिर वहाँ नहीं जाना चाहता था। वहाँ न जाने की इच्छा का एक मुख्य कारण और भी था कि वह देश के राज-नीतिक वायु-मंडल से बहुत दूर हुआ जाता था, पर मुस्तफ़ा की कोई चाल न चली। अनवर ने सुल्तान को लगातार यह बात सुझाई कि कमाल के वहाँ पहुँचने से सेना की दशा बहुत कुछ सुधर जायगी। बात बहुत अंश में ठीक भी थी, पर अनवर को तो एक तीर से दो चिड़ियाँ मारनी थीं। सुल्तान ने एक दिन कमाल को महलों में बुलाकर हुक्म दे दिया कि तुम सीरिया की टर्की फ़ौज के एक विभाग के कमांडर बनाए गए, वहाँ तुम्हें जल्दी-से-जल्दी पहुँच जाना चाहिए। मुझे आशा है कि जो योग्यता तुमने अन्यान्य युद्ध-स्थलों पर दिखलाई है, वही यहाँ भी तुम्हारा साथ देगी। यह कहकर कमाल को बिदा कर दिया।

दूसरे कमरे से जब कमाल गुज़र रहा था, तो उसे इनवर मिला। यह सारी करतूत इनवरपाशा की है, इसे वह ख़ूब जानता था। एक मिनट के लिये वह रुका और बोला, वाह इनवर, वाह! मैं तुम्हें बधाई देता हूँ। तुमने ख़ूब बदला लिया। तुम जीते, और मैं हारा।

इनवर ख़ामोश रहा। पर पास ही कुछ जर्मन अफ़सर बैठे हुए थे, उन्होंने ताना मारा। वे बोल उठे कि टर्की फ़ौज महा

निकम्मी है। वह भेड़ और बकरियों की तरह लड़ती है, और दुश्मन की मार के आगे जानवरों-सा भागती है। ऐसी फ़ौज की कमांडरी कोई महत्त्व का पोज़ीशन नहीं है।

शायद उन लोगों ने यह बात कमाल को चिढ़ाने के लिये ही कही थी। पर पाशा ने ऐसा तीखा जवाब दिया कि उनका मुँह बंद हो गया। बोला—जनाब, मैं तुर्की सेना के साथ दर्जनों लड़ाइयाँ लड़ चुका हूँ। मैं ख़ुद भी एक टर्की सिपाही हूँ। कोई टर्क कभी युद्ध-क्षेत्र से भागने का नाम नहीं लेता। वह पीछे हटना भी नहीं जानता। पर आजकल जर्मन अफ़सरों की मातहती में जो न हो जाय, सो थोड़ा है। जर्मन सेनापति खतरे के दायरे में सेना को झोंककर ख़ुद कितनी दूर रहता है, और मौक़ा पड़ने पर सबके आगे जीवन-रक्षा के लिये भागता है। आप लोगों ने ऐसे ही किसी मौक़े पर टर्की सिपाहियों की पीठें देखी होंगी। जब सेनापति स्वयं भगोड़ा हो, तब टर्की सिपाहियों को दोष देना बेकार है।

अच्छा, यही सही, सीरिया में जाकर तुम क्या करते हो, यह भी देखना है। वहाँ तो तुर्की-ही-तुर्की सेना है।

ठीक है। देख लेना, बनिस्बत इसके कि वह वहाँ से भागे। कमाल की क़ब्र रण-क्षेत्र पर बनेगी, टर्की के सैनिक भी अपना जौहर दिखलावेंगे। जर्मन सेनापतियों के साथ रहने से सैनिकों में जो नपुंसकता आ गई है, उसे हम दूर करने की चेष्टा करेंगे। कहता हुआ कमाल चला गया। इस

तेजस्वी नेटिव सेनापति के मुख से ऐसे कड़ुए जवाब सुनकर जर्मन नायक दाँत पीसकर रह गए थे।

अगस्त के अंतिम सप्ताह में कमाल सीरिया की युद्ध-भूमि में पहुँचा। उसने अपने पहुँचने की रिपोर्ट अपने प्रधान अफ़सर और मित्र जनरल वान सांडर्स को दे दी, जो उस समय सारी दक्षिणी फ़ौजों का प्रधान अफ़सर था। सांडर्स को कमाल से मिलकर बड़ी खुशी हुई। उन्होंने तत्काल अपने इस प्रिय नायक को बुलाया, साथ में खिलाया और सारे रण-क्षेत्र का एक बार मुआयना कर आने का मशविरा दिया।

कमाल ने देखा कि फ़ौज की हालत उससे भी बदतर है, जो कुछ उसने सुन रक्खी थी। टर्की के सैनिक दुखी थे, पस्त-तबियत थे। न उनमें उत्साह था, और न लड़ने की शक्ति थी। पर नेता वही है, जो मिट्टी के पुतलों में भी जान फूँक दे। कमाल ने सीरिया के रण-क्षेत्र पर वह काम किया, जो एल्पस पहाड़ पार करते समय एक बार नेपोलियन ने किया था। वह प्रत्येक सैनिक के पास गया, हाथ मिलाया और प्रेम के दो-चार शब्द बोल उसे मोल ले लिया। उनकी फटी हालत पर उसे बहुत तरस आया, और जहाँ तक हो सका, उनकी ज़रूरियातों को पूरा किया। एक दिन सैनिकों के प्रतिनिधियों को एक ख़ास सभा करके उसने एक ओजस्वी भाषण दिया, जिसका तात्पर्य यह था

कि चाहे भी जैसे हो, दुश्मन को देश के अंदर नहीं घुसने देंगे। चने चबाएँगे, फटे चीथड़े लपेटेंगे, पर वतन के नाम पर, वतन की बीबियों और बच्चों के नाम पर, उन्हें एक क़दम भी नहीं बढ़ने देंगे। आज नहीं, तो कल हमारी पोशाकें सुधर जायँगी, हमारी ज़रूरत के सारे सामान मुहइया हो जायँगे, पर अगर हमारी हार हुई, तो हम मुँह दिखाने क़ाबिल न रहेंगे, और अपने साथ ही अपने मुल्क की हस्ती को भी ले डूबेंगे। कमाल ख़ुद एक मामूली सैनिक की तरह रहता था। उनके सुख में सुखी और दुख में दुखी होता। पर न दवा का इंतज़ाम था, न बीमारों की तीमारदारी का बंदोबस्त था। टर्की फ़ौज का क़ाफ़िला पेचिश, मलेरिया और भूख से रेगिस्तान की जलती हुई धूप में तड़फ रहा था।

उधर अँगरेज़ों के पास सब कुछ था। यह स्पष्ट मालूम होता था कि वे बड़े पैमाने पर हमला करने की फ़िक्र में हैं। उनकी संख्या बढ़ रही थी। नई कुमक आकर नई जान डाल देती थी, उनमें उत्साह था, संगठन था, खाद्य पदार्थ और अस्पताल का इंतज़ाम बहुत बढ़िया था। हवाई जहाज़ भी काफ़ी तादाद में थे। टर्की के पास तो कुल आठ ही हवाई जहाज़ थे।

इन सब कमियों और कठिनाइयों के होते हुए भी कमाल अपने काम में राक्षस की तरह जुट पड़ा। बीस-बीस घंटे परिश्रम करने के कारण वह बीमार हो गया। घुटने के दर्द ने उसे बुरी

तरह सताया। सितंबर के आगामी दो हफ़्तों में, जब आक्रमण की खबर ज़ोर पकड़े हुए थी, कमाल हेडक्वार्टर्स—नबलुस—में खाट पर पड़ा दर्द से कराह रहा था।

१७ सितंबर को खबर मिली कि ता० १९ को समुद्री किनारे से शत्रुओं की ओर से भीषण आक्रमण होगा।

रफ़तपाशा ने कमाल को आकर खबर दी कि शत्रु-सेना का एक बाग़ी सिपाही यह पैग़ाम आपको देने आया है। इस्मत और अली फ़ऊद तत्काल बुलाए गए। मुस्तफ़ा कमाल उठ बैठा, और सारी बातें सुनकर समाचार की सत्यता पर विश्वास करने लगा। उसने वान सांडर्स के पास यह समाचार पहुँचा दिया।

पर जर्मन सेनापति ने इस खबर को सच न माना। उन्होंने कहा कि यह दुश्मन की एक चाल है। आक्रमण पूर्व की ओर से होगा, और तदनुसार उन्होंने अपनी फ़ौजों को मार्च करने का हुक्म दे दिया।

यह निश्चय होते ही कि शत्रु-सेना के सिपाही की बात सही है, कमाल ने विस्तर त्याग दिया। बुख़ार चढ़ रहा था, दर्द ज़ोरों पर था, गर्मी सख़्त थी, पर उसकी विल-पावर—इच्छा-शक्ति—इन सबसे भी तीव्र थी। उसने तैयारियाँ कीं, और सारे कमांडरों को तत्काल तैयार रहने की पूरी हिदायतें दे दीं।

ता० १९ को अर्ध-रात्रि में इस्मत ने टेलीफ़ोन किया कि शत्रुओं ने गोलाबारी शुरू कर दी, आक्रमण आरंभ हो गया।

भोर होते अँगरेज़ों ने हमला बोल दिया। वान सांडर्स की फ़ौज तबाह हो गई। वह ख़ुद पकड़े जाने से मुश्किल से बचा।

मुस्तफ़ा कमाल ने अपनी फ़ौज को इकट्ठा कर नदी किनारे मोर्चा बाँधा। पर शत्रु-सेना की भयंकर मार के आगे यहाँ भी न ठहर सका, और सेना-सहित डेरा स्टेशन के पार निकल गया।

वहाँ से अँगरेज़ों के पहुँचने का विना इंतज़ार किए वह दमस्कस तक पीछे हट गया।

"जो भागेगा, उसके मैं गोली मार दूँगा"—कमालपाशा ग़ुस्से से लालोलाल था। पर सेना की हिम्मत पस्ती पर थी, अफ़सरों तक में बुज़दिल घुस गई थी। पुनःसंगठन की महती आवश्यकता थी। वह वान सांडर्स के पास पहुँचा, और २०० मील एकदम पीछे चले जाने का अपना मंसूबा ज़ाहिर किया।

"तुम्हारी धारणा बहुत ठीक है।" जनरल बोला, पर मैं एक विदेशी की हैसियत से २०० मील ज़मीन शत्रु को विना लड़े-भिड़े दे देने का अख़्तियार नहीं रखता। मैं टर्की साम्राज्य को अपने हाथों नष्ट होने की नौबत नहीं देखना चाहता। इस ज़िम्मेदारी को तुम्हीं लोग लो, जो टर्की के वास्तविक विधाता हो।

अच्छा, सारी ज़िम्मेदारी मेरी रही—कमाल ने तत्काल जवाब दिया, और सेना को—२०० मील पीछे हटकर, शत्रु की पहुँच से बहुत दूर—एलप्पो के सुरक्षित स्थान में पुनःसंगठित होने का आदेश दिया।

१००० घुड़सवारों को लेकर वह सबसे पहले एलप्पो पहुँच गया। बड़ा कठिन रास्ता था। ऊँचे-ऊँचे नंगे पहाड़ आसमान को छू रहे थे, जिनसे गुज़रने के लिये सिर्फ़ एक सकरा-सा दर्रा था। इसी दर्रे को कमाल ने अपने क़ब्ज़े में किया। एक समय में एक साथ दो सैनिकों से ज़्यादा इस रास्ते से निकल ही न सकते थे। ऊपर, चोटियों पर, नीचे सकरी पहाड़ी भूमि पर और पीछे पहाड़ों से सुरक्षित जगह पर उसने मोर्चा बाँधा। टर्की सेना ऐसा स्थान पाकर बाग़-बाग़ हो गई, और विजय प्राप्त करने की आशा फिर से उसमें संचरित होने लगी। वहाँ तक पहुँचने में अँगरेज़ों को हफ़्तों लग गए। बियाबान रेगिस्तान में शत्रुगण भटकते फिरे, और बहुत-सी तपिश के नाबर्दाश्त होने से मृत्यु के ग्रास बन गए। महीनों पड़ाव डाले रहने पर भी अँगरेज़ इस स्थान पर टर्की सेना को शायद ही हरा सकते थे। दो-एक बार उनके हमले हुए, पर वे बुरी तरह हारे। एक दिन का ज़िक्र है कि कमाल एलप्पो की विजय के बाद मोटर पर बैठा हुआ अकेले हवा खाने जा रहा था कि शत्रु-सेना के ५०० अरबी सिपाहियों ने उसे घेर लिया। कमाल मोटर की सीट पर हंटर लेकर खड़ा हो गया। अरबों के पास तलवारें थीं, और इसके पास दो पिस्तौलें भरी रक्खी थीं। कमाल ने पिस्तौल के नले को उनकी ओर करके कहा कि तुम्हारा शेख़ जो भी हो, वह आगे आवे। शेख़ आगे बढ़ा। कमाल ने पिस्तौल के ज़ोर से उससे माफ़ी

मँगवाई। शेख़ के आदेश से उसकी सारी टुकड़ी कमाल को फ़र्शी सलामी देते हुए मार्च कर गई, तब कहीं शेख़ को कमाल ने छोड़ा। उस दिन ज़रा-सी ग़ल्ती होने पर कमाल की जान चली जाती। दूसरे दिन ब्रिटिश सेनापति कर्नल लारेंस ने जब यह हाल सुना, वह हाथ मलकर रह गए। कमाल-पाशा अपनी वीरता और धीरता के कारण शत्रु-सेना में भी मशहूर हो गया था।

इसके बाद एक मोर्चा और लड़ा गया। हरीतान के गाँव में अँगरेज़ी सेना पड़ाव डाले पड़ी थी। टर्कों ने भयंकर मार मचाई। अँगरेज़ी फ़ौज को बड़ी क्षति पहुँची। इसके बाद दोनो सेनाएँ बहुत दिन तक व्यूह रचना किए और मोर्चा बाँधे एक दूसरे के आमने-सामने पड़ी रहीं। हाँ, कभी-कभी गोलियों की बौछार और तलवारों की झनकार सुनाई पड़ जाती थी।

दोनो ओर की सेनाएँ विश्राम ले रही थीं कि ऐसे ही एक दिन क़ुस्तुंतुनिया से ख़बर आई कि टर्की-गवर्नमेंट ने अँगरेज़ों के साथ मुद्रोस की (क्षणिक) संधि कर ली।

सब जर्मनों के लिये हुक्म आया कि वे तत्काल जर्मनी को लौट जायँ। अदाना की सराय में मुस्तफ़ा कमालपाशा ने अपनी गवर्नमेंट के ऑर्डर के अनुसार दक्षिण की सारी सेनाओं का आधिपत्य जनरल वान सांडर्स से ले लिया।

दोनो सेनानी काफ़े की मेज़ पर बैठे थे। एक ने सेना का

कमांड देने और दूसरे ने उसे लेने की रस्म अदायगी कर ली थी। मुस्तफ़ा कमाल मेज़मान था, जनरल वान सांडर्स उसके मेहमान थे—बड़े और छोटे का नाता टूट चुका था।

उस घोर पराजय के अवसर पर दोनो के मुख से कुछ न निकलता था। दोनो दुखी थे, पर दोनो बहादुर तजुर्बेकार सिपाही थे। दोनो एक दूसरे को बड़े आदर और स्नेह की दृष्टि से देखते थे।

मुझे बहुत ख़ुशी है कि मैंने आपकी योग्यता को शुरू ही से परख लिया था—जनरल वान सांडर्स ने आख़िरी बार हाथ मिलाते हुए कहा—जब से आपने अनाफ़ारता का युद्ध विजय किया, तब से मैं आश्चर्य-चकित हो गया था, और आपकी क़ाबिलियत को मान गया था। मुझे इस बात का गर्व है कि मुस्तफ़ा कमाल से मेरा परिचय हुआ, घनिष्ठता बढ़ी और मैत्री स्थापित हुई। अनेकों बार हम लोग एक दूसरे के ख़िलाफ़ रहे हैं, पर वह मुख़ालिफ़त सच्ची और समझ की रही है। आज मैं बड़े ही हर्ष और संतोष के साथ इतना बड़ा भार आपके कंधों पर छोड़ रहा हूँ, और यह इतमीनान रखता हूँ कि आप इसे मुझसे कहीं ज़्यादा योग्यता के साथ निबाह कर उस प्रशंसा के भागी बनेंगे, जो आपकी चीज़ है।

* * *

टर्की की पराजय हुई ज़रूर, पर कमाल की शक्ति बहुत बढ़ गई। वह टर्की के रण-क्षेत्र की सारी फ़ौज का प्रधान

सेनापति था। उसने निश्चय कर लिया कि टर्की को वह शत्रु राष्ट्रों की चक्की में हरगिज़ न पिसने देगा। उसने फ़ौज को हटाने से इनकार कर दिया। प्रत्येक शर्त को पूरा करने के लिये वह शत्रुओं के प्रतिनिधियों से लड़ने-झगड़ने लगा। जब अँगरेज़ों ने अलेक्ज़ैंड्रा पर अधिकार जमाना चाहा, उसने साफ़ इनकार कर दिया, और फ़ौज को हुक्म दे दिया कि अगर दुश्मन ज़बरदस्ती करे, तो वह युद्ध छेड़ दे, और उसे मारकर भगा दे।

पहले तो इज़्ज़तपाशा ने, जो वज़ीरे-आज़म थे, गवर्नमेंट की ओर से कमाल को वहाँ से हट जाने का ऑर्डर दिया। जब वह न माना, तब विनय-पूर्वक वहाँ से सेना को हटा लेने की प्रार्थना की। "अगर हम इस बुज़दिली से घुटने टेक देंगे, तो हम बिल्कुल ख़त्म हो जायँगे। हमको इस वक्त सख़्ती से काम लेना चाहिए।"—कमाल ने तार द्वारा जवाब दे दिया, और अपनी जगह से एक इंच भी न टसका।

उसने सैन्य बल बढ़ाना शुरू किया। उसने अपने मातहत अफ़सरों को आस-पास के पहाड़ी मुल्क में भेजा, जहाँ से आदमी, हथियार और खाने का सामान इकट्ठा किया गया। चाहे भी जैसे हो, वह दुश्मन को देश में घुसने से रोकेगा।

एकाएक प्रधान मंत्री इज़्ज़तपाशा ने इस्तीफ़ा दे दिया। उनसे सुल्तान से किसी महत्त्व की बात पर झगड़ा हो गया

था। इज़्ज़त ने टेलीफ़ोन से कमाल को क़ुस्तुंतुनिया फ़ौरन् आने को कहा। कमाल सदा से राजनीतिक उरूज का भूखा था, अतएव वह अपने विश्वासी अफ़सरों को सेना का चार्ज दे स्वयं राजधानी के लिये चल पड़ा।

---

(२१) (२२) (२३)

टर्की और मित्र राष्ट्रों में क्षणिक समझौता हुए कोई एक महीना हो चुका था, जब कमालपाशा क़ुस्तुंतुनिया पहुँचा। इतने ही समय के अंदर उसने देखा कि शत्रु ने चारो ओर से अड्डा जमा लिया था। अँगरेज़ों के लड़ाकू जहाज़ बासफोरस की खाड़ी में घूम रहे थे। अँगरेज़ों की फ़ौज राजधानी पर अधिकार किए पड़ी थी। दर्रे दानियाल पर भी अँगरेज़ों का ही आधिपत्य था। फ़रासीसी सैनिक स्तंबोल में डटे थे। उनके उपनिवेशों के हब्शी सैनिक गाली गलाटा पर क़ब्ज़ा जमाए थे। इटली की फ़ौजवाले पीरा के रेलवे-स्टेशन पर छावनी डाले थे। मित्र राष्ट्रों के अफ़सरान पुलिस का मुआयना करते, बंदरगाह की देख-रेख करते, क़िलों को गिरवाते और फ़ौज को छिन्न-भिन्न करते। कहने का तात्पर्य यह कि राजधानी की रक्षा के आस-पासवाले प्रायः सारे साधन ही शत्रुओं के हाथ में जा चुके थे।

प्रसिद्ध प्राचीन ओटमन साम्राज्य के टुकड़े-टुकड़े हो रहे थे। मिस्र, सीरिया, फ़लस्तीन और अरब के प्रांत साम्राज्य से अलग हो चुके थे। टर्की स्वयं शत्रुओं के फ़ौलादी पंजे में पड़ा हुआ कराह रहा था। गवर्नमेंट की सत्ता टूट चुकी थी, चारो ओर अव्यवस्था और अनीति का दौरदौरा था।

यूनियन और प्राग्रेस-कमेटी समाप्त हो चुकी थी। इनवर तलात और जमाल दूसरे देशों में प्राणरक्षार्थ भाग गए थे। जाविद और दूसरे नेतागण लुक-छिपकर रह रहे थे। बूढ़े, अँगरेज़ों की चापलूसी करनेवाले तौफ़ीक़पाशा वज़ीरे-आज़म थे।

* * *

शत्रु का इतना छल-बल देखकर भी कमालपाशा ज़र्रा-भर भी न पसीजा, न डरा और न हताश हुआ। वह शत्रुओं से बहस करना चाहता था, उन्हें ज़्यादतियों के करने से रोकना चाहता था, लेकिन उसे सहायता करनेवाले ही न मिले। टर्कीवाले जर्मन-जंग में अधमरे हो गए थे। वे पूरी तरह से थक भी चुके थे, अतएव जैसे भी हो, वे लड़ाई के वायुमंडल को दूर कर सुलह और शांति के पक्षपाती थे। टर्कीवालों का शारीरिक और नैतिक ह्रास हो रहा था। मानापमान का विचार किए बिना वे दुनिया में ज़िंदा रहने की भीख माँग रहे थे।

पतन की इस परा काष्ठा को देखते हुए गुस्से से लालोलाल कमाल इज़्ज़तपाशा के समीप पहुँचा। वहाँ उसे इज़्ज़तपाशा के इस्तीफ़े के वास्तविक कारण का पता चला। शाह चाहते थे कि इज़्ज़त इनवर और तलातपाशा को पकड़वाकर अँगरेज़ों के सुपुर्द कर दे। इज़्ज़त ने एक सच्चे तुर्क के नाते ऐसा करने से इनकार कर दिया, और उन दोनो मशहूर टर्क राजनीतिज्ञों के भागने में सहायता भी दी। सुल्तान इससे चिढ़ गए। उन्होंने वयोवृद्ध इज़्ज़तपाशा को बहुत बुरा-भला कहा। इज़्ज़त ने कभी

किसी देश-वासी को पकड़कर शत्रुओं के सुपुर्द करने से इनकार कर दिया, और साथ ही प्रधान मंत्रित्व से इस्तीफ़ा पेश कर दिया।

"जो गया, सो गया।" कमाल ने इज़्ज़तपाशा से कहा—"अब अपनी मातृ-भूमि टर्की को बचाना होगा।" कमाल की सम्मति में उसका एक ही तरीक़ा था, और वह यह था कि इज़्ज़त फिर से वज़ीरे-आज़म बने, और कमालपाशा को अपना युद्ध-सचिव बनावे।

* * *

इज़्ज़त और कमाल ने मिलकर एक राजनीतिक दल की रचना की। कौंसिल के सदस्यों की ड्योढ़ियों की उन्होंने ख़ूब ही ख़ाक छानी। उन्होंने देखा कि अपना-अपना व्यक्तिगत स्वार्थ-साधन करनेवालों की अनेकानेक पार्टियाँ थीं। कोई अँगरेज़ों से मिली थीं, तो कोई फ़रासीसियों की ग़ुलाम थीं।

राजनीतिज्ञों ने कमाल की बातें सुनीं। सैनिक विजयों ने कमाल की पोज़ीशन बहुत कुछ बढ़ा दी थी। कमाल और इज़्ज़त ने देश की शोचनीय दशा का ख़ूब ही दिग्दर्शन कराया। अधिकांश मेंबरान इस बात से सहमत हो गए कि देश की रक्षा के लिये तौफ़ीक़-जैसे नाक़ाबिल वज़ीरे-आज़म को निकालना होगा। अविश्वास का प्रस्ताव कौंसिल में पेश किया गया, पर देश के दुर्भाग्य से वह पास न हो सका। जो सदस्य बाहर कमाल की हाँ-में-हाँ मिलाते थे, उनमें से अधिकांश ने

तौफ़ीक़ के पक्ष में वोट देकर उसी को वज़ीरे-आज़म बनाए रक्खा। कमाल उस दिन की कौंसिल की बैठक में सम्मानित दर्शकों की गैलरी में बैठा-बैठा ये करिश्मे देख रहा था। उस दिन के बाद से वह फिर कभी राजनीतिज्ञों के दरों पर वोट की भीख माँगने नहीं गया, और स्वयं ही शक्ति-संचय करने का निश्चय किया।

* * *

कमाल ने सुल्तान से भी भेंट की। कमाल अपने को सदा राजभक्त कहता था। वह अपनी मुख़ालिफ़त विदेशियों से ज़ाहिर करता और सुल्तान की रक्षा के नाम की दुहाई देता फिरता, अन्यथा उस परिस्थिति में कोई भी देश-हित का काम कर सकना असंभव था। शाह मन-ही-मन कमाल से ख़ुश थे, पर खुलकर कुछ न कह पाते थे, क्योंकि वह बड़े पोच और विदेशियों के ग़ुलाम थे। कमाल जो कुछ कर रहा था, अत्यंत गुप्त रीति से कर रहा था।

सुल्तान वहीदुद्दीन ने कमाल की ख़ूब ख़ातिर की। वह जानते थे कि सैनिकों के बीच यह सेनापति कितना प्रिय है।

सुल्तान ने पूछा—"क्या सारी फ़ौज सरकार की ख़ैर-ख़्वाह है?"

कमाल—"मेरे ख़याल में तो हुज़ूर, किसी फ़ौज ने कोई काम राजद्रोह का नहीं किया है।"

सुल्तान—"देखो कमाल, तुम्हारा फ़ौज में बड़ा रुतबा है।

क्या तुम्हें भविष्य में फ़ौज के राजभक्त बने रहने की पूर्ण आशा है ?"

कमाल—"ज़रूर है। कोई सबब नहीं कि फ़ौज विद्रोह करे।"

सुल्तान—"तब मैं इतमीनान करता हूँ कि तुम अपने महान् व्यक्तित्व को, फ़ौज को मेरे पक्ष में बना रखने के काम में लाओगे।"

इसके बाद सुल्तान से बिदा होकर कमाल अपने मुक़ाम को चला गया।

* * *

अब कमालपाशा इस तिकड़म में लगा कि अंतर प्रदेश में, अनातोलिया के पहाड़ों के बीच में, किसी उच्च सरकारी पद पर अपनी नियुक्ति करा ले; जिससे वह वहाँ अँगरेज़ों की आँख से बचे रहते हुए राष्ट्रीय सेनाओं का संगठन और संचालन कर सके। प्रधान मंत्री तौफ़ीक़पाशा भी कमाल की गुप्त हरकतों से आजिज़ आ गए थे, क्योंकि कमाल ने अपनी उपस्थिति में एक दर्जन से अधिक गुप्त संस्थाएँ क़ायम की थीं, और अंदर-ही-अंदर ऐसे संगठनों को बढ़ाते ही चले जाते थे। जब कमाल ने अनातोलिया जाकर शांतिमय जीवन व्यतीत करने की बात प्रकट की, तब वह बहुत ख़ुश हुए कि आख़िर इस कंबख़्त के पैर यहाँ से तो उखड़े। उसी समय अनातोलिया के इंस्पेक्टर जनरल, जो कमाल के मित्र थे, तंदुरुस्ती की ख़राबी और आबोहवा न माफ़िक़ होने की शिकायत करके

वहाँ से हटने का बंदोवस्त कर रहे थे। उनकी दरख़्वास्त मंज़ूर कर ली गई, और कमाल अनातोलिया का सबसे बड़ा अधिकारी बनाकर भेज दिया गया।

*　　　*　　　*

यह वह समय था, जब मित्र राष्ट्र लूट की बाँट के लिये आपस में लड़-झगड़ रहे थे। क़ुस्तुंतुनिया में ही अँगरेज़, फ़रासीसी और इटेलियन-प्रतिनिधियों में इस बात की चख़-चख़ चल रही थी कि टर्की में किस तरह अपने-अपने देशों को व्यापारिक और राजनीतिक विशेषाधिकार दिलाया जाय। इँगलैंड-वाले चाहते थे कि मेरे आगे किसी की दाल न गले। फ़्रांस-वाले कहते थे, वाह! हमने भी ख़ून बहाया है, हम भी बोटियों में पूरा हिस्सा बटाएँगे। इन्हीं बातों के कारण परस्पर मनो-मालिन्य बढ़ रहा था, और मन-ही-मन एक देशवाले दूसरे के शत्रु हो रहे थे। टर्की के लिये यही घड़ी सोने की थी। कमालपाशा इसे ताड़ गया। उसने गुप्त संगठनों के ज़रिए से हथियार इकट्ठा करना शुरू किया। इसके अलावा उसके कई मित्र ऊँचे-ऊँचे पदों पर थे, वे भी सहायक हुए। इस्मतपाशा, जो कमाल के जिगरी दोस्त और युद्ध-विभाग के उप-सचिव थे, फ़ेवज़ी-सैनिक-स्टाफ़ के चीफ़ थे, फ़तेह गृह-मंत्री थे, और रऊफ़ बे सैनिक बेड़े के प्रधान थे। ये सब लोग कमालपाशा के साथ मिले हुए थे, और देश को विदेशियों के चंगुल से छुड़ाने की अहर्निश गुप्त चेष्टा कर रहे थे।

अँगरेज़ कमाल से जलते थे। वे उस पर पूरा शुबहा करते थे कि किसी-न-किसी दिन यह सत्यानाश करेगा। अतएव वे उसे किसी बहाने राजधानी से टालकर जेलख़ाने में पटकना चाहते थे। अनातोलिया के गवर्नर के पद के लिये जब कमालपाशा चेष्टा कर रहा था, अँगरेज़ उसके भेजे जाने के विपरीत थे। वे उसे ख़तरनाक और क़ाबिल आदमी मानते थे, अतएव अँगरेज़ों की इच्छा थी कि उस उच्च पद पर कोई उल्लू का पट्ठा भेजा जाय, जो उनसे घूस खाकर या उनके दबाव में पड़कर उनकी उँगलियों पर नाचे। पर सुल्तान और वज़ीरे-आज़म दोनो ही कमाल की नियुक्ति के पक्ष में थे, अतएव वह अनातोलिया का गवर्नर बनाकर भेज दिया गया। प्रसिद्ध सेनापति रफ़तपाशा कमाल के साथ थे। सन् १९१९ की १९वीं मई थी, जब कमाल, रफ़त के साथ, काले समुद्र के समसुन-नामक बंदरगाह पर भयंकर आँधी और तूफ़ान के बीच उतरा था।

कमाल ने अपने चलने से पूर्व मन-मुताबिक़ शर्तें करवा ली थीं, जिससे वह पूरे एक साल के लिये अनातोलिया का डिक्टेटर ही वन गया था। उस प्रदेश में एक तो यूनियन और प्राग्रेसवाले जोर बाँधे थे, और दूसरे ग्रीक फ़ौजों के हमले होते रहते थे। चलते समय तौफ़ीक़पाशा ने पूछा था— "कहो कमाल, ग्रीक लोगों के हमले की ख़बर आने पर हम लोग तुम्हारी क्या सहायता कर सकते हैं?" कमाल ने इसका बड़ा मनोरंजक उत्तर दिया। आप बोले—"जो कुछ हो सकेगा, सो तो आप लोग करेंगे ही, पर जब कोई रास्ता न सूझ पड़े, तो मेरे पास अपने मंत्रिमंडल के सहित पधारकर फ़ौज में शामिल हो जाइएगा।" कमाल के हाथों में इस समय अनायास जो इतनी शक्ति आ गई थी, उससे देश का बड़ा काम होनेवाला था।

*　　　*　　　*

समसुन में अँगरेज़ी सेना का पड़ाव था। वहाँ वह जो कुछ करती थी, अँगरेजों को शाया हो जाता था। ग्रीक और आरमीनियन लोगों की आबादी भी वहाँ यथेष्ट थी, अतएव कमाल-पाशा के लिये गुप्त रीति से कोई कार्य कर सकना असंभव था।

अतएव वह अपना हेड क्वार्टर कवसा उठा ले गया। पर वहाँ भी ये ही झंझटें रहीं, अतएव वह पहाड़ों के बीच में, अमैसिया-नामक क़स्बे में, जो पूर्वीय और पश्चिमीय सड़कों का केंद्र था, जाकर डट गया। यहाँ वह अँगरेज़ों की गृद्ध-दृष्टि से परे था, और खुलकर अपने कंधों को फैला सकता था।

छ महीने तक कमाल ख़ामोशी की कोठरी में पड़ा रहा था, छ महीने तक उसकी ज़बान पर ताला पड़ा रहा था। पूरे छ महीने तक वह बेईमान राजनीतिज्ञों और विदेशी शत्रुओं को कोसता रहा था। वे ही सोते हुए विचार अब उसके अंतस्तल में जाग्रत् हो रहे थे। वह दाँत पीस-पीसकर घर और बाहर के दुश्मनों को चबा जाना चाहता था।

अब काम करने का मौक़ा मिला था। अब कमालपाशा बलवान् था। देश के शत्रुओं से भिड़ने के लिये उसके अंग-अंग फड़क रहे थे। वह शत्रु की संगठित मुख़ालिफ़त चाहता था, एक सच्चे देश-भक्त तुर्क के नाते ग़ुलामी के जीवन से वह मरना बेहतर समझता था।

देश के चारो कोनों से उसने सेना की ख़बर मँगाई। तार और टेलीफ़ोन से सेनापतियों पर अपने विचार अवगत किए। अनातोलिया में चार फ़ौजें थीं, एक योरपीय टर्की में थी, पर अँगरेज़ इनको भी तोड़ने जा रहे थे, और फ़ौज के हथियार ले लेना चाहते थे। पूर्व में क़ाज़िम कारा बेकरपाशा के आधिपत्य में विशाल सुसंगठित तुर्क-सेना थी। स्मरना के

पहाड़ों में रऊफ़ बे वीर पहाड़ियों को संगठित करके ग्रीक फ़ौज से मोर्चा लेने की सोच रहे थे।

कमाल ने सबसे पहले यह आवश्यक समझा कि मुख्य-मुख्य सेनानियों की राय जान ली जाय। उसने कमांडर रेफ़त को सिवास से बुलाया, अंगोरा से अलीफ़ऊद आया, और रऊफ़ बे स्मरना से आ गया।

मीटिंग की कार्यवाही बिल्कुल गुप्त रक्खी गई। कमाल ने देश की परिस्थिति समझाई। इस बात पर सबकी एक राय थी कि आत्मरक्षार्थ युद्ध करना ही चाहिए। उन्होंने एक सम्मिलित कार्य-क्रम बनाया। चूँकि सुल्तान बिल्कुल अँगरेज़ों के हाथ की कठपुतली थे, अतएव कमाल ने अनातोलिया में नई सरकार की आयोजना का प्रस्ताव किया। आख़िर बहुत बहस-मुबाहिसों के बाद इस शर्त पर प्रस्ताव पास हो गया कि ख़लीफ़ा सुल्तान की हस्ती को मेटने के लिये कमाल कुछ न करेगा।

कमेटी ने यह भी निश्चय किया कि सिवास में जल्दी-से-जल्दी अखिल टर्की-कांग्रेस बुलाई जाय, जिसमें देश के सब भागों से चुनिंदा-चुनिंदा प्रतिनिधि आवें। क़ाज़िम बेकरपाशा, जफ़र तैयर और कोनिया के जनरल प्रभृति महानुभावों को इन प्रस्तावों और कार्य-क्रम की सूचना तार से भेजकर उनकी सम्मति माँगी गई। दूसरे ही दिन उन्होंने सारी बातों की स्वीकृति दे दी। इस तरह कमाल ने फ़ौज को

अपने क़ाबू में कर लिया, यह कमालपाशा की पहली विजय थी।

* * *

इसके बाद कमाल देश को जगाने में जुट पड़ा। इस अवसर पर, समूचे प्रांत में घूम-घूमकर, कमालपाशा ने जो वक्तृताएँ दी हैं, वे मुरदों में भी जान फूँकनेवाली हैं। वह गाँव-गाँव में गया, सरकारी अधिकारियों से मिला, उन अफ़सरों को फिर इकट्ठा किया, जो फ़ौज से निकाले जा चुके थे। यत्र-तत्र सर्वत्र उसने अँगरेज़ों को रोकने की बात कही—"वे तुम्हारे दुश्मन हैं। अगर रोकोगे नहीं, तो वे टर्की को ही हड़प जायँगे। टर्की का अंग-भंग करके उसे मित्र राष्ट्र बननेवाले जीव खा जायँगे। सुल्तान शक्ति-हीन हैं, अँगरेज़ों के वश में हैं, दुश्मनों के हाथों में क़ैदी हैं। उन्होंने ही मुझे भेजा है कि तुम लोग उठो, जागो और हथियारों को हाथ में लेकर देश की लाज रक्खो, नहीं तो लुटोगे, बेइज़्ज़त होगे, तुम्हारी आँखों के सामने तुम्हारी बीबी और बच्चे दलित किए जाएँगे, क़त्ल किए जाएँगे। क्या तुम बैठे-बैठे ताकोगे, क्या तुम नपुंसकों की तरह ये अत्याचार बरदाश्त करोगे?"

प्रत्येक गाँव में उसने प्रतिनिधि-सभाएँ क़ायम कीं, और रक्षा की तजवीज़ बता दी।

काम कठिन था। टर्की थका और उदासीनता में डूबा

हुआ था। टर्कीवालों के दिलों से स्वाधीनता की उमंग का नशा जाता रहा था।

उसी जोश को फिर से जाग्रत् करना ही कमाल का काम था। नेता वही है, जो मिट्टी के पुतलों में भी जान फूँक दे। सेनापति वही है, जो भागती हुई फ़ौज को भी मारू बाजे की आवाज़ पर लौटा ले। कमालपाशा में नेतृत्व का सच्चा गुण था। उसमें सचाई थी, लगन थी, धुन थी, जीवट थी, और देश के लिये सब कुछ न्योछावर कर देने की भावना थी। ऐसे कमाल की बात को भला कौन न सुनता। लोगों में जोश आ गया, विदेशियों के प्रति गाँववालों में घृणा के भावों का संचार हुआ। प्रत्येक सैनिक, प्रत्येक सिपाही और उत्साही युवक अपने-अपने हथियार लेकर बाहर निकल आया, और कमालपाशा की राष्ट्रीय फ़ौज में शामिल हो गया। जनता के जोश को नेता कभी ठंडा नहीं पड़ने देता—कमाल ने भी यही किया। कमाल जिस प्रदेश में निकल जाता, उसका अज़ीमुश्शान स्वागत होता। वह वहाँ से लौटते समय, अपना निर्धारित काम करने के लिये, विश्वासी एजेंटों को छोड़ता जाता था।

वह पूर्वीय प्रदेशों में भी गया, जहाँ क़ाज़िमक़ारा बेकरपाशा अपनी विशाल वीरवाहिनी लिए आरमीनियनों और अँगरेज़ों से तुर्कों की रक्षा के लिये कटिबद्ध था। वह कमाल का सखा, साथी और सहपंथी था। टर्कों को उसकी छत्रच्छाया में सुरक्षित रहने का भरोसा था। कमाल की स्पीचें सुनकर उन्हें और

भी साहस मिला। १६ वर्ष से ऊपर का प्रत्येक बच्चा लड़ने-मरने के लिये कटिबद्ध हो गया।

कमाल उन दिनों सुल्तान का सबसे बड़ा फ़ौजी प्रतिनिधि था, सारा सैनिक-मंडल, सारा जनबल और वातावरण उसके अनुकूल था। उसने मिलीटरी-कमांडरों को शाहंशाह के नाम से हुक्म भेज दिया कि न तो किसी दस्ते को ख़ारिज किया जाय, और न एक भी हथियार अँगरेज़ों को सौंपा जाय। सरकारी अधि-कारियों को उसने हुक्म दे दिया कि स्वयंसेवकों की भरती प्रत्येक गाँव और ज़िले में की जाय, संगठन किया जाय, सैनिक शिक्षा दी जाय। विदेशी शासकों के अत्याचार के ख़िलाफ़ सभाएँ की जायँ, अमीर आदमियों से ज़बरदस्ती ज़्यादा टैक्स वसूल किए जायँ और वे सब सैनिक सामानों की तैयारी में लगा दिए जायँ।

* * *

कमालपाशा ने जिस तेज़ी से इन कामों को किया, वह सर्वथा प्रशंसनीय है। विद्युद्गति से वह एक-एक दिन में बीस-बीस जगह पहुँचता और कमेटियाँ क़ायम करवाता। जब तक क़ुस्तु-तुनिया में यह समाचार पहुँचा, कमाल पूर्वीय प्रांतों का दौरा समाप्त कर चुका था।

अँगरेज़ों ने कहा, हम बदला लेंगे। सुल्तान आग-बबूला हो गए। कमाल पर वह इतने गुस्सा हुए कि पाते, तो कच्चा ही चबा जाते। उन्होंने कमाल को इसलिये भेजा था कि विद्रोहानल को दबावे,

पर उल्टे उसने सुल्तान के नाम से ही बगावत का प्रचार किया, अँगरेज़ों के खिलाफ़ विष उगला। उन्होंने फ़ौरन् ही कमाल को वापस बुलाने का हुक्म दिया।

हुक्मनामा पाते ही कमाल ने एक लंबा-चौड़ा आज़िज़ी से भरा हुआ तार बादशाह को भेजा, जिसमें शत्रुओं से मुल्क को बचाने का इज़हार किया गया था।

पर सब व्यर्थ, दूसरे दिन सुबह सख़्त तार आया कि "कमाल-पाशा, तू तुरंत लौट आ, वरना तेरे हक़ में अच्छा न होगा।"

कमाल ने लौटने से इनकार कर दिया। "जब तक मेरा राष्ट्र स्वाधीनता नहीं प्राप्त कर लेता, तब तक मैं अनातोलिया में ही डटूँगा।"

सुल्तान ने कमालपाशा को गवर्नर और जनरल कमांडर के पद से डिस्मिस कर दिया, और सारे हाकिम-हुक्कामों और फ़ौजों को हुक्म भेज दिया कि कमाल का कोई हुक्म न माना जाय, अतएव कमाल ने स्वयं ही तार द्वारा इस्तीफ़ा भेज दिया।

कमालपाशा के सहायक और फ़ौजों के अफ़सरान इकट्ठे हुए। "हम लोगों के अब जुदे-जुदे रास्ते हैं।" कमाल बोले—"आज तक तो सुल्तान के नाम पर सब कुछ हो सकता था, होता रहा था, पर अब हम लोग अकेले हैं। केंद्रीय सरकार हमारे विरुद्ध है। संभव है, हम लोगों को आपस में ही लड़ना पड़े (it may mean civil war at all cost), हम लोगों को बड़ी-से-बड़ी क़ुरबानियाँ करनी पड़ेंगी, बड़ी-बड़ी जोखिमें उठाना

पड़ेंगी। एक बार स्वतंत्रता के संग्राम में शामिल हो लेने पर फिर पीछे क़दम नहीं रखना होगा, बगलें झाँकने या अफ़सोस करने का फिर मौक़ा न मिलेगा, क़फ़न को सिर में बाँधकर और जान को हथेली पर रखकर देश का काम करना होगा, वरना कुछ न हो पाएगा।

"आप लोग खूब सोच-समझ लीजिए, और अपना एक नेता चुन लीजिए। सफलता-प्राप्ति के लिये यह आवश्यक है कि सब कोई एक आदमी की बात माने—एक अच्छा सुयोग्य माँझी स्वराज्य की नाव का पतवार हाथों में ले।"

"अगर आप मुझे चुनते हैं, तो मेरी क़िस्मत के साथ अपना भाग्य-सूत्र बाँध दीजिए, सरकार मुझे बाग़ी क़रार दे देगी। एक मेरी शर्त है, और वह यह है कि मेरे हुक्म की पाबंदी पूरी तरह से करनी होगी। अगर आप लोग मुझमें विश्वास करके मेरे हाथों में शक्ति सौंपा चाहते हैं, तो जैसे जनरल-कमांडर की हैसियत से मेरी बातें मानी जाती रही हैं, वैसी ही अब भी मानी जायँगी।"

कमाल की ओजस्वी, तात्पर्य से भरी हुई बातें सुनकर उपस्थित वर्ग ने करतल-ध्वनि की। पीछे न हटने की सबने क़समें खाईं। मुस्तफ़ा कमाल को सबों ने सर्व-सम्मति से अपना लीडर चुना, और उसकी शर्तें मान लीं। हाँ, एक शर्त कर दी गई कि कमाल सुल्तान को उखाड़ फेंकने का तरीक़ा अख़्तियार न करें।

कमाल ने यह बात मान ली, पर कहा कि सुल्तान तो निकम्मे

देश-द्रोहियों और विदेशियों के हाथों का खिलौना हो रहे हैं, उससे उन्हें निकालने की हर तरह चेष्टा की जायगी, और इन लोगों के दमन के लिये हम लोगों की टोली भयंकर-से-भयंकर प्रहार करेगी। कमेटी ने यह बात एक स्वर से मंजूर कर ली।

मुस्तफ़ा कमाल ने सर्वत्र सूचना भेज दी कि सिवास में कांग्रेस की बैठक होगी। उस सूचना की इबारत इस प्रकार थी—

"मादरे टर्की ख़तरे में है—सुल्तान की सरकार बिल्कुल निकम्मी है, वह रक्षा कर सकने के नाक़ाबिल है, असमर्थ है। वतन की आज़ादी सिर्फ़ क़ौम की जुर्रत और ताक़त से बच सकती है। सिवास में बड़ी कांग्रेस करने का निश्चय हुआ है, जिसमें रक्षा के तरीक़े और रास्ते निकाले जा सकें। प्रत्येक ज़िला अपने तीन प्रतिनिधि भेजे। बहुत सावधानी और गुप्त रीति से काम किया जाय।

ह० मुस्तफ़ा कमाल

* * *

उस समय तक कमाल की 'पोज़ीशन' नहीं के बराबर थी। जब तक कांग्रेस न हो जाय, तब तक कांग्रेस के नाम पर कोई काम कैसे किया जाय। गवर्नमेंट की शक्तियाँ उसकी मुख़ालिफ़त कर रही थीं। कई जगह के अधिकारियों ने उसकी बात को मानने से इनकार कर दिया था, उन्हें मनाने के लिये कमालपाशा के पास कोई शक्ति नहीं थी।

क़ाज़िम कारा बेकर ने सलाह दी कि कांग्रेस होने से पहले ही

मिलीटरी लीडरों की एक सभा बुला ली जाय, और आस-पास के प्रदेश के डेलीगेटों को बुलाकर फ़िलहाल एक छोटी कान्फ्रेंस कर डाली जाय।

यही हुआ, एरज़ुरम में छोटी कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। बहुत लोग आए हुए थे, कमाल उनके बीच में बैठा हुआ परिस्थिति को समझा और सुलझा रहा था। कोई दो दिन की बैठक के बाद वातावरण साफ़ हुआ। आगंतुकों पर कमाल की सूझ-बूझ, सैनिक-शक्ति और साफ़-सुथरी स्कीम का बहुत प्रभाव पड़ा।

इसी बीच में क़ाज़िम कारा बेक़रपाशा के पास, जो कमाल के निकट ही बैठा हुआ था, सरकारी तार आया। तार क्या था, कांग्रेस को भंग कर, कमाल को गिरफ़्तार कर क़ुस्तुंतुनिया भेजने का शाही हुक्मनामा था।

उस समय देश का सारा भविष्य बेकरपाशा के हाथों में था। जब से १९१७ में कमाल ने बेकर के हाथों में अपनी फ़ौज का चार्ज सौंपा था, उसने निरंतर विजय प्राप्त की थी, और रूसियों को काकेशस के उस पार खदेड़ दिया था। सरकारी और फ़ौजी हल्कों में क़ाज़िम बेक़रपाशा का बड़ा रुतबा था।

देह से भारी, स्वभाव से सरल, बात का धनी, प्राचीनता का उपासक, सुल्तान का ताबेदार, बड़ा वीर, सच्चा और ईमानदार क़ाज़िम कारा बेक़रपाशा बड़ा दीनदार, सैनिकों का प्रिय और जनता का दुलारा था।

उसके हृदय में द्वंद्व-युद्ध मचा हुआ था। बेक़रपाशा ने कमाल

और रऊफ़ को बचन दिया था कि वह उनके कंधे से कंधा भिड़ा-कर देश का काम करेगा। उसकी राजभक्ति यह कह रही थी कि लीडरों को क़ैद कर ले, और राजधानी में ले जाकर अपने हाथों जल्लादों को सौंप दे। उसने तार को खुलासा मीटिंगवालों के सामने रख दिया, और अपनी परेशानी का भी बयान दे दिया।

कमाल के लिये बड़ा कठिन अवसर था, अगर राजभक्ति के भाव ने बेकरपाशा के मन में जोर पकड़ा, तो सारा क़िस्सा ख़त्म हो जायगा, माल्टा की काल-कोठरी या इस्तंबोल का जेलख़ाना उसका घर होगा।

उसने अपनी सारी शक्ति और योग्यता से बेकर को समझाना शुरू किया कि हम सब वफ़ादार हैं। सुल्तान के नहीं, पर अपने देश के भक्त हैं। सुल्तान और केंद्रीय सरकार विदेशी शत्रुओं के हाथों का खिलौना हो रही है, इस वास्ते जनता के हाथों में शक्ति आ गई है। जनता को अपनी रक्षा अपने आप करनी है। कुस्तुंतुनिया से आनेवाले हुक्मनामे दर असल सुल्तान के नहीं, अँगरेज़ों के होते हैं, जिन्हें मानने के लिये हम हरगिज़ तैयार नहीं हैं। शक्ति का वास्तविक केंद्र तो यह कान्फ़्रेंस है, जहाँ जनता के चुने हुए प्रतिनिधि इकट्ठा हैं। सिवास की कांग्रेस होते ही हम सब लोग उस राष्ट्रीय महा-सभा के हाथों में सारी ज़िम्मेदारी और शक्ति सौंपनेवाले हैं।

क़ाज़िम ने सारी बातें ध्यान से सुनीं। प्रत्येक उक्ति पर उसने विचार किया कि कहीं से उसकी लायलटी में तो बाधा

नहीं आती। सोचते-समझते वह एक नतीजे पर पहुँचा। एक बार निश्चय कर लेने के बाद बेकरपाशा के दिमाग़ को बदलना असंभव था। "यह अँगरेज़ों का हुक्म है, जिसे सुल्तान ने मजबूरन् भेजा है। टर्की के प्रति उसकी वफ़ादारी कहती है कि कमाल की मदद करे। वह कभी सुल्तान पर हाथ नहीं उठावेगा—उसकी हर तरह से शत्रुओं से रक्षा करेगा। मैं मुस्तफ़ा कमाल, रऊफ़ और तुम सब लोगों का साथ दूँगा।" क़ाज़िम कारा ने अपना निश्चय स्पष्ट शब्दों में कान्फ़्रेंस-भर को सुना दिया।

कान्फ़्रेंस की ख़ुशी का क्या ठिकाना, क़ाज़िम को लोगों ने हाथोंहाथ उठा लिया। कमाल ने आगे बढ़कर उसे गले लगाया। कान्फ़्रेंस ने एक कार्यकारिणी कमेटी बनाई, मुस्तफ़ा कमाल उसका चेयरमैन चुना गया। सिवास की कांग्रेस के लिये प्रस्तावों और मसविदों को बनाने और उन्हें कमेटी की ओर से पेश करने का भार कमाल को सौंपा गया।

सिवास की कांग्रेस में टर्की के सभी भागों से डेलीगेट आए। वे छिपकर, भेष बदलकर, राह-कुराह होकर, ऊँचे-नीचे पहाड़ों पर चढ़कर रात के अँधेरे में सफ़र के लिये चलते थे। केंद्रीय सरकार ने प्रतिनिधियों को पकड़कर रोक लेने की आज्ञा दे रक्खी थी। मुस्तफ़ा कमाल ख़ुद ही पकड़ा जाता, पर कुछ घंटों पहले ख़बर लग गई कि जिस राह से वह जानेवाला था, वहाँ शाही फ़ौज के मुख्य सिपाही लुक-छिपकर उसकी गिरफ़्तारी की तैयारी कर रहे थे। इस ख़बर के मिलते ही कमाल निश्चित समय से बहुत पहले ही पहाड़ी रास्ते से होकर सिवास के लिये चल पड़ा, और सही-सलामत सिवास जा पहुँचा।

प्रतिनिधि लोग कोई ख़ास स्कीम बनाकर नहीं आए थे। जैसा कि बहुधा हुआ करता है, वे घंटों बेकार की बातों पर बहस-मुबाहसा करते, कोई हाँ करते, कोई ना करते, कोई अँगरेज़ों से लड़ाई मोल लेना मूर्खता बतलाते, तो कोई मुल्क की रक्षा के नाम पर बहुत बक-झक जाते। लेकिन बहुत कम लोग ऐसे थे, जो अपने को ख़तरे में डालकर सुल्तान की सरकार और विदेशियों से मोर्चा लेना चाहते थे।

मुस्तफ़ा कमाल बड़े धैर्य से बड़े सब्र से उनके बीच में काम करता रहा। उन्हें समझाता रहा, उन्हें खुश करने का प्रयास करता रहा, देश की दुर्दशा का चित्र खींचता रहा, और वहीदुद्दीन की कमज़ोरियों का नज़्ज़ारा दिखलाता रहा। वह जानता था कि भविष्य की सफलता की कुंजी इसी कांग्रेस के हाथ में है। वह घंटों डेलीगेटों के साथ उनके कैंपों में बैठे क़ाफ़ी, क़हवा और ह्विसकी के कप ढालता रहता और प्रतिनिधियों से घुलने-मिलने का प्रतिक्षण प्रयास करता। कमाल में योग्यता के साथ-ही-साथ बोलने का भी बड़ा भारी गुण था। विचार-विनिमय, वाद-विवाद और व्याख्यान, कमाल का उन दिनों का अहर्निश का कार्य- क्रम था। धीरे-धीरे लोगों पर कमाल की बातों का प्रभाव पड़ा, उसकी लीडर-शिप का लोगों ने लोहा मानना शुरू किया। मुख़ालिफ़त कम होने लगी, लोगों का पाशा पर विश्वास जमने लगा। पर फिर भी ऐसे लोग मौजूद थे, जो कमाल के कंधों पर इतनी बड़ी ज़िम्मेदारी छोड़ते हुए सकुचाते थे। क़ाज़िम कारा बेकर और रऊफ़ ने कमाल को बहुत समझाया कि सारी ज़िम्मेदारियों के साथ वह कांग्रेस की चेयरमैन-शिप के लिये न खड़ा हो, पर कमाल ने अपनी शक्तियों का उन्हें विश्वास दिला दिया। वह धीरे-धीरे, बड़ी चतुरता और सावधानी से आगे बढ़ता गया। उसका दिमाग़ साफ़ था, और किसलिये वह आगे धँस रहा था, यह भी वह ख़ूब जानता था। उसके पास पूरी स्कीम तैयार थी, उसके व्यक्तित्व और उसकी सूझ-बूझ ने अंत में

लोगों को मोह लिया। कांग्रेस-कैंप में मुस्तफ़ा कमाल के नाम की तूती बोलने लगी। जिधर से वह निकल जाता, मजमा उठकर हाथ उठाकर आदर और प्रेम से उसका स्वागत करता था।

कांग्रेस का अधिवेशन हो रहा था कि गुप्तचरों ने ख़बर दी कि मलीशिया के गवर्नर के पास सुल्तान का तार आया है कि धर्मांध कुरदेशों को समझा-बुझाकर कांग्रेस पर चढ़ाई कर दे, उसे लूट ले, डेलीगेटों को क़ैद कर ले, और कमाल को फाँसी चढ़ा दे। ख़लीफ़ा सुल्तान समझता था कि कुरदेश बड़े धर्मांध हैं, जो कुछ ख़लीफ़ा कहेगा, उसे वे ज़रूर पूरा करेंगे। अलीगालिब (गवर्नर) ने सुल्तान के हुक्म के अनुसार कुरदेशों को भड़काना शुरू किया, पर इससे पहले कि उसका कार्य-क्रम पूरा हो पावे, कांग्रेस के सी०आई०डी०वालों ने कमालपाशा को आगाह कर दिया।

जब कमाल ने गुप्तचरों के बयान भरी कांग्रेस में बतलाए, तो प्रतिनिधियों के नथने फड़कने लगे। हमारी यह बेइज़्ज़ती कि हम जंगली कुरदेशों द्वारा गिरफ़्तार करवाए जायँगे। कांग्रेस ने कमाल को हुक्म दिया कि फ़ौरन् ही घुड़सवार-सेना भेजकर कुरदेशों को तितिर-बितिर कर दे।

खच्चरों और गधों पर चढ़कर कांग्रेस की फ़ौज मलीशिया पहुँची। कुरदेशों को हराकर उनके हथियार छीन लिए गए। अलीगालिब साहब सिर पर पैर रखकर न-जाने कहाँ भाग गए।

कमाल ने कांग्रेस में बड़े जलवे दिखलाए। वह जब बोलता था, तब आग बरसती थी, जब हँसता था, तब फूल झड़ते थे। जब वह अपनी अज़ीमुश्शान आवाज़ से मुल्क की बेहुर्मती का चित्र खींचने लगता तो लोग रो पड़ते। प्रतिनिधियों ने मान लिया कि मुस्तफ़ा कमाल सब तरह उनके नेता होने क़ाबिल था। कांग्रेस में पास हुआ कि इस अखिल टर्किश-कांग्रेस की आवाज़ मुल्क की सच्ची आवाज़ है। विदेशी शत्रुओं को मारकर देश के बाहर निकाल देना है। सुलह किन शर्तों पर हो सकती है, इसका मज़मून बना लिया गया, जिसका नाम नेशनल पैक्ट रक्खा गया। उन्होंने क़समें खाईं कि इनके अलावा किसी भी शर्त पर दुश्मन से समझौता न किया जायगा।

कांग्रेस के नाम पर काम करने के लिये कार्यकारिणी कमेटी बनी। कमालपाशा उसका सभापति निर्वाचित हुआ।

सुल्तान ने अलीगालिब को जो पत्र लिखे थे, वे दैवात् पकड़े गए। उन्हीं के साथ वज़ीरे-आज़म दामिद फ़रीद के भी पत्र मिले, जिसमें उन्होंने कुर्दों को उभाड़ने के हुक्म दिए थे। कांग्रेस ने क़ुस्तुंतुनिया को अल्टीमेटम भेज दिया कि फ़रीद को प्रधान मंत्रित्व से पृथक् किया जाय, और फिर से नया निर्वाचन किया जाय। जब कोई जवाब न आया, तो कमाल ने सारे टर्की पर कांग्रेस के अधिकार का बिगुल फूँक दिया। सारी सेना कांग्रेस के साथ थी, सेना के नायक कार्य-

कारिणी कमेटी के सदस्य थे, अतएव खटका काहे का था। हुक्म हो गया कि क़ुस्तुंतुनिया जानेवाले सारे तार और टेलीफ़ोन रोक दिए जायँ, तार काट डाले जायँ, सरकारी टैक्स कांग्रेस को भेजे जायँ, और जो अधिकारी इन बातों को न मानें, वे तुरंत निकाल दिए जायँ।

अब तो सुल्तान ढीले पड़े। क़ुस्तुंतुनिया सारे मुल्क से काट दिया गया। दायिद फ़रीद हटाए गए, और उनकी जगह सुल्तान ने अलीरज़ा को वज़ीर बनाया। नए चुनाव का हुक्म भी हो गया, जिसमें कांग्रेस ने अच्छी विजय पाई। बहुमत कांग्रेसवालों का हो गया। मुस्तफ़ा कमाल इरुज़रम की ओर से प्रतिनिधि चुना गया था।

कांग्रेस अंगोरा में हो रही थी, प्रस्ताव यह था कि पार्लियामेंट की बैठकें भी अंगोरा में ही हुआ करें। चूँकि कांग्रेसवालों ने पार्लियामेंट में अपना बहुमत कर लिया था, अतएव कांग्रेस को तोड़ दिए जाने का सवाल भी दरपेश था।

मुस्तफ़ा ने दोनो ही बातों का घोर विरोध किया। क़ुस्तुंतुनिया में जाकर पार्लियामेंट में शरीक होना वह ख़तरे से ख़ाली नहीं देखता था।

वहाँ तुम अँगरेज़ों के निमंत्रण में रहोगे—कमालपाशा बोला—तुम मनमाने प्रस्ताव न पेश कर सकोगे, न पास कर सकोगे, और मौक़ा पड़ने पर आसानी से गिरफ़्तार भी कर लिए जाओगे।

लेकिन मेंबर लोग न माने। वे बड़े ख़ुश थे कि पार्लियामेंट के शाही भवन में, राजधानी के बीचोबीच, जाकर बैठेंगे। बड़े ठाट रहेंगे, बड़ी शान रहेगी। सुल्तान से भेंट होगी, दावतें मिलेंगी।

पर कमाल ने क़स्तुंतुनिया जाने से इनकार कर दिया। कांग्रेस का मेंबर-मंडल रऊफ़ बे की लीडरी में क़स्तुंतुनिया चला गया। सुल्तान के प्रति लोगों में अच्छे भावों का संचार हो रहा था। जब से उसने पार्लियामेंट भंग की थी, और कांग्रेस-वालों को उसमें घुसने का मौक़ा दिया था, तब से अधिकांश कांग्रेसवाले सुल्तान के प्रति हमदर्द हो गए थे। देश चाहे जहन्नुम में जाय, वे तो आन, बान और शान के साथ सरकारी कुर्सियों पर जा डटेंगे। मालूम होता था, सुल्तान जीत गए, और कमाल अपनी चाल में हार गया। मेंबर समझते थे कि शाह अगुआ बनकर विदेशियों से लड़ने को आगे बढ़ेंगे।

उधर लोग पार्लियामेंट में जाने की तैयारियाँ कर रहे थे, और इधर कमाल अपने दफ़्तर में अकेले बैठा भविष्य का प्रोग्राम सोच रहा था। उसे निश्चय था कि पार्लियामेंट का यह अधि-वेशन भंग होगा। कांग्रेसवालों पर सरकार की ओर से मुसी-बत डाली जायगी। कोई बड़ी भारी क्राइसिस आवेगी, अतएव वह उसी आनेवाली कठिनाई से मुल्क की रक्षा करने का उपाय सोचने लगा, आदमी और सामान इकट्ठा करने लगा, हथियार

दुरुस्त होने लगे, और वह स्वयं फ़ौजों का निरीक्षण और संगठन करने में जुट पड़ा।

डिपुटी लोग (पार्लियामेंट के नए चुने हुए मेंबर) कुस्तुंतुनिया में खुशी-खुशी इकट्ठे हुए, एक दूसरे से मिले। किसी ने बधाइयाँ दीं, तो किसी ने इक़बाल के नारे लगाए। उन सबने मिलकर सुल्तान के पास अपनी राजभक्ति का समाचार भेजा, और सन् १९२० की जनवरी के दूसरे सप्ताह में काम में लग गए।

पार्लियामेंट के अधिवेशन जब होने लगे, तब कांग्रेसवालों की आँखें खुलीं। वे वहाँ टर्की के अधिकारों की रक्षा के लिये आए थे। सुल्तान और अँगरेज़ों की आज्ञा को मानने से वे इनकार कर बैठे। उनकी आँखों के सामने इँगलैंड की पार्लिया-मेंट के नज़्ज़ारे नाच रहे थे। अँगरेज़ों ने सख़्ती से कहा कि हमारे सब ऑर्डरों को मानना ही पड़ेगा। मित्र राष्ट्रों (अँगरेज़ों और उनके पलांयचों) के कमांडर ने कहा कि युद्ध-मंत्री को डिस्मिस कर दिया जाय। सुल्तान ने स्वीकार कर लिया, पर पार्लियामेंट ने इनकार कर दिया। कांग्रेस के प्रतिनिधियों ने अपने नेशनल पैक्ट को अँगरेज़ों के सामने रक्खा, जिसका आशय टर्की को स्वाधीन बनाना था। अँगरेज़ों ने 'हिश' कहकर उस मसविदे को रद्दी की टोकरी में फेंक

दिया, वह तो विजित विदेशियों के लिये सीधा चैलेंज था।

आख़िर वही हुआ, जो कमाल ने कहा था। एक दिन पार्लिया-मेंट-भवन के फाटक पर ताला डाल दिया गया। रऊफ़, फ़तेह बे प्रभृति कांग्रेस के नेतागण गिरफ़्तार कर लिए गए। अँगरेज़ों ने उन्हें माल्टा के टापू में नज़रबंद कर दिया।

जो लोग राष्ट्रीय विचार के थे, और जिन्हें मौक़ा मिला, वे भागकर अंगोरा पहुँच गए। इस्मत और फ़ेवज़ीपाशा वार-ऑफ़िस छोड़ भागे। प्रसिद्ध टर्किश लेखिका हलीदा और उसका पति अदनान भी किसी तरह ख़ुदा-ख़ुदा करते अंगोरा की सुरक्षित छाया के नीचे पहुँचे।

सुल्तान ने अच्छा मौक़ा देखकर ख़लीफ़ा की फ़ौज के नाम से भरती शुरू की। सुलेमान शौक़तपाशा को हुक्म दिया कि तमाम धार्मिक तुर्कों, मुल्लाओं और मौलानाओं की फ़ौज बनाकर जगह-जगह भेज दे, और ख़लीफ़ा के नाम की डुग्गी देश-भर में पिटवा दे। उसने मुल्क-भर के धर्म-गुरुओं को आदेश दिया कि जनता को सुल्तान का साथ देने को तैयार करे।

देश में दो दल हो गए। एक तो सुल्तान के पक्षवाले और दूसरे कांग्रेस की मदद करनेवाले। शहरों, क़स्बों, गाँवों और यहाँ तक कि घरों-घरों में विग्रह और कलह मच गई। बाप यदि सुल्तान के पक्ष में था, तो उसका जवान लड़का बादशाहत की

घोर मुख़ालिफ़त कर रहा था। भाई भाई का गला काटने लगा, तुर्क तुर्क को मारने लगा। बात कहते भयंकर मार-काट के साथ गृह-युद्ध शुरू हो गया। सुल्तान ने कांग्रेस को मटियामेट करने और कमाल तथा उसके साथियों का सिर काटकर लाने का खुलासा एलान निकाल दिया।

* * *

ये ख़बरें अंगोरा में दूसरे दिन शाम तक पहुँचीं। कमाल कृषि-कॉलेज की पथरीली इमारत के कमरे में बैठा हुआ दास्तान सुनने लगा, हलीदा, हदिब और अदनान उसके सामने बैठे थे।

लोगों की हिम्मतें पस्त थीं। सुल्तान के एजेंट मीठी-मीठी बातें करके धर्म के नाम पर टर्किश जनता को धोका देते फिरते थे।

पर मुस्तफ़ा कमाल अपनी पीठ को दीवार में सटाकर लड़ेगा। या तो देश को बचाकर जिंदा रहेगा, या इसी युद्ध में वह अपनी जान दे देगा।

दूसरे दिन खबर आई कि अंगोरा के आस-पास के गाँव बाग़ी हो गए, ख़लीफ़ा की फ़ौजवाले वहाँ पहुँच गए।

कुछ अमेरिकन लोग टर्की की स्वाधीनता की लड़ाई देखने के लिये अंगोरा पहुँचे हुए थे। उनमें से एक ने कमाल से पूछा कि यदि राष्ट्रीय पक्ष की हार हुई, तो वे क्या करेंगे? क्या देश छोड़कर अन्यत्र चले जायँगे?

कैसे हार होगी, कमाल गर्जकर बोला जो क़ौम, जो राष्ट्र

स्वाधीनता देवी की प्रसन्नता के लिये अपनी जान और माल की क़ुरबानी चढ़ाएगा, वह कैसे पराजित होगा। इस समय राष्ट्रीय-दल की पराजय के माने होंगे कि मुल्क मर गया।

लेकिन कमाल खूब जानता था कि उसका देश मुर्दा देश नहीं है, उसमें एक तेज़ी, एक रमक और एक जीवट बाक़ी है, जिसका नज़्ज़ारा शीघ्र ही सामने आनेवाला है। उसने घोषणा निकाली कि "जीतो या मिट जाओ, स्वाधीनता की ज़िंदगी का फल चक्खो, या गुलामी से तो यही बेहतर है कि दुनिया से अपना मुँह काला करो।" लोग गर्ज उठे। हुंकार मारकर आगे बढ़े, और निश्चय कर लिया कि सारी कठिनाइयों को पार करते हुए, रास्ते के झाड़ी-झंखड़ों और रोड़ों को दूर करते हुए आज़ादी की मंज़िल पार करेंगे।

कमाल उन दिनों रातोदिन व्यस्त रहता था, कभी न थकता, न आराम करता, न सोता, न पानी पीता। जो कुछ करता रातोदिन मेज़ पर बैठे हुए काम के बीच, बिना ध्यान दिए दो-एक क़ाफ़ी के प्याले चढ़ा लेता।

क़ुस्तुंतुनिया पर अँगरेज़ों के अधिकार की ख़बर देश में बिजली की तरह फैल गई। गिरफ़्तारियों की बाबत भी जनता में जानकारी हो गई। पार्लियामेंट बंद कर दी गई, सुल्तान ने देश को अँगरेज़ों के हाथ बेच दिया। ये ख़बरें गाँव-गाँव में फैल गईं—पहुँचा दी गईं। लोगों ने समझ लिया कि सुल्तान पर विश्वास करना ख़तरनाक था। मुस्तफ़ा कमाल सही रास्ते पर था।

देश का स्वाभिमान इस अपमान को गँवारा न कर सका। उसने हर तरह से, बड़ी-से-बड़ी क़ुर्बानी करके दुश्मन से मोर्चा लेने का निश्चय कर लिया।

फिर तो आनेवाले युवकों और युवतियों का ताँता बँध गया। हज़ारों ने अपना नाम वालंटियरों में लिखाया। किसानों की स्त्रियों ने तमाम हथियार और गोला-बारूद टोकरों में भर-भरके अंगोरा लाना शुरू किया। अच्छे-अच्छे घरानों की औरतों ने फ़ौज की वर्दियाँ बनाने और बीमारों की तीमारदारी करने का काम अपने ऊपर उठा लिया।

ख़लीफ़ा की फ़ौज के सिपाहियों को जब सच्चे अहवाल का पता चला, तो उनका मन भी भड़क गया। उन्होंने अपने मुल्ला अफ़सरों को मार डाला, और कमालपाशा का साथ देने का बहुतों ने निश्चय कर लिया।

कांग्रेस के तमाम मेंबरान क़ुस्तुंतुनिया से भागकर अंगोरा आ पहुँचे थे। वे बड़े शर्मिंदा थे, और अब कमाल की बात के क़ायल थे। वे अब लड़ने-मरने को आमादा थे। कमाल ने उनकी सहायता से अखिल टर्की राष्ट्रीय महासभा का उद्घाटन किया, और अंगोरा में नई पार्लियामेंट खोल दी। मुस्तफ़ा कमाल पाशा सर्व-सम्मति से उस पार्लियामेंट का प्रथम सभापति चुना गया।

कुछ दिन पहले अंधकार था, निराशा थी, और राष्ट्रीय दल के मेट दिए जाने का डर था। पर एक महीने के अंदर ही हवा का

रुख़ पलटा, बादशाह के प्रति घृणा का भाव फैला, और कमाल ने जनता के हृदय-मंदिर पर अपना अधिकार जमा लिया।

कमाल ने दूसरे राष्ट्रों के नाम एलान कर दिया कि "यह टर्की की राष्ट्रीय महासभा तब तक अंगोरा में बैठकर देश के भाग्य-चक्र का संचालन करेगी, जब तक क़ुस्तुंतुनिया विदेशी शत्रुओं के हाथ में रहेगा।

"क़ुस्तुंतुनिया, सुल्तान और उनकी गवर्नमेंट दुश्मनों के हाथों में हैं, अतएव देश उनका अधिकार नहीं मानेगा। सुल्तान ने देश को दुश्मनों के हाथ बेच दिया है, राष्ट्र उसका बदला लेगा।

"टर्क लोग बड़ी शांति, पर दृढ़ता-पूर्वक संसारवालों से यह कह देना चाहते हैं कि हम सबसे बाइज़्ज़त दोस्ती और सम-झौता चाहते हैं। जो भी हमारे देश पर पंजे गड़ाएगा, उससे हम लड़ने-मरने को कटिबद्ध हैं।"

जब लॉर्ड ग्रे ने इँगलैंड की पार्लियामेंट में कमाल के फ़िक़रों का मज़ाक़ उड़ाया, और टर्किश क़ौम को भेड़ और बकरियों के समुदाय की मिसाल दी, तो कमालपाशा ने तड़पते हुए उत्तर दिया—"अच्छा-अच्छा, बहुत बढ़-चढ़कर न बोल! हम तुझको दिखला देंगे कि हममें कितना बल है, हममें अँगरेज़ों की बराबरी की सामर्थ्य है, हममें मुल्क की इज़्ज़त रखने की क़ुव्वत है। हम कभी अँगरेज़ों के आगे अपना सिर न झुकाएँगे। आख़िरी दम तक, जब तक एक तुर्क भी ज़िंदा रहेगा, हम लड़ते रहेंगे,

और एक-न-एक दिन इनको मुल्क से निकाल देने में हम ज़रूर कामयाब होंगे।"

पेरिस की शानदार शाही इमारतों में संधि कान्फ्रेंस बड़ी आन-बान शान के साथ अपनी बैठकें कर रही थी। पाँच सौ से ज़्यादा दुनिया-भर के नामी-गिरामी पत्रकार और संवाददाता रिपोर्टों के लिये इत्तिहाद सभा के दफ़्तर को घेरे रहते थे। प्रेसीडेंट विलसन, मोशिए क्लीमेनकाउ और इँगलैंड के प्रधान मंत्री लायड जार्ज, मिल-जुलकर दुनिया के पुनर्गठन और पुनर्निर्माण पर देवताओं और फ़िरिश्तों की तरह विचार-विनिमय कर रहे थे, मानो वे ब्रह्मा, विष्णु, महेश की त्रिमूर्ति की तरह संसार के सर्वे सर्वा थे, पृथ्वीमंडल के विधाता थे।

उनमें से प्रत्येक इस चेष्टा में था कि येन केन प्रकारेण अपने देश का स्वार्थ-साधन करे। तीनो ही राजनीति-विशारद थे, तीनो ही लूट का बटवारा अपनी-अपनी मर्ज़ी के अनुसार चाहते थे।

टर्की के उपद्रवों को देखकर वे भन्नाते थे। अरे, टर्की तो महा-युद्ध में हार गया था, वह तो ख़तम हो गया था। फिर यह काहे का हो-हल्ला था।

उन्होंने मुस्तफ़ा कमाल की बाबत और उसकी दर्रे दानियाल की विजयों की बाबत कुछ-कुछ सुन रक्खा था। शाह का

विद्रोही, बगावत का झंडा ऊँचा करनेवाला यह पहाड़ी क्या हम लोगों से वैर मोल लेने का दुस्साहस करेगा।

उन्होंने टर्की के लिये एक सुलहनामा—अल्टीमेटम—तैयार किया। उसका नाम 'सेवरेस की संधि' रक्खा, और उसकी शर्तों को प्रकाशित कर दिया।

टर्की में जब ये ख़बरें पहुँचीं, तो दब्बू-से-दब्बू और माडरेट-से-माडरेट का भी दिल हिल गया। वह सुलहनामा नहीं था, टर्की की मौत का हुक्मनामा था।

"अनातोलिया टर्की में शामिल रहेगा, पर स्मरना काट दिया जायगा। तुर्कों का जीवन मित्र राष्ट्रों की देख-रेख में नियंत्रित रहेगा। आर्थिक प्रश्नों पर देश के रुपए-पैसे पर मित्र राष्ट्रों का कंट्रोल रहेगा। इँगलैंड, फ़्रांस, अमेरिका और इटली प्रभृति देशों के प्रतिनिधियों का एक कमीशन बैठेगा, जो टर्की की सेना पर अधिकार रक्खेगा, टैक्सों की देख-रेख करेगा तथा पुलिस, कस्टम और जंगलात पर अपना हाथ रक्खेगा।" इस तरह से सुल्तान के नाम-मात्र के शासन में रहते हुए भी वह हाथ-पाँव बाँधकर दुनिया के एक कोने में डाल दिया जायगा।

इन अपमानकारी शर्तों को सुनकर प्रत्येक स्वाभिमानी तुर्क का दिल तड़प उठा। फ़ौज, फ़ाइनेंस, कस्टम और देश के अमन चैन पर विदेशियों का अधिकार; टर्कीवाले बुज़दिले, निकम्मे, हिजड़े नहीं थे, जो इन सत्यानासी शर्तों को मान लेते। पाँच सौ साल तक वे बड़े भारी साम्राज्य का स्वामित्व करते

रहे थे। उनके पूर्वज क्या थे, उसका वे ज्ञान रक्खे थे। तुर्क कुछ भी हों, पर नपुंसक नहीं थे, ग़ुलामी के तौक़ को नहीं पहनना चाहते थे। वे परस्पर की फूट और कलह को भूल गए। उनके सारे दल एक हो गए। एक दूसरे की नुक़्ताचीनी और व्यक्तिगत स्वार्थों को एकदम भूल वे मुस्तैदी के साथ कमालपाशा के पीछे खड़े हो गए। जी-हुज़ूरों, माडरेटों और शाह के भक्तों ने ख़ूब समझ लिया कि कमाल जो कुछ कहता था, वह सही है। देश की स्वतंत्रता सच्ची देश-भक्ति, त्याग, सच्चाई और सेवा से ही उपलब्ध हो सकती है।

कमालपाशा की एक हुंकार ने रही-सही सुल्तान की फ़ौज का विनाश कर दिया। फ़ौज का बहुत बड़ा हिस्सा शाह के बाग़ियों में मिल गया। सिविल वार, आपस की लड़ाई-भिड़ाई और परस्पर की फूट ख़त्म हो गई। कमाल को सबने एक स्वर से अपना नेता एलान कर दिया। राष्ट्रीय पक्षवालों ने उस दिन से अपने को नेशनलिस्ट नहीं, प्रत्युत कमालिस्ट कहना शुरू किया। कमाल की कमांडरी में उन्होंने ग्रीक-फ़ौजों और मित्र राष्ट्रों से लड़ने-मरने का निश्चय कर लिया।

मुस्तफ़ा कमाल बिल्कुल तैयार था। उसने तुरंत एक युद्ध-समिति बनाई। बेकर सामी, अदनान, फ़ेवज़ीपाशा राष्ट्र-रक्षा, हथियार-संग्रह और स्टोर के प्रमुख बनाए गए। हश्मतपाशा फ़ौजी स्टाफ़ के चीफ़ नियुक्त हुए। बेचारे रऊफ़ बे, फ़तेह और दूसरे नेतागण तो माल्टा के इँगलिश जेलखाने में पड़े सड़ रहे थे।

दक्षिण में तुर्कों ने स्वयं ही हमला कर रही-सही फ़रासीसी सेना को पीछे खदेड़ दिया, और दुश्मनों को क्षणिक संधि कर लेने के लिये मजबूर किया।

पूर्व में क़ाजिम कारावेकर ने वह मार मारी कि आरमीनियनों का दिवाला निकल गया।

योरपियन टर्की से जनरल ज़फ़र तैयर ने हमला किया। एशिया की ओर से अली फ़ऊद ने सुल्तान के हमदर्दों और सहायकों को मार भगाया, तथा सीधा अँगरेज़ी फ़ौज के सामने पड़ाव डालकर डट गया। मौक़ा पाते ही उसने फिर वासफोरस के दक्षिण किनारे पर भीषण आक्रमण किया, और मित्रराष्ट्रों के कमांडर इन चीफ़ का जहाँ पड़ाव पड़ा था, वहाँ से ठीक एक मील की दूरी पर मोर्चाबंदी करने लगा।

अब सिर्फ़ क़ुस्तुंतुनिया और उसके आस-पास के प्रदेश पर दुश्मनों का अधिकार था।

मित्र राष्ट्र थके हुए थे। जर्मन-जंग के बाद उनके पैर भारी पड़ गए थे। वे लाचारी की हालत में थे। मित्र राष्ट्रों के त्रिमूर्ति राजनीतिज्ञ जब अपनी सुषुप्ति से जागे, तो देखते क्या हैं कि उनके ऑर्डरों को पूरा करने के लिये पूरी फ़ौज नहीं है। युद्ध के बाद लोग अपने-अपने मुल्क को वापस जाने की जल्दी में थे। प्रत्येक एक दूसरे से खौफ़ खाता था, प्रत्येक व्यक्ति राजनीतिक चालें चल रहा था। इटली में बोल्शेविज़्म फैलने लगा था, अतएव इटेलियन फ़ौजें अपने मुल्क वापस बुला ली गई

थीं। फ़्रांस ने सीरिया पर दाँत जमा रक्खे थे, और उसे जर्मनी के छक्के छुड़ाने थे, बदला लेना था, फ़्रांसवाले उस समय भी जर्मनी की शक्ति से डरते थे। अतएव वे अपनी फ़ौजों को कहीं बाहर भेजने के लिये तैयार नहीं थे। ब्रिटिश साम्राज्य में भी बड़े-बड़े उत्पात हो रहे थे, आयर्लैंड में ख़ूनी लड़ाई छिड़ी थी, मेसोपोटामिया और हिंदोस्तान में विद्रोहाग्नि सुलग रही थी, अफ़ग़ॉनिस्तान से वार छिड़ी हुई थी। अमेरिकावाले युद्ध से एकदम अघा गए थे, और अब कोई भी पार्ट लेने को तैयार न थे। सब अपनी-अपनी तू-तू मैं-मैं में पड़े थे, और इसलिये कौन टर्की में जाकर माथा-पच्ची करे। तुर्कों से लड़ना भी कुछ हँसी-खेल नहीं था, वे बहादुर थे और आज़ादी बनाए रखने को लड़ रहे थे।

क़ुस्तुंतुनिया में, मित्र राष्ट्रों की सेना में, दो-तीन हज़ार से ज़्यादा सिपाही नहीं रह गए थे। मालूम होता था कि टर्की के गर्दिश के दिन बीत गए, और अब शीघ्र ही कमालपाशा राजधानी पर हमला कर, दुश्मनों को बोरिया-बसना बाँधकर अपने-अपने देशों का टिकट कटा लेने को मजबूर कर देगा।

प्रेसीडेंट विल्सन, लायड जार्ज और क्लीमेनकाउ कान्फ्रेंस की टेबिल के चारो ओर बैठे हुए एक दूसरे को आश्चर्य और लाचारी से देख रहे थे। आखिर यह हो क्या रहा है। थोड़े-से असंगठित तुर्क विद्रोही सरदार कमालपाशा की अध्यक्षता में मित्र राष्ट्रों को टर्की से बाहर निकाल देने पर आमादा हैं; अरे भाई विल्सन, कहो भाई लायड जार्ज, हाँ बोलो प्यारे क्लीमेनकाउ, हम क्या करें, हम क्या करें, हम क्या करें।

विजित मित्र राष्ट्रों का यह अपमान—हाय! हम लोग जान रहते कैसे बरदाश्त करें, इस कंबख़्त कमाल को कैसे रोकें, कैसे तुर्कों के बीच फूट डलवाएँ, और किस तरह अपनी शान-शौक़त और इज़्ज़त बचावें।

"क्या कोई है, जो हमें इस संकट से उबारे ?"....ठीक उनके पीछे ही ग्रीक देश के प्रधान मंत्री टर्कों के चिर-शत्रु मोशिए वेनी जुलस बैठे हुए थे। वह इस चीत्कार को सुनकर बड़े अदब और लिहाज़ से खड़े होते हुए बोले—"जनाव, श्रीमान् अन्नदाता भगवान्, यह कितनी बड़ी बात है, अपनी कुछ तोपें, कुछ मोटरें और गोला-बारूद मुझे दे दीजिए, अना-तोलिया का उर्वर प्रदेश ग्रीक साम्राज्य में शामिल कर देने का

वादा कीजिए, और कुस्तुंतुनिया को टर्की से जुदा कर ग्रीक साम्राज्य का केंद्र बना दीजिए, बस फिर मैं सब कर लूँगा—मैं और मेरे आदमी टर्की को तबाह कर देंगे।"

"अच्छा तो है"—एक ने दूसरे और दूसरे ने तीसरे की ओर देखकर कहा। लड़ाई का बहुतेरा बचा-खुचा सामान पड़ा है, उसे उठा ले जा, बाक़ी सब ठीक कर दिया जायगा। जल्दी जा।

* * *

मित्र राष्ट्रों का साहाय्य पाकर ग्रीक-सेनाएँ आगे बढ़ीं। सन् १९२० की २३वीं जून थी। ग्रीक-सेनाएँ ताज़ी, संगठित और मित्रों की सहायता के जोम में थीं। उन्होंने कई जगहें फ़तेह कीं। थ्रेस पर क़ब्ज़ा किया, जफ़र तैयर को गिरफ़्तार कर लिया, एड्रिया इनोपिल पर अधिकार जमा लिया, और प्रायः सारे योरपीय टर्की को पद-दलित कर दिया।

मित्र राष्ट्रों के हुक्म से ग्रीक-सेनाओं ने इस्करी शहर और अफ़्यून के आस-पास अपना पड़ाव डाल दिया। खाइयाँ खोदी गईं, मोर्चेबंदी की गई। यहाँ पर कोई छ महीने तक ग्रीक-सेनाएँ पड़ी रहीं।

सन् १९२० के अंतिम काल में स्थिति यह थी कि क़ुस्तुंतुनिया में सुल्तान की कमज़ोर सरकार चरमरा रही थी। मित्र राष्ट्रों से सुल्तान की संधि थी, मैत्री थी, अतएव ग्रीक-सेना सुल्तानियत की रक्षा के लिये पड़ी थी। वहीं वेनी ज़ुलस ने देखा कि क़ुस्तुंतुनिया को ग्रीक-साम्राज्य में मिलाने का विचार

केवल स्वप्न के बराबर था। मित्र राष्ट्रों के मन में कुछ और ही था। कमज़ोर, बुज़दिल, देश-द्रोही सुल्तान को तख़्त पर बैठाए रहने में ही अँगरेज़ों के व्यापार और प्रभुत्व का साधन चल सकता था। कमालपाशा ससैन्य पहाड़ों में चला गया था, और ऐसी मोर्चेबंदी कर रहा था कि दुश्मन किसी तरह उनमें से होकर गुज़र न पावे। दर्रे-दर्रे पर उसके वीर सैनिक डटे थे। पहाड़ों की ऊँची चोटियों पर, प्रत्येक रक्षा के स्थल पर कमालिस्ट दलवाले इंतज़ाम किए बैठे थे। पर इसमें शक नहीं कि वे उदासीन थे, पराजय का अनुभव कर रहे थे, और जैसे भी हो, वैसे संगठित, सबल और सतर्क रहते हुए सेना की संख्या को बढ़ाने का बंदोबस्त कर रहे थे। स्वाधीनता का संग्राम वर्षों चलता है। तुर्कों के दिलों में वह आग सुलग चुकी थी, जिसकी ऐसे मौक़े पर ज़रूरत हुआ करती है। जब दिल आज़ाद है, तब क्षण-भर के लिये भले ही शरीर को जकड़ दिया जाय, पर कहीं रूह को भी क़त्ल किया जा सकता है? आज़ादी या मौत का जो बाना पहन लेते हैं, उन्हें पामाल करना, उन्हें वश में करना, एक क्या ब्रह्मांड-भर की शक्तियों के लिये असंगत और असंभव है।

(३१—३५)

ग्रांड नेशनल एसेंबली की मीटिंग हुई। टर्की पर आफ़त आई थी। उससे किस तरह मुल्क को बचाया जाय, कैसे देश की रक्षा की जाय—सबों की ज़बानों पर एक ही बात थी।

किसी ने क़िस्मत को कोसा, तो किसी ने कमाल को कोसा। हमेशा लड़ाई-भिड़ाई, अशांति और विग्रह—आख़िर यह कब तक चलेगा। देश इतना भार कब तक बरदाश्त करेगा।

"तुम लोग तुर्क हो या और कुछ हो।" कमाल ने दहाड़ते हुए कहा—"जो तुम्हारे अधीन और ग़ुलाम थे, आज तुम उनके आगे घुटने टेक देना चाहते हो। ग्रीकों के आगे रेंगना, ज़लील होना, बेइज़्ज़त होना क्या तुम क़बूल करोगे? मैं विश्वास नहीं कर सकता कि तुम लोग इतने पतित हो गए हो। उठो, जागो, मत-भेदों क भुलाकर एक हो जाओ, फिर विजय तुम्हारी है—यह क़तई यक़ीन रक्खो।"

कमाल के ये शब्द जादू कर गए। एसेंबलीवाले प्राण-पण से आख़िरी दम तक कमाल का साथ देने को कटिबद्ध हो गए।

जिसने भी कमाल से सुलह कर लेने का प्रस्ताव

कमालपाशा उस पर उबल पड़ा। बुज़दिला, देश का दुश्मन और हरामी इत्यादि शब्दों से उसकी मिज़ाज-पुरसी कर अपने पास से फ़ौरन ही हट जाने को कहता था।

फ़्रेंच गवर्नमेंट के प्रतिनिधि से एक दिन आप बोले कि लिख दे अपने मुल्क को कि "हम लोग टर्की की ज़मीन का एक चप्पा भी दुश्मनों के हाथ में नहीं जाने देंगे। स्वाधीनता तो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।"

*   *   *

इनू की लड़ाई में कमालिस्ट जीते। उनकी आशाएँ बढ़ने लगीं, उनके हौसले ऊँचे होने लगे।

ख़बरें भी अच्छी थीं। क़ाज़िम कारा बेकर ने आरमीनियनों को हराया था, और बोल्शेविकों से मिल गया था। रूस डटकर रुपए और हथियारों की मदद दे रहा था। इँगलैंड, टर्की और रूस दोनो ही का जानी दुश्मन था।

ग्रीस में गृह-कलह बढ़ रही थी, फ़ौज में अशांति फैल रही थी। वेनीज़ुलस दलवालों के हाथ से शासन की शक्ति जा चुकी थी।

इँगलैंड, फ़्रांस और इटली अपने-अपने देशों में इतने व्यस्त थे कि वे तटस्थ रहे। फ़्रांस और इटलीवाले ग्रीकों की तरफ़ से हमदर्दी कम कर रहे थे। इटली के कारख़ानेवालों ने तो टर्की के हाथ हथियार तक बेचे थे। फ़ारस और अफ़ग़ा-निस्तान से हमदर्दी के समाचार आ रहे थे, और हिंदोस्तान के

मुसल्मान भी "टर्की ख़तरे में है" की आवाज़ बुलंद किए थे। तुर्क ख़ुद भी संगठित हो रहे थे। यह निश्चय था कि कभी-न-कभी ग्रीक-सेना ज़ोरों का हमला करेगी। वह अभी तक हस्करी शहर तक खाइयाँ खोदे और पड़ाव डाले पड़ी थी।

एसेंबली के मेंबर लोग बात-बात में अपना अधिकार जमाते थे। वे अपने को टर्की के भाग्य का विधाता और देश का सच्चा मालिक समझते थे। कमाल को प्रत्येक कार्य उनसे पूछकर करने पड़ते थे।

कमाल बहुधा झुँझला जाता था। उन अकर्मण्यों की मूर्खता-पूर्ण बातचीत और प्रभुत्व-प्रियता से वह बड़ा रुष्ट था। पर मौक़ा दूसरा ही था, क्या करता। हाँ, कभी-कभी अपने नज़दीकी मित्रों से वह अपने ख़यालातों का इज़हार कर देता। वह चाहता था कि सब कोई मेरा ऑर्डर मानें, मेरी सम्मति से चलें। मैं जैसा कहूँ, वैसा करें, कोई चूँ-चरा न करे।

हश्मत और फ़ेवज़ी उसके बड़े अच्छे साथी थे। जब कमाल होटलों में दिल-बहलाव के लिये सुंदरी और सुरा के सेवन में लीन होता, तब ये दोनो बड़ी सतर्कता-पूर्वक फ़ौज और व्यवस्था की बागडोर अपने हाथों में रखते। कमाल की सूझ-बूझ और शक्ति के ये क़ायल थे, और उसे अपने दिल से लीडर—अपना नेता—मानते थे।

कमालपाशा का स्वभाव शुरू ही से झक्की है। जब उसके पास काम कम होता है, तब उसकी बक-झक, ग़ुस्सा और बेफ़ायदे

का वाद-विवाद बहुत बढ़ जाता है। उसके साथियों का कथन है कि रात में नौ बजे से लेकर सुबह पाँच बजे तक भी बात करते रहने पर कमाल नहीं थकता है। सचमुच कमाल की जीवन-शक्ति अद्भुत है, वह बड़े जीवट का आदमी है।

* * *

हस्करी शहर के पिछाड़ी, कराजा बे के गाँव में टर्की-सेना का हेडक्वार्टर था। इश्मतपाशा बड़ी सरगर्मी से प्रधान को हैसियत से फ़ौज का बंदोबस्त कर रहा था।

बहुत दिन हो गए, पर ग्रीक-फ़ौज का हमला कम न हुआ। उसको न तो पीछे हटाया जा सका, और न उसका बल ही नष्ट किया जा सका। इश्मत काम करते-करते परेशान हो गया था, थक गया था। कमालपाशा अंगोरा में था।

क्या करे, क्या न करे। इस जगह को छोड़कर पीछे हटे, या हमला करके कट मरे, इश्मत की समझ में कुछ न आया।

हटने के माने यह होंगे कि बिना लड़े-भिड़े हम मातृभूमि को और अपने हज़ारों बच्चों को दुश्मनों के पैरों-तले रौंदे जाने के लिये छोड़ जायँगे। टर्की की महिलाएँ और मासूम बच्चे दुश्मनों की तलवारों का शिकार होंगे।

इश्मत ने तार किया कि आप आइए। अर्थात् मुस्तफ़ा कमाल ही हमारा मालिक है। हम तो उसके मातहत और

ग़ुलाम हैं। वही आकर कोई रास्ता दिखाएगा, हम तो द्विविधा में पड़े हुए हैं।

*   *   *

कमाल ने एक क्षण भी न खोया। वह शीघ्र-से-शीघ्र आया। आते ही सारी ज़िम्मेदारी उसने अपने कंधों पर ले ली। इस्मत को राहत मिली। फ़ौज को नई रोशनी मिली। कमालपाशा की शख़्सियत ने मुरदों में भी जान फूँक दी।

बहुत-से लोग ऐसे होते हैं, जिनकी बातों से भय और पराजय का आभास मिलता है। दूसरे ऐसे होते हैं, जिनकी उपस्थिति से प्रकाश फैलता है, आशा का संचार होता है। उनकी बातों से आशा और कार्यों से विजय-वार्ता टपकती है। कमालपाशा ऐसी ही श्रेणी का आदमी है, जिसकी डिक्शनरी में असफलता और निराशा के शब्द ही नहीं हैं। ये लोग जिस जीवन के पथ में निकल जाते हैं, उत्साह और स्फूर्ति के आदर्श बनकर काम करते हैं।

मुस्तफ़ा कमाल ने पहुँचते ही देखा कि "पोज़ीशन ख़तरे से ख़ाली नहीं है। वर्तमान मोर्चे को छोड़कर पीछे हटने में ही कल्याण है। चाहे जितने तुर्कों को मरने के लिये पीछा छोड़ना पड़े और कोई चारा नहीं है अन्यथा टर्की की फ़ौज के नष्ट हो जाने का ख़तरा है।"

Evacuate Eskri Shahr atonce. Order a general retreat. Retire back theree hundred Kilo-

metres to the Sakkaria river and prepare a new position. No loss is too great to protest Angora. We shall win.

फ़ौज पीछे हटने लगी। कमाल फ़ौरन् ही अंगोरा लौट गया, जहाँ एसेंब्ली की बैठकें हो रही थीं। एसेंब्ली ने तीन महीने के लिये कमालपाशा को सारी शक्तियाँ देकर टर्की का डिक्टेटर, कमांडर-इन-चीफ़ बना दिया। ऐसे ख़तरे के अवसर पर इसके सिवा कोई रास्ता ही नहीं था।

कमाल ने ज़िम्मेदारी को अपने सबल कंधों पर ले लिया। कमाल आशादेवी की दी हुई दानवी शक्ति से, उत्साह और लगन के साथ जुटा हुआ था। एक दिन वह घोड़े से गिर पड़ा। पूरा हफ़्ता हो गया, रात-रात-भर न सोया। पिंडलियों में दर्द था, शरीर में बुख़ार था, पैर में चोट थी। जुलाई की धूप देखकर छाँह भी भाग रही थी, पर उससे क्या, कमाल के साहस और उत्साह में कोई कमी न पड़ी। ज्यों-ज्यों कष्ट पड़ता, त्यों-त्यों उसके जलवे खुलते और प्रकृति-दत्त अमानुषिक शक्तियाँ प्रकट होतीं। वह ऐसा एंजिन था, जिसमें तमाम गाड़ियों को घसीट ले जाने की शक्ति थी। एसेंबली के मेंबरों, मित्रों, कार्य-कर्ताओं और हज़ारों देश-भक्त युवकों को लेकर वह सकरिया-नदी के पड़ाव पर पहुँच गया, जहाँ उसकी हटती हुई सेना मोर्चाबंदी करनेवाली थी।

सक़रिया-नदी पहाड़ों और पहाड़ियों के बीच से गुज़री थी। उसका जल निर्मल था, प्रवाह भी यथेष्ट था—ऐसा कि आदमी की तो बात ही क्या, बड़े-बड़े भूधराकार पत्थरों को भी उसमें क़लाबाज़ियाँ खाना पड़तीं। नदी को पार करना कुछ आसान काम न था।

इन्हीं पहाड़ियों के बीच से अंगोरा जाने का दर्रा था। ऐसी सीधी राह थी कि ग्रीक-सेना के लिये फिर तो कोई रुकावट ही नहीं थी। २४ अगस्त (सन् १९२१) को गोला-बारी करते हुए ग्रीकों ने तुर्कों पर हमला बोल दिया।

दोनो ऐसे लड़े, जैसे दो मुर्ग़े और साँड़ लड़ते हैं। उस युद्ध को देखकर कोई कौरव-पांडवों की लड़ाई की याद करते और कोई राम-रावण-युद्ध की मिसालें देते थे। दोनो युद्ध के जोम में पागल हो रहे थे। दोनो एक दूसरे के प्रति विद्वेष से जले हुए थे। तुर्क तो आत्मरक्षा के लिये लड़ रहे थे, और ग्रीक अपने देश की सीमा तथा गौरव बढ़ने के लिये कटिबद्ध थे। उस युद्ध में दोनो ओर के बहुतेरे सिपाही काम आए, आधे दर्जन से ज़्यादा सेनापति मारे गए। किसी का भेजा निकल पड़ा था, तो किसी के हाथ-पाँव उड़ गए थे। युद्ध की दानवी

लीला के नज़ारे उस रणस्थल में बाहुल्यता से दृष्टिगोचर होते थे।

इसी तरह पूरे चौदह दिन बीत गए, और दो में से कोई पीछे न हटा। खाद्य पदार्थों की कमी पड़ रही थी। सूर्य की तेज़ किरणें त्राहि-त्राहि मचवाए थीं। कभी-कभी पानी के न मिलने से ऐसी छटपटाहट होती कि सारी फ़ौज की जान मुसीबत में आ जाती, पर फिर भी ग्रीक-सेना हमला करने से बाज़ नहीं आती थी, और तुर्क-फ़ौज चट्टान की तरह अड़ी हुई उसे आगे नहीं बढ़ने देती थी।

अलागूज़ के गाँव में, ठीक टर्किश लाइन के पिछाड़ी, कमाल का हेड क्वार्टर था। मुस्तफ़ा कमाल बड़ी बेपरवाही से कमरे में टहल रहा था। उसके शरीर पर एक मोटा ख़ाकी ड्रेस था, चेहरा पीला पड़ रहा था, पर आँखों में बड़ी तेज़ी थी। उसका दिल चोट खाया हुआ, तड़पा हुआ था।

नींद और भूख हराम हो रही थी। चौबीसो घंटे वर्दी शरीर पर कसी रहती। नक़्शे मेज़ पर फैले रहते। चिंता घेरे रहती। रिपोर्टें आती रहतीं, जिनके आधार पर क्षण-क्षण पर भाव-भंगी बदला करती।

रात में जब युद्ध की रफ़्तार सुस्त पड़ जाती, तब वह लैंप जलाकर दूसरे दिन के प्रोग्राम की रचना करता। ग्रीक इन-इन स्थलों से आक्रमण करेंगे, फिर उनसे कैसे बचा जायगा। उसका मित्र आरिफ़ और वह गंभीर विषयों पर वाद-विवाद करते

और कल के लिये कार्य-क्रम निश्चय करते। आरिफ़ सारे रण-क्षेत्र से ख़ूब वाक़िफ़ था। वह अपनी फ़ौज के सारे क़प्तानों को भी ख़ूब जानता था। अमुक आदमी भगोड़ा है। अमुक आख़िर तक डटा रहनेवाला है। जब तक उसके दम में दम है, तब तक वह पीछे क़दम नहीं हटावेगा। गोला-बारूद जब ख़त्म हो चुकेगी, तब वह अपने फ़ौजियों के साथ किरचों और संगीनों से लड़ेगा।

इसमें कोई शक नहीं कि टर्की के लिये ख़तरे की घड़ी आ पहुँची थी। अगर सिक़रिया के मोर्चे पर शिकस्त हुई, तो अगोरा तो चला ही जायगा, सारी टर्की भी बरबाद हो जायगी। शत्रु के पार करने के लिये यही आख़िरी खाई थी। दुश्मन भी हताश हो रहे थे। इतने दिन हो गए, और वे चप्पा-भर भी आगे न बढ़ सके। कमाल कभी उन पर आक्रमण कर देने की बात सोचता, तो कभी सेना की दशा देखकर चिंतातुर हो उठता। इस समय तो रिज़र्व फ़ौज में भी ज़्यादा सिपाही नहीं थे। जो भी थे, वे कमाल की संरक्षता में जहाँ भी ख़तरे का मौक़ा आता, जाकर, घुसकर उसकी रक्षा करते। कमालपाशा एक चरवाहे की तरह टर्की-सेना को हाँक रहा था। उसके व्यक्तित्व और सैनिक ज्ञान के प्रभाव से तुर्क अंतिम समय में भी आशावादी बन हुए थे कि शायद आख़िरी मौक़े पर हमारे नायक ऐसी आयोजना करेंगे, जिससे हम विजयी बनकर संसार के सामने गौरवान्वित हो सकेंगे। कमाल के

प्रति टर्किश सेना का विश्वास अपार था। उसके साथ की फ़ौजों ने बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ जीती थीं। उसने हारें जीत में परिणत कर दी थीं। यदि उस घड़ी कहीं कमाल को कुछ हो जाता, तो निस्संदेह फ़ौजें भाग खड़ी होतीं। कमाल अपनी सेना का नैपोलियन था, अलेग्जेंडर था, राणा प्रताप था, जिसके वीरत्व और व्यक्तित्व की आभा से सारा रण-क्षेत्र जगमग कर रहा था।

*　　　*　　　*

आखिरकार वह मौक़ा आ गया, जिससे बचकर निकलना असंभव था। जय या पराजय यह तो भाग्य का खेल था।

रात में दो बजे हुए थे, सर्वत्र सन्नाटा छाया हुआ था। कभी-कभी गोलों के फटने या इक्का-दुका बंदूकों के चल जाने से गुड़ाम-धड़ाम की आवाज़ें हो जातीं। सैनिक खाइयों के नीचे पड़े सो रहे थे, संतरी पहरा दे रहे थे, मुर्दे मुँह बाए पड़े थे, घायल कराह रहे थे। भेड़िए और सियार उनके शरीरों से मांस के टुकड़े नोच-नोचकर 'हुवा-हुवा' करके रणचंडी का गान कर रहे थे। दोनो ओर के लोग निराश थे, उदासीन थे।

इसी समय कमालपाशा के कमरे में एक अफ़सर आया। मुस्तफ़ा वैसे ही औंधाया था। सलाम की, और बोला—"जनाब, फ़ेवज़ीपाशा आपसे कुछ कहना चाहते हैं। वह टेलीफ़ोन पर खड़े हैं।"

कमाल उठा, और टेलीफ़ोन के बंद कमरे में गया। रिसिवर को हाथ में उठा कान से लगा बोला—"कहो फ़ेवज़ी, क्या ख़बर है?"

फ़ेवज़ीपाशा—"स्थिति आशा-जनक है। मौक़ा अच्छा है। ग्रीक-सेना पस्त हो गई है। उसका पीछे हटने का विचार है। गुप्तचर ने अभी-अभी समाचार लाकर दिया है।"

"क्या तुम्हें भी विश्वास है?"

"हाँ।" फ़ेवज़ी ने कहा—"यह ख़बर क़तई ठीक है। सुबह होतें-होते आप देखेंगे कि वह पीछे हट रही है। सफ़रमैना की पल्टन तो रवाना भी हो गई है।"

"तो फिर देरी का कोई काम नहीं। रिज़र्व फ़ौज के साथ उन पर हमला बोलना चाहिए, और उनको इस अव्यवस्थित हालत में इतना पीछे खदेड़ देना चाहिए, जिसमें निकट भविष्य में उनके आक्रमण का भय न रहे।"

कमाल ने एक प्याला काफ़ी का मँगाया, पिया; और घोड़े पर सवार हो युद्ध-भूमि का रास्ता लिया।

बड़े चुपके से, रात्रि के घनघोर अंधकार के आवरण में तुर्की-सेना हटते हुए दुश्मनों पर हमला करने के लिये चल पड़ी। ग्रीक क्या जानते थे कि रात ही में यह आफ़त बरपा होगी। नदी को ऐसी जगह से पार किया, जहाँ प्रवाह का ज़ोर बहुत कम था। वह मुहाना कमाल का समझा हुआ था। वही फ़ौज के आगे था।

युद्ध का इक्कीसवाँ दिन था, जिस दिन सकरिया के मोर्चे को तुर्कों ने फ़तेह किया। रात्रि के अंधकार में ग्रीकों को शत्रु और मित्र का भेद न समझ पड़ा। कमाल ने थोड़ी-सी फ़ौज को ग्रीक-पड़ाव में घुसकर मार-काट शुरू करवा देने का आदेश दिया, और बाक़ी फ़ौज को भागती हुई सेना का पीछा करने का हुक्म दिया। उस रात्रि के हमले से ग्रीक-सेना की स्थिति बहुत ख़राब हो गई। तुर्कों के हाथ बहुत-सा लड़ाई का सामान भी लगा। दुश्मन कोई २०० मील पीछे हट गए। वहाँ वे खाइयाँ खोद ही रहे थे कि कमाल अपनी वीरवाहिनी को बढ़ाता इस्करी शहर के सुरक्षित मोर्चे पर व्यूह-रचना कर आख़िरी फ़ैसले के लिये जा डटा।

अंगोरा की ख़ुशियों का क्या ठिकाना, सक्करिया की विजय ने लोगों को पागल कर दिया। अंगोरा-वासी अपना बोरिया-बसना बाँधे भागने की तैयारी में थे। सोच रहे थे कि दुश्मनों की मार से बचने के लिये वे पूर्व के पहाड़ी-प्रदेश में भाग जायँगे। पर अब वे, उनका सामान और उनके बीवी-बच्चे सब सही-सलामत थे। वे ख़ुशी के मारे नाचने लगे, कमाल-पाशा के नाम के नारे लगाने लगे। जनता ने मुस्तफ़ा कमाल को ग़ाज़ी—विजयी वीर—की उपाधि से विभूषित किया, और ग़ाज़ी मुस्तफ़ा कमालपाशा को अपना सच्चा संरक्षक मान लिया।

ग़ैर मुल्कों ने भी इस ख़ुशी में साथ दिया। रूस और अफ़-ग़ानिस्तान, अमेरिका और हिंदोस्तान, यहाँ तक कि इटली और फ़्रांस तक से बधाइयों का ताँता बँध गया।

पर कमालपाशा स्थिति को ख़ूब समझ रहा था। तालियाँ सुनने, जनता की आँखों में नाचने और उनका बचानेवाला वीर कहलाने में कमाल को मज़ा आता था ज़रूर, पर अभी तो ख़तरे का घंटा सिर पर ही बज रहा था। वह चाहता था कि एंजिन बनकर टर्की की गाड़ी को बहुत आगे घसीट ले जाय। वह

चाहता था कि ग्रीक-सेना को स्वदेश से बाहर निकालकर ही चैन ले। ग्रीक-सिपाही वैसे ही सहिष्णु और वीर थे, जैसे टर्क। अतएव उन पर आक्रमण करने का कोई प्रश्न ही न था। टर्की की सेना की दशा भी बहुत अच्छी नहीं थी, उसमें पर्याप्त सुधार करना और सामान इकट्ठा होना था। इस सबके लिये महीनों का समय चाहिए था।

कमाल ने तत्काल अंतिम युद्ध की तैयारी में हाथ लगा दिया। रात और दिन, इस्मत और फ़ेवज़ी के साथ, अपने अदम्य उत्साह और निश्चय के अनुसार वह पुनर्गठन के काम में लग गया। उसे हथियारों, बंदूक़ों, गोला-बारूद और मशीनों की सख़्त ज़रूरत थी।

उसने फ़्रांस से गुप्त संधि कर ली, जिसके अनुसार फ़्रांस ने अपनी सेना सीरिया के प्रदेश से हटा ली, और इस तरह ८० हज़ार आदमियों की आबादीवाली जगह भरती करने के लिये तुर्की-सेनापति को मिल गई। लेकिन इससे कमी पूरी नहीं होती थी। उसने रूस से रुपया उधार लिया, जिससे इटली और अमेरिका से लड़ाकू सामान ख़रीदा। फ़ौज में नए सिपाहियों की भरती की गई, और उन्हें ज़ोर-शोर से लड़ने-मरने का पाठ पढ़ाया जाने लगा। उसने राष्ट्रीय सेना में भरती के लिये गाँव-गाँव ढिंढोरा पिटवा दिया, और अच्छा वेतन देकर, अच्छे युवकों को भरती कर सेना को सुसज्जित कर लिया।

* * *

निर्माण के कार्य में शक्ति और समय की बड़ी आवश्यकता होती है। तोड़ना सहल है, बनाना बड़ा मुश्किल। निर्माण-कर्ता के कार्य-क्रम में बाधाओं का ताँता लग जाता है।

कमालपाशा के मार्ग में तब तक कोई अड़चनें नहीं थीं, जब तक उसकी शक्ति रण-क्षेत्र पर काम कर रही थी। लोग कहते थे कि अब लड़ाई काहे की। ग्रीक-सेना आँखों से ओझल हो गई, फिर अब चिंता और परेशानी काहे की।

एसेंबली के मेंबरों ने भी यही बात कही। बड़े-बड़े समझ-दारों ने अच्छी शर्तों पर दुश्मनों से सुलह कर लेने की सिफ़ा-रिश की।

पर कमाल कहता था कि विजित और विजेताओं में संधि कैसी। विना डरे, विना हिचके ग्रीकों को फिर युद्ध में शिकस्त दी जायगी, और तब अपने आप ही हारी हुई, पद-दलित की हुई फ़ौज हमारे देश की भूमि से स्वदेश को भाग जायगी।

रऊफ़ और फ़तेह बे माल्टा के क़ैदख़ाने से छोड़ दिए गए थे। उन्होंने भी कमाल की मुख़ालिफ़त की। पर कमाल ने कमाल कर दिखलाया, सुलह की बात उसने कभी न मानी। सारी जिम्मेदारी अपने मज़बूत कंधों पर अकेले उठाकर ग्रीकों से लड़ने की ठान ली।

* * *

उन दिनों कमालपाशा की बूढ़ी मा उसके पास चानकाया में ही रह रही थीं। वह बहुत बुड्ढी हो गई थीं, उनकी खाल

झूल गई थी, आँखों से अंधी बेचारी ज़ईफ़ ज़ुबेदा एक कोने में चटाई पर लेटी रहती थीं। ग्रीक-सेना के बंदी सिपाहियों से वह बड़े प्रेम से वार्तालाप करती और उनसे अपनी जन्मभूमि अल्बेनिया के दास्तान सुना करती थीं।

फ़िक़री कमाल के घर की संचालिका थी, मिस्ट्रेस थी, दासी थी। उससे ज़्यादा-से-ज़्यादा जो हो सकता, कमाल के आराम की चेष्टा करती, पर वह स्वभाव की बड़ी चिड़चिड़ी थी, शरीर से कमज़ोर थी और बहुधा बरबराया करती थी। उन दिनों फ़िक़री को खाँसी और दमे की कड़ी बीमारी हो गई थी, इससे कमाल को बहुत परेशानी रहती थी। उसका स्वभाव ऐसा था कि किसी से न पटती। यदि कोई हितू कमाल को नेक सलाह देता, तो वह उसे ऑफ़िस के बाहर निकलवा देता। यदि कोई टर्की की हूरों के नृत्यों और डैंसों के ख़िलाफ़ कुछ कह देता (जिसके कमाल कट्टर पक्षपाती थे), तो कमाल जल-भुनकर राख हो जाता, और क़ुरान को बाहर फेंक कमरे से बाहर निकल जाने का आदेश देता। या तो वह टर्की को अपनी मर्ज़ी के अनुसार दिक़्क़तों से निकालकर नवीन योरपीय राष्ट्र के रूप में खड़ा कर देगा, या उसी के साथ स्वयं मर मिटेगा। उसकी जो मुख़ालिफ़त करे, उसे कमाल कुचल डालेगा।

(३८—४०)

आख़िर अगस्त के अंतिम दिनों में, जब अनातोलिया का प्रायद्वीप धूप और तपिश से जल रहा था, कमाल ने दुश्मनों पर चोट करने का विचार किया। २६ तारीख़ का दिन आक्रमण करने के लिये निश्चित हुआ।

सारी बातें बिल्कुल गोपनीय रक्खी गईं। अगस्त के प्रारंभ ही से सेना की बागडोर कमालपाशा ने अपने हाथों में ले ली थी। फ़ौजियों को यह भासित हो रहा था कि अब कुछ होनेवाला है, पर ग्रीक-सेना पर हमले की उन्हें ख़बर तक न थी।

कमाल ने एक दिन सेना-भर में फ़ुटबाल-मैचों की आयोजना की। वहीं सारे कमांडर इकट्ठे हुए, जिनके साथ बैठकर उसने सारी स्कीम तय कर ली। उसी दिन रात को कमालपाशा अंगोरा लौट गया, गोया सिर्फ़ फ़ुटबाल-मैच देखने के लिये ही उसकी सवारी आई थी।

आक्रमण की तिथि से एक सप्ताह पहले सारे तार और टेलीफ़ोन काट दिए गए, और अफ़वाह फैला दी गई कि टर्की में क्रांति हो गई।

ग्रीक-सेना टर्की के गृह-कलह और क्रांति की बात सुनकर उन्मत्त हो गई। उसकी असावधानी और भी बढ़ गई।

ग्रीक-गवर्नमेंट लंदन में अँगरेज़ों की सहायता से ऐसी शर्तें तैयार कर रही थी, जिससे विना लड़े-झगड़े ही टर्की पर फ़तेहयाबी मिल जाती। अतएव ग्रीक-सरकार ने सेना की देख-रेख प्रायः बंद-सी कर रक्खी थी। सेना में खाने-पीने और कपड़े की कमी थी। महीनों से तनख़्वाहें भी नहीं मिली थीं। ग्रीक-फ़ौजियों को अपना घर-बार छोड़ वर्षों हो चुके थे, और वह अवधि बढ़ती ही जाती थी। उनका मन उकता चुका था, उनकी तबियत टर्की के रण-क्षेत्र में क़तई नहीं लगती थी।

उस दिन मुस्तफ़ा कमाल ने अँगरेज़ी बाल नाच की आयोजना की। दुश्मनों को बराबर ख़बरें मिल रही थीं कि कमाल नाच और शराब में ग़र्क़ है, पर बात बिलकुल उल्टी ही थी। नाच के बहाने से अर्धरात्रि के समय उसने सारा संगठन पूरा करके युद्ध का घंटा एकदम बजवा दिया। फ़ौज में सन्नाटा छा गया। सिपाहियो, आगे बढ़ो, और भूमध्य महासागर तक बिना रुके दुश्मनों को मारते-काटते बढ़ते चले जाओ। कमाल का ऐसा नैपोलियनी टाइप का हुक्म था। देश के उद्धार का मौक़ा आया जान टर्की के सैनिकों ने पूरी उमंग के साथ अपने सेनापति के पीछे-पीछे पयान किया।

शाम होते-होते टर्की-सेना ने दमलूपुनार पर क़ब्ज़ा जमा लिया, और वहाँ की रक्षा करनेवाली ग्रीक-सेना को मारकर ख़त्म कर दिया। दमलूपुनार अफ़यून और ग्रीक-सेना की कुंजी था,

जिसका तुर्कों के हाथ में चला जाना ग्रीकों के लिये अत्यंत भयंकर सिद्ध हुआ।

दमलूपुनार ऊँचे पहाड़ी टीले पर आबाद था। नीचे मैदान में ग्रीक-सेना के पड़ाव पड़े हुए थे, सब असावधान थे, अस्त-व्यस्त थे, और टर्कों की ओर से निश्चिंत थे। ऊँचे पहाड़ों के शृंग से टर्की-गोलों की मार के आगे वे विध्वंस होने लगे। पहले तो अपनी-अपनी जान बचाकर अफ़सरान भागे। जब अधिपति ही नहीं रहे, तब भला सैनिक कैसे रुकते, वे भी सिर पर पैर रखकर समुद्री किनारे की ओर सरपट दौड़े। राइफ़लें, बंदूकें, बारूद—तमाम सामान वे पीछे छोड़ते गए। बेचारों की जानों के लाले पड़े थे, फिर इन पदार्थों की वे क्योंकर परवा करते। रास्ते में उन्हें जो तुर्क मिलता, उसे मार डालते, खेतों को उजाड़ डालते, और-तो-और, बच्चों को भी क़त्ल कर डालते। वे पीछे हटते जाते थे, और टर्क हरबे-हथियारों से लैस आगे बढ़ते जाते थे। दस दिन के अंदर-ही-अंदर कोई १९० मील की दूरी तय करके ग्रीक लोग स्मरना पहुँचे, और वहाँ से फ़ौरन् से पेश्तर अपने जहाज़ों पर चढ़ वे ऐसे भागे कि तुर्क उन्हें फिर पकड़ न पाए। इस युद्ध में ग्रीक-सेना के बहुत सिपाही काम आए; जो बचे, वे सही-सलामत अपने मुल्क पहुँच गए।

विजयी तुर्क समुद्र के किनारे खड़े भागते हुए दुश्मन को ताक रहे थे। समुद्र की वेगवती लहरें और उसके असंख्य

विंदु-कण दोनो की दूरी को प्रतिक्षण बढ़ाते जाते थे। टर्क इससे आगे बढ़ने से लाचार थे। उनकी प्रसन्नता का पारावार न था, वे अब अपने मुल्क के स्वयं स्वामी थे।

अनातोलिया दुश्मन से रहित हो गया। ज़रूर यह सितम-सा हुआ, पर खेद यही था कि ग्रीक-फ़ौज चंगुल में आकर भी निकल गई। न-जाने आगे चलकर उसका क्या परिणाम होगा।

* * *

इस युद्ध में ग्रीक के सिपहसालार जनरल ट्रिकोपिस और उनके सहयोगी जनरल डायोनिस पकड़े गए थे। मुस्तफ़ा कमाल ने शहर के टाउन हाल में उन्हें अपने सामने पेश किए जाने का हुक्म दिया। लोग सोचते थे, कमाल इनकी बोटी-बोटी उड़वा देगा।

पर ज्यों ही दोनो कमांडर कमरे में दाख़िल हुए, कमालपाशा हश्मत और फ़ेवज़ी के साथ उठकर खड़ा हो गया। दोनो से हाथ मिलाया, और काफ़ी तथा सिगरेट से उनका आदर किया।

ये दोनो व्यक्ति वे ही थे, जिनके आदेशों से टर्की उजाड़ हो गया था। ग्रीक-सेना के आने से पहले जिस प्रदेश में हँसते हुए चश्मे और लहलहाते हुए खेत-ही-खेत थे, वह अब इनकी क्रूरता से वीरान पड़ा था।

लेकिन उससे क्या, युद्ध में तो दानवी लीला होती ही है, बुरे-भले का ज्ञान नष्ट हो जाता है। दुश्मन को हर तरह पामाल करने

को मन चाहा करता है। ग्रीकों ने भी वही किया था। कमाल की दृष्टि में इन सेनापतियों का यह कोई अपराध नहीं था।

जितनी देर वे उसके सामने रहे, कमाल उनके व्यक्तित्व का अध्ययन करता रहा। ग्रीक-सेनानियों का पीला चेहरा, घुसी हुई आँखें और सैनिक ज्ञान की न्यूनता से वह बड़ा हताश हुआ। वे दोनो कहने लगे कि हम तो आत्महत्या करनेवाले थे कि इतने में पकड़ गए। कमाल इस आखिरी बात को सुनकर बड़ा दुखी हुआ। वे दोनो जब चले गए, तब पाशा अपने मित्रों से दर्द-भरे स्वर में बोला कि हम लोगों के प्रतिपक्षी ज़लील और कायर थे।

* * *

स्मरना में कमाल का स्वागत बड़े ठाट से किया गया। सड़कें सजाई गईं, झंडियाँ उड़ाई गईं, फूलों की वर्षा की गई। झरोखों में बैठी हुई टर्की की महिलाएँ अपने सुरीले कंठों से विजय-गान गा रही थीं। सड़कों पर पुरुषों की क़तारें लगी हुई थीं। गाज़ीपाशा की जय की ध्वनि-प्रतिध्वनि प्रत्येक गली और कूचे में गूँज रही थी।

* * *

उस दिन रात में, विजय की खुशी में, एसेंबली के सदस्यों, हाकिम-हुक्कामों और शहर के रईसों की जमात जमी। गाज़ीपाशा भी सबके साथ शामिल था। जिन्होंने वर्षों कंधे से कंधा भिड़ाकर, अनेक कष्ट और कठिनाइयाँ सहकर टर्की के सूर्य को राहु से छुड़ा पाया था, वे आज बाग़-बाग़ थे।

क़मालपाशा तो जवाहर नाच नाच रहा था। शर्बत, शोरबे और मै के प्याले झलझल करते हुए, फ़िरिश्तों-से सुंदर तुर्कों के सुराहीदार गलों के नीचे उतर रहे थे। स्वतंत्रता देवी के नाम में कुछ अजीब मस्ती है; दुश्मन देश से दूर हो गए, यही सोच-सोचकर सब बड़े ख़ुश थे।

मियाँ अज़ीज़ुद्दीन स्मरना के बहुत बड़े सौदागर थे। उनके एक अपार रूपवती कन्या थी। नाम लतीफ़ा था। उम्र १८ साल, बर्फ़-सी उज्ज्वल, फूल-सी कोमल, चाँद की किरणों-सी निर्मल, यानी बड़ी हसीन थी। उसकी आम की फाँकों-सी बड़ी-बड़ी आँखें ग़ज़ब की रस-भरी थीं। लतीफ़ा स्मरना-भर में अपनी ख़ूबसूरती के लिये विख्यात थी। जैसी वह रूपवती थी, वैसी ही सुशिक्षिता और गुणवती भी थी। इँगलैंड और फ़्रांस में उसने उच्च शिक्षा पाई थी। बुरक़ा हटा हुआ, रेशमी बाल अँगरेज़ी तर्ज़ से कटे हुए, बढ़िया फ़्राक पहने हुए, ऊँची एँड़ी का जूता खट-खट करते वह नाज़नी जिधर से निकल जाती, लोगों के दिल तड़प जाते। उस जल्से में अज़ीज़ुद्दीन अपनी दुहिता के साथ पधारे थे। कमाल सुंदरी लतीफ़ा को देखकर एकदम मोहित हो गया। अज़ीज़ुद्दीन पूरे देश-भक्त थे। राष्ट्रीय टर्की के उत्थान और कल्याण में लाखों रुपए उन्होंने ख़र्च किए थे। उस रात को कमाल और लतीफ़ा घंटों साथ-साथ रहे।

अभी तक क़माल अपनी बदक़िस्मती या अल्लामियाँ की

ख़फ़गी से बिना बीवी के अकेला था। वह बहुत दिनों से अपने अनुरूप एक बाला की तलाश में था, जो उसके शरीर और आत्मा की थकन मिटाकर राष्ट्रोद्धार के कार्य में सहायता दे। लतीफ़ा में सभी गुण थे। योरपियन मुल्कों में रहने के कारण उसके ख़यालात एकदम नवीन और स्वतंत्र प्रकृति के थे। लतीफ़ा की गोल-गोल गदराई हुई सफ़ेद गर्दन में बेशक़ीमती हीरों का एक हार पड़ा था, जिसके निचले भाग में किसी का बंद चित्रपट था। कमाल जिस समय लतीफ़ुन्निसा की गर्दन में बाँहें डाले घने कुंजों के बीच घूम-घूमकर जीवन का सुख ले रहा था कि उसके हाथ लतीफ़ा के हीरों और चित्रपट तक पहुँचे। पूछा, इसके अंदर क्या है? लतीफ़ा, मुस्किराई, बोली, टर्की के त्राता का नन्हा-सा, सुंदर-सा फ़ोटो है। उसे मैं बहुत प्यार करती हूँ, इसीलिये कलेजे पर लटका रक्खा है। कमाल बाग़-बाग़ हो गया, अपनी प्रेमिका को बरबस अपनी ओर खींचते हुए प्रणय-चिह्न अंकित करने लगा। कमाल की बाहुओं में जकड़ी हुई, गोद में पड़ी हुई, आँखें झुकी हुई, मृदु मुस्कान-वाली लतीफ़ा आलिंगन का उत्तर चुंबन से दे रही थी। कमाल-सा वर पाने की किस स्त्री को न ख़्वाहिश होगी। अज़ी-ज़ुद्दीन तो फूले न समाए, और उन्होंने बड़े ठाट-बाट से अपनी भुवन-मोहिनी दुख़्तर टर्की के त्राता के हाथों में सौंप दी। सच है, भगवान् जब देता है, तब छप्पर फाड़कर देता है। तमाम टर्की में ख़ुशियाँ मनाई गईं, देश-भर में

रोशनी की गई। अंगोरा में नववधू के आगमन के उपलक्ष में बड़ी सजावट हुई थी, मानो वह राष्ट्रीय समारोह की तिथि थी।

(४१—४५)

ग्रीक-सेना पार हो गई। मित्र राष्ट्रों ने खामोशी अख़्तियार कर ली। उनमें आपस ही में फूट पड़ी हुई थी। जर्मनी और आस्ट्रिया में हंगरी की हड्डियों के बटवारे के लिये चील-चुथौवल मच रही थी। इँगलैंड, फ्रांस और इटलीवाले ज़र्रा-भर भी परवा नहीं रखते थे कि टर्की में क्या हो रहा है। वे अब एक शिलिंग भी युद्ध के नाम पर नहीं खर्चना चाहते थे। लड़ाकू तुर्कों से वे शांति के भूखे थे।

फ़्रांस ने मित्र राष्ट्रों की ओर से मानसियर फ्रेंकलिन को प्रतिनिधि बनाकर कमालपाशा के पास भेजा। उसे भय था कि टर्की के साथ युद्ध होने पर रूस तुर्कों से मिल जायगा। बात भी सही थी। दूसरे महायुद्ध का श्रीगणेश होना बिल्कुल संभव था। रही-सही ग्रीक-सेना को मित्र राष्ट्रों ने हटवा दिया, योरपीय टर्की को तुर्कों के हवाले कर दिया। अँगरेज़ों और मित्रों ने शीघ्र ही क़ुस्तुंतुनिया खाली कर देने का वचन दिया।

कमाल ने एक ओर तो फ़ौजों की तैयारी जारी रक्खी, भरती भी होती रही, और दूसरी ओर अँगरेज़ी सेनापति हेरिंगटन से सुलह की बात चलती रही।

आख़िर मुदेनिया-नामक ग्राम में दोनो ओर से संधि की

शर्तें तय हो गईं। मित्र राष्ट्रों की ओर से कमांडर हेरिंगटन ने और टर्की की तरफ़ से इस्मतपाशा ने सुलहनामे भरकर सही कर दी।

सारे इस्लामी मुल्कों ने बधाइयाँ भेजीं, और प्रतिनिधि-मंडल भेजे। कमाल से मुस्लिम-संसार का सम्मिलित संघ बनाने का अनुरोध किया गया, हिंदोस्तान के मामले में दस्तंदाज़ी करने को भी कहा गया। बोल्शेविकों ने अपना मंत्र देना चाहा, तो इटली ने फ़ेसिज़्म का पाठ पढ़ाना चाहा। यदि कमाल के स्थान पर कोई छोटा आदमी होता, तो इतनी विजयों, बधाइयों और अनुरोधों को पाकर फूल जाता, तथा अंतर्राष्ट्रीय मूर्ति बनने का प्रयास करता, पर मुस्तफ़ा ने सबसे सदिच्छा प्रकट करते हुए किसी प्रकार की मदद लेने या सहायता देने से इनकार कर दिया।

"हमारा एक ही सिद्धांत है—सारी समस्याओं को एक तुर्क की निगाहों से देखना और टर्की के हितों की रक्षा करना—इससे आगे जाने का हमारा काम नहीं है।

"मैं टर्की को एक जीता-जागता राष्ट्र बनाऊँगा। मैं टर्की को योरप के अन्यान्य सभ्य देशों की पंक्ति में बिठालूँगा। चुप रहो, मत बोलो, मैं और कुछ न करूँगा। टर्की अपना स्वयं मालिक होगा। देश की बागडोर को मैं अपने हाथों में रक्खूँगा।"

* * *

"पाशा !" हलीदा हदिब ने एक दिन पूछा—"तुम्हारा काम तो अब ख़त्म हो गया। तुमने अपने पुरुषार्थ से मुल्क शत्रु-विहीन कर दिया, अब तो सुलह होगी, तुमको बहुत आराम का मौक़ा मिलेगा।"

"आराम, कैसी आराम हलीदा, अब हम लोग आपस में लड़ेंगे, एक दूसरे को खायँगे, परस्पर की दुश्मनी निकालेंगे।"

"यह क्यों कमाल ! क्या हम लोग एकदम से संगठन के कार्य में न लग जायँगे?"

"जिन लोगों ने सदा मेरी मुख़ालिफ़त की है, उनका क्या होगा। क्या वे चुप बैठेंगे, और मैं विना बदला लिए मानूँगा। मैं तो उन्हें ज़िंदा ही आग में जलवा दूँगा। संघर्षण तो रहना ही चाहिए, यह जीवन का मुख्य अंग है। मैं किसी भी दशा में स्वार्थी राजनीतिज्ञों के हाथों में मुल्क की बागडोर नहीं जाने दूँगा।"

* * *

उन दिनों क़ुस्तुंतुनिया की सरकार के प्रधान मंत्री रऊफ़ बे थे। उन्होंने कमाल की राय जाननी चाही। आम राय यह थी कि अंगोरा और क़ुस्तुंतुनिया की सरकारें मिलाकर एक कर दी जायँ, और कमालपाशा प्रधान मंत्री बनाया जाय।

रेफ़तपाशा, अलीफ़ऊद और रऊफ़ बे अंगोरा में कमाल के पास पहुँचे। उन्होंने पूछा—"कमाल, लोग कहते हैं कि तुम सुल्तानियत को तोड़ने पर आमादा हो?"

कमाल—"आप लोगों की क्या राय है? क्या ऐसा विचार मन में लाना उचित है?"

"मेरे वालिद और मैं सदा से सुल्तान का नमक खाते रहे हैं।" रऊफ़ बे ने जवाब दिया—"मैं दगाबाज़ वहीदुद्दीन की बात नहीं कहता। उसको गद्दी से उतारकर किसी दूसरे शाही खानदानवाले को तख़्तनशीन करना होगा। सुल्तान और ख़िलाफ़त के प्रति हमारी भक्ति तो बनी ही रहनी चाहिए। देश में एक ऐसा व्यक्ति होना चाहिए, जो सबसे ऊपर हो, प्रजा जिसकी बात को सर्वोपरि मान सके—टर्की की प्रजा की ऐसी ही मनोवृत्ति है।"

रफ़त ने भी ऐसी ही बातें कीं, और सुल्तानियत को क़ायम रखने के पक्ष में राय दी।

इस विषय पर विशेष वाद-विवाद करने की मैं ज़रूरत ही नहीं समझता। सुल्तानियत को हटाने का मैंने कभी निश्चय ही नहीं किया। इस बारे में मैं भरी एसेंबली में कल अपना मंतव्य प्रकाशित कर दूँगा।

सब राज़ी हो गए। रात ख़ुशी-ख़ुशी बीती। दूसरे दिन प्रातःकाल कमाल ने अपने वादे के मुताबिक़ एसेंबली में अपनी राय ज़ाहिर कर दी कि सुल्तानियत से उसकी कोई मुख़ालिफ़त नहीं थी।

* * *

बात यह थी कि सुल्तान और ख़लीफ़ा को समाप्त करने

की अभी घड़ी नहीं आई थी। कमाल ने मौक़ा-महल देखकर कुछ दिन और इंतज़ार करने की ठानी। फिर तो समय की गति उसके पक्ष में ही होती चली गई, और जल्दी ही मन-चीती मुराद मिली।

इस मीटिंग के बाद एक सप्ताह भी न बीतने पाया कि एक नया ही गुल खिला। अँगरेज़ सुल्तान वहीदुद्दीन की बराबर इसलिये तरफ़दारी कर रहे थे कि उसकी मूर्ख शासन-प्रणाली में व्यापार और वाणिज्य के विशेषाधिकार लेकर इँगलिस्तान को मालामाल कर देंगे। इसीलिये वह अपने प्रत्येक कार्य-क्रम से यह प्रकट करते रहते थे कि उनकी निगाहों में देश के सच्चे शासक बादशाह ही हैं। यद्यपि फ़्रांस, इटली प्रभृति मित्र राष्ट्रों ने कमाल की हस्ती को मान लिया था, तथापि इँगलिश गवर्नमेंट ने अपनी अड़ंगा-नीति का त्याग न किया। शीघ्र ही एक ऐसी घटना घटी, जिसके कारण कमाल के विद्वेषियों तक को, देश की बहबूदी के ख़याल से, कमाल के झंडे के नीचे आना पड़ा।

बात यह हुई कि लासेन (योरपीय महायुद्ध के बाद की संधि-कान्फ़्रेंस) कान्फ़्रेंस में, जहाँ मित्र और शत्रु राष्ट्र सभी एकत्रित थे, शामिल होने को टर्की को भी निमंत्रण आया। और, निमंत्रण-पत्र आया सुल्तान के पास, जिसमें अंगोरा की राष्ट्रीय सभा के प्रतिनिधियों को भी भेजने का ज़िक्र था। यानी इसके अर्थ यही थे कि अंगोरा की सरकार सुल्तान की

मातहत थी, या अँगरेज़ों ने कमालपाशा को नीचा दिखलाना चाहा था। जो भी हो, परिणाम भयंकर हुआ। सिर्फ़ इने-गिने व्यक्तियों को छोड़कर सारा देश वहीदुद्दीन से घृणा करता था। तुर्कों की निगाहों में वहीदुद्दीन अँगरेज़ों से मिला हुआ, देश का जयचंद था। वहीदुद्दीन और लायड जार्ज, ये ही दोनो टर्की की राष्ट्रीयता के बाधक और शत्रु थे। चूँकि वहीदुद्दीन टर्क था, इसलिये तुर्क उससे दूनी घृणा करते थे।

ज्यों ही इस निमंत्रण-पत्र के समाचार जनता में फैले, लोग उबल उठे। ख़ास क़ुस्तुंतुनिया में सुल्तान के आदमी सरे बाज़ार पीटे गए। अली कमाल, जो एक पत्र का संपादक था और सदा वहीदुद्दीन का पक्ष लिया करता था, घसीटकर सड़क पर इतना कूटा गया कि उसका दम निकल गया। सुल्तान, उनके नौकर-चाकर, उनके मंत्री और यहाँ तक कि वज़ीरे-आज़म तक को जनता के बीच निकलने का साहस नहीं होता था।

उधर अंगोरा में एसेंबली की बैठक हुई, और सारे समाचारों से अवगत होने पर मेंबरों की त्योरियाँ चढ़ गईं। "यह क़ुस्तुं-तुनिया की गवर्नमेंट क्या चीज़ थी। उसने टर्की की रक्षा के लिये कब अपने खून की नदियाँ बहाई थीं। बूढ़े जागलूल तौफ़ीक़पाशा को क्या हक़ था कि ऐसे अपमानकारी निमंत्रण को हमारे लिये स्वीकार करता। वह और उसकी कैबीनेट (मंत्रिमंडल) कुत्ते, बिल्लियों और दग़ाबाज़ टोडी बच्चों का

समूह था। टर्की में सिर्फ़ एक ही सरकार थी, जिसका नाम और काम टर्की की राष्ट्रीय महासभा के नाम से चल रहा था।"

मुस्तफ़ा कमाल ने सोचा कि वक्त आया हो या न आया हो, अपना क़दम तुरंत आगे बढ़ाना चाहिए। इस मौक़े पर उसे आशा थी कि सभा के डिपुटी (मेंबरान) वहीदुद्दीन को निकाल देने में उसका साथ देंगे, और शायद सुल्तानियत को मेट देने के पक्ष में भी हो जायँगे। धर्म के नाम पर स्थापित ख़िलाफ़त को मेटने की आवाज़ बलंद करना व्यर्थ था, ख़तरे से भरा हुआ था। ख़लीफ़ा को हटाने की बात सुनकर टर्की का जन-समुदाय—ग़रीब और अमीर—एक साथ विचलित हो उठता।

सभा में हंगामा मचा हुआ था। ग़ुस्से से भरे हुए मेंबर लोग गला फाड़-फाड़कर सुल्तान को गालियाँ दे रहे थे। इसी बीच में कमाल उठकर खड़ा हो गया, और चेयरमैन की ओर मुख़ातिब होकर बोला—"मैं प्रस्ताव करता हूँ कि सुल्तानियत और ख़िलाफ़त (राजा का पद और धर्म के गुरु का पद) जुदा-जुदा कर दिए जायँ। ख़लीफ़ा के धार्मिक पद के लिये कोई योग्य व्यक्ति चुन लिया जाय। सुल्तानियत को मेट दिया जाय और वहीदुद्दीन को निकाल दिया जाय।"

सुल्तान, ख़लीफ़ा, जुदा-जुदा और वहीदुद्दीन को भगाकर बादशाहत का तख़्ता तबाह करना, इन प्रस्तावों को एक

साथ सुनकर एसेंबली में सन्नाटा छा गया। मेंबर लोग शांत हो गए, और प्रस्ताव पर वाद-विवाद शुरू हुआ। लोग ऐसे प्रस्ताव पर विश्वास न करते और मज़ाक़ समझकर उड़ा देते, यदि वह इतने मशहूर और संजीदा सेनापति के मुख से न पेश हुआ होता।

मुस्तफ़ा कमाल और उसके साथियों ने प्रस्ताव का ज़ोरों से समर्थन किया। इस पर एसेंबली ने प्रस्ताव को एक विशेष क़ानूनी कमेटी के सुपुर्द कर दिया।

*　　　*　　　*

दूसरे रोज़ इस ला-कमेटी की बैठक हुई। इसमें वकीलों और आला मुल्लाओं का जमघट था। घंटों बीत गए, पर वे लोग सुल्तान और ख़लीफ़ा के पदों को पृथक् करने की बात पर विचार पूरा न कर पाए। कमेटी का चेयरमैन एक लंबी सफ़ेद दाढ़ीवाला मुल्ला था, जिसकी पाव-पाव-भर की पलकें मिनटों में उठा करतीं, और दो-दो पाव के होठों का कपाट घंटे-घंटे में खुला करता। विद्वान् वकीलों और मुल्लाओं ने क़ानून की बाल की खाल निकाल डाली, क़ुरान की आयतों के, पुरानी मरी हुई ऐतिहासिक पुस्तकों के और बग़दाद ऊने कैरो की प्रचलित धर्म-वृत्तियों के खाके खींचे गए। अरबी-भाषा के शब्द-शब्द के खूब धुर्रे उड़ाए गए। धर्म के नाम पर वे महात्मा-गण खूब लड़ते-झगड़ते रहे। शायद महीनों भी हो जाते, तो भी वे उस रफ़्तार से किसी नतीजे पर नहीं पहुँच सकते थे।

एक कोने में ख़ूँख़्वार भेड़िए की तरह कमालपाशा बैठा हुआ इन लक्षणों को देख रहा और कुढ़ रहा था। वह अपनी फ़ौजी पोशाक में था, और उसी तरह के विचार-प्रवाह में बह भी रहा था।

कमेटी के किसी मेंबर ने भी उसे पूरी दाद न दी। एक मेंबर भी पूर्णतया उसके प्रस्ताव के पक्ष में न बोला। हार जाने का पूरा खटका था।

लेकिन हार तो कमाल को बरदाश्त नहीं थी। "क्या वह, जिसने अपना ख़ून पसीने की तरह बहाकर टर्की को बचाया है, इन बेहूदों की वाहियात बातों को अनिश्चित काल तक सुनता रहे और ये चीलों और कौओं की तरह फ़ारसी और अरबी की बुकनू बूकते-बूकते उसे फुसलाते रहें। टर्की बड़ी है या धर्म का ढकोसला बड़ा है। इनमें से कौन देश-भक्त है, कौन देश की भलाई के लिहाज़ से विचार कर रहा है।"

कमाल से और ज़्यादा ख़ामोश न बैठा गया। गुस्से से लालोलाल, मुट्ठियाँ बेंच पर पटकते हुए वह कुर्सी पर चढ़कर खड़ा हो गया और बोला—"जनाब, एक समय था, जब सुल्तान के बुज़ुर्गों ने अपनी पाशविक शक्ति का प्रयोग करके स्वतंत्रता के अधिकारों को जनता से छीना था, आज जनता अपनी शक्ति का अनुभव करके उसे वापस ले रही है। सुल्तानों ने जनता को बहुत दिनों तक ग़ुलाम बनाए रक्खा है, अपने व्यक्तिगत आराम और स्वार्थ के लिये जन-समुदाय को बहुत

चूसा है। अब अगर लोग गुलामी करने से इनकार करते हैं, तो उसमें क्या पाप है?

"बादशाहत ख़िलाफ़त से जुदा होकर रहेगी, और सदा के लिये मेट दी जायगी। तुम लोग मानो या न मानो, मुझे कुछ परवा नहीं। मैं चाहता था कि तुम लोग सीधी राह चलकर इस प्रस्ताव की स्वीकृति दे दो, वरना एक हाथ से तलवार खींचकर और दूसरे से भरा हुआ रिवाल्वर थामकर, तुममें से बहुतों के सर जुदा कर दूँगा। पाजी कहीं के, अभी एक-एक को समझ लूँगा। लातों की देवी बातों से नहीं मानतीं हैं। मेरे सिपाही चारो ओर हैं, अभी उनको हुक्म देता हूँ कि तुम्हारी खालें खींच लें।"

डिक्टेटर अपने हुक्मनामे को ख़ुद ही सुना रहा था। बेचारे चेयरमैन का पाख़ाना निकल गया। कमेटीवालों की घिग्घी बँध गई कि यह कंबख़्त न-जाने क्या कर डालेगा। चेयरमैन ने काँपते पैरों से उठकर कहा—"मित्रो, हमारे मान्यवर गाज़ीपाशा ने विषय की महत्ता को दूसरे ही दृष्टिकोण से समझाया है, हम लोग दूसरे ही प्रकार से सोच रहे थे। अब जल्दी करिए— कहिए-कहिए, आप लोगों की क्या राय है?"

फिर तो कौन मुख़ालिफ़त करता है। जान जाने का भय जो चाहे सो करा ले। मेंबरों ने सोचा, चलो हत्या काटो, किसी तरह इस भेड़िए से जान बचाकर घर भागो, वरना पार्थिव शरीर की ख़ैरियत न समझो। झट वकीलों और मुल्लाओं ने अपनी

राएँ बदल दीं, और प्रस्ताव को क़ानून के रूप में पास कर देने की एसेंबली को अपनी पूर्ण सम्मति दे दी। "सुल्तान और खलीफ़ा तो जुदा-जुदा होने ही चाहिए, वहीदुद्दीन बड़ा पाजी है। हाँ, बादशाहत ही ख़त्म कर देनी चाहिए"—ऐसा कहते-सुनते, अपनी लंबी दाढ़ियों को सहलाते और चोगों को उठाते, बेचारे मेंबरान ख़ुदा-ख़ुदा करके अपने-अपने घरों के लिये चलते हुए। कइयों ने तो घर पहुँचकर जब ख़ुदा ताला से दुआएँ माँग लीं, और नमाज़ पढ़ ली, तब कहीं उनके होश ठिकाने आए। सचमुच वे लोग कमालपाशा से बहुत डरते थे।

* * *

दूसरे ही दिन इस प्रस्ताव पर वाद-विवाद करने के लिये एसेंबली बैठी। लॉ-कमेटी में प्रस्ताव के अनुमोदित हो जाने पर भी महासभा का रुख़ कुछ दूसरा ही था। कमालपाशा ने जब देखा कि एसेंबली का बहुमत उसके ख़िलाफ़ चला जायगा, यदि बहस-मुबाहिसे का दौरदौरा यों ही चलता रहा, तब उसने सोचा कि फ़ौरन् ही, बिना व्याख्यानों के, वोटिंग करवानी चाहिए। जैसे भी हो, प्रस्ताव को पास होना चाहिए। उसने अपनी पार्टीवालों को, जो अस्सी से ज़्यादा थे, एक ओर इकट्ठा किया, और तुरंत वोट ले लिए जाने के लिये भीषण हंगामा मचा दिया। मेंबरों ने कहा, अच्छा, वोट नाम ले-लेकर दिए जायँ, पर कमाल ने इसे भी नामंजूर किया। उसके सब साथी-संगी हरबे-हथियारों से लैस होकर आए थे, पिस्तौलें भरी हुई थीं, नाले चढ़े हुए थे। वे लोग

ऐसे भयंकर जीव थे कि किसी क्षण भी भरी सभा में गोली चला बैठते। कमाल यदि हुक्म देता, तो वे लोग सारे मेंबरों को वहीं भून देते। वे कितने ख़ूँख़्वार और बेढब थे, इसे सब लोग ख़ूब जानते थे।

"मैं चाहता हूँ, यह प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास हो।" उसके साथियों ने भरी हुई पिस्तौलों को हाथों में हिलाते हुए चिल्ला-चिल्ला कर कमाल की बात का समर्थन किया। "हाथ उठा दिए जायँ—बस, बहुत काफ़ी होगा, अन्यथा एक-एक साले को समझ लूँगा, जो लोग विरोध करेंगे, यहीं उनकी खोपड़ियों को तोड़ दूँगा।" हाँ, प्रधान सेनापति कमाल का बड़ा रुतबा और बड़ा दौरदौरा था।

मीटिंग के प्रेसीडेंट की एक आँख कमाल पर और दूसरी दरवाज़े पर थी। लोगों ने हाथ उठा दिए। "प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास हुआ" की घोषणा कर दी गई। कोई एक दर्जन तेज़दम मेंबरों ने न माना। उन पर कमालियों ने भरी सभा में थूका, सुअर का बच्चा, हरामी का पिल्ला, देश का दुश्मन और न-जाने क्या-क्या कहा। बैठ जाओ, बैठ जाओ की आवाज़ में बेचारों का स्वल्प मत दब गया। नक्क़ारख़ाने में तूती की आवाज़ कौन सुनता। किसी ने मित्रता के नाते समझाकर उन्हें चुप कर दिया, तो किसी ने पैर घसीटकर बैठा दिया। एक-दो पर मार भी पड़ गई। कमाल ने प्रेसीडेंट से स्वीकृत प्रस्ताव को पढ़ देने के लिये कहा। सभापति ने मज़मून को काँपती हुई ज़बान से इस भाँति सुना दिया।

"इस अखिल टर्की की राष्ट्रीय महासभा के मेंबरों की सर्व-सम्मति के अनुसार सुल्तानियत का पद तोड़ दिया गया।" एसेंबली जल्दी में उठ गई। विजयी कमाल अपने सहयोगियों के साथ अकड़ता हुआ चला गया।

* * *

बाक़ी का क्रिया-कर्म जल्दी ही समाप्त हो गया। पाँच दिन के अंदर रफ़तपाशा ने क़ुस्तुंतुनिया पर अधिकार जमा लिया, और सुल्तान की गवर्नमेंट को ग़ैर-क़ानूनी घोषित कर तोड़ दिया।

* * *

सुल्तान ने अपना दूत अँगरेज़ी सेनापति हेरिंगटन के पास भेजा। उसने जाकर दस्तबस्ता अर्ज़ की कि जनाब अँगरेज़ साहब बहादुर! सुल्तान साहब को रक्षा का वरदान दीजिए। अब इस पृथ्वी-मंडल पर आप ही का सहारा है, आप दया कीजिए, आप ही हमारे लिये ख़ुदा हो, परवरदिगार हो, मेरे सुल्तान की परवरिश कीजिए। मेरे मालिक ख़तरे में पड़े हैं, उन्हें उबारिए। वह चाहते हैं कि इस मुल्क से जल्द ही किनारा करें, आप भागने में उनकी मदद कीजिए। जितनी जल्दी हो सके, बंदोबस्त कीजिए, वरना उनकी शक्ल से आसनाई हो सकेगी या नहीं, इसमें शकोशुबहा है।

* * *

दो दिन बाद अँगरेज़ों की एंबूलेंस कार सुल्तान के महल

के दरवाज़े पर खड़ी थी। लोगों ने देखा, वहीदुद्दीन अपने बेटे, एक हिजड़े और एक थैले के साथ बाहर निकले।

सुबह हो चुकी थी, सूरज चमक रहा था।

एक फ़ौजी गोरे ने खटका दबाकर लारी के पीछे का हिस्सा खोल दिया। एक हाथ में खुला हुआ छाता और दूसरे में बटुआ लिए, दीन-दुनिया के मुसलमानों के ख़लीफ़ा और बादशाह लारी की सीढ़ियों पर चढ़े। छाता अटक गया, तीली फँस गई, दो-तीन मिनट चेष्टा करने पर भी सुल्तान उसे न निकाल सके। धूप के मारे उसे बंद भी नहीं करना चाहते थे, और छोड़ना भी नहीं चाहते थे। इसी कशमकश में लारी स्टार्ट कर दी गई, और एक फ़ौजी गोरे ने सुल्तान को धकियाकर अंदर कर दिया, और छाते को छीनकर दूर फेंक दिया। लारी जब किनारे पर पहुँची, एक मोटर-बोट आता दिखलाई पड़ा, जिस पर चढ़ाकर सुल्तान और उनके दोनों साथियों को बड़े जहाज़ पर पहुँचा दिया गया। इँगलिश कमांडर-इन-चीफ़ हेरिंगटन ने सुल्तान से हाथ मिलाया।

इतने में सुल्तान को कुछ याद आई, उनका बटुआ कहीं छूट गया था। हिजड़े को गाली-गुफ़्ता देते वह अपना झोला खोज रहे थे। उसमें सुल्तान के पीने का एक सोने का हुक़्क़ा और हीरों का हार था। आख़िर बड़ी खोज करने के बाद वह स्टीमर पर मिला। अँगरेज़ी कमांडर ने हँसी का एक ठहाका लगाया।

ठीक एक घंटे बाद जहाज़ सीटी देकर टर्की के किनारे से रवाना हो गया। सुल्तान का भतीजा अब्दुलमजीद ख़लीफ़ा बनाया गया, पर उसे कोई राजकीय शक्ति न सौंपी गई। इस्लाम-मज़हब के पोप के अलावा उसे कोई हक़ नहीं मिला। केवल धार्मिक मामलात में दख़ल दे सकने का उसे अधिकार रह गया।

मुस्तफ़ा कमाल के विचारों और कार्यों की जय हुई। देश में उसकी विजयों की धाक जम गई। सुल्तान टर्की से भाग गया, और सुल्तानियत भी सदा के लिये ख़त्म हो गई।

कमालपाशा ने इन अनुभवों से बहुत लाभ उठाया। यह निश्चय था कि शक्ति को केंद्रीभूत करने के लिये उसे पग-पग पर लड़ना-झगड़ना पड़ेगा। एसेंबली के मेंबर, चाहे वे राजनीतिज्ञ थे या सैनिक, कमाल की सत्ता के विरोधी थे। पर वे उससे डरते थे, चिढ़ते थे, और अविश्वास करते थे।

विदेशी शक्तियों से युद्ध के समय वे पूर्णतया कमाल के साथ थे। वे कमाल के सैनिक ज्ञान पर मुग्ध थे, आश्चर्य-चकित थे। कमाल का व्यक्तित्व इतना बड़ा था कि उसकी छत्रच्छाया में उसके असिस्टेंट होकर सबों ने ख़ुशी-ख़ुशी काम किया था। यह सब कुछ था, पर बहुत कम व्यक्ति ऐसे थे, जिन्हें कमाल का शासक या लीडर बनना पसंद पड़ता। सुल्तान के निर्वासन के बाद टर्की में कोई अधिकार-पूर्ण राजा नहीं था। आगामी कुछ सप्ताहों में टर्की की भविष्य शासन-प्रणाली का निश्चय होनेवाला था। लोग पुराने ढर्रे के, पुराने ख़यालातों के तुर्क थे। एसेंबलीवाले कोई राजतंत्र-प्रणाली

चाहते थे। जिस घड़ी कमाल डिक्टेटर बनने का प्रयत्न करेगा, वे उसका घोर विरोध करेंगे। उसके द्वारा होनेवाले छोटे-छोटे सुधार भी विपक्षियों में तूफ़ान खड़ा कर देंगे।

कमाल की यह मनोवृत्ति थी कि पहले प्रत्येक बात के प्रत्येक पहलू पर ख़ूब विचार कर लेना, और तब जब निश्चय हो जाय, तब पूरी शक्ति से उस पर टूट पड़ना। सुल्तान से मुख़ालिफ़त करने में भी उसने यही किया था। उसने सोचा, क्या रऊफ़ के साथ मिल जाऊँ? लेकिन उसके माने यह होंगे कि मैं रऊफ़ का ग़ुलाम बनकर रहूँ, और देशोद्धार के कार्य में उसकी रज़ामंदी से धीरे-धीरे चलूँ, 'असंभव'। कमाल ने इस विचार को त्याग दिया।

इस समय शक्ति उसके हाथ में थी, पर उसका प्रयोग वह नहीं करना चाहता था। सारी फ़ौज उसकी भक्त थी, पर क्या जाने आगे आनेवाले ज़माने में—जब शांति और ग़रीबी से लड़ाई होगी—क्या होगा। उसके साथी-संगी हर घड़ी जान पर खेलने को तैयार रहते थे, पर रिवाल्वरों के ज़रिए से एसेंबली के लोगों को कब तक डराया जा सकेगा।

उसके पास जन-बल होना चाहिए; उसके पास राजनीतिक क्षेत्र में लड़ने के अनुरूप मशीनरी होनी चाहिए।

आत्मरक्षा-कमेटी, जो देश में (सन् १९१९) में बाहरी शत्रुओं के आक्रमण के समय बनी थी, अभी बरक़रार थी। उसकी शाखाएँ देश-भर में थीं। वह कमेटी राष्ट्रीय आंदोलन की जान थी।

कमेटी क्या थी, बिल्कुल सैनिक संगठन था। जनरल कमांडर-इन-चीफ़—सबसे बड़ा सिपहसालार होने के नाते—कमालपाशा उस कमेटी का सर्वेसर्वा था।

उसी संगठन को तोड़ने के बजाय उसने राजनीतिक पार्टी का रूप देना चाहा। उसने उसका नाम पीपुल पार्टी रक्खा। "कमेटी के मेंबरों को ही नगरों और गाँवों की प्रबंध-कमेटियों का प्रधान होना चाहिए, मुख़्तियार, मास्टर, नंबरदार, पोस्ट-मैन और मुल्ला, सभी कोई पार्टी के सदस्य होने चाहिए। वे लोग मेरे प्रति ज़िम्मेदार रहेंगे, वफ़ादार रहेंगे, और तभी हम लोग देशोन्नति का काम तेज़ी के साथ आगे धँसकर कर सकेंगे।" कमालपाशा के ऐसे मंतव्य थे।

* * *

कमालपाशा ने अपना प्रोग्राम बनाकर देश की परिक्रमा शुरू की। जहाँ-जहाँ वह गया, लोगों ने प्रफुल्लित होकर उसके प्रस्ताव की दाद दी। ग़ाज़ी, रक्षक, विजयी और मादरे-मुल्क को पराधीन की बेड़ियों से छुड़ानेवाला कहकर, करतल-ध्वनि कर-कर लोगों ने उसका स्वागत किया। लोग अपने हीरो, अपने नेता को देखकर जोश से पागल हो गए। वही उनकी निगाहों में सच्चा शासक था। कमाल का जनता के शरीरों पर नहीं, हृदयों पर राज्य था।

यात्रा करते-करते उसने अपने कार्य-क्रम को पूरा कर लिया। जहाँ-जहाँ वह ठहरा, कमेटियों की स्थापना हो गई। लोगों

ने बड़े गौर से उसके विचारों को सुना। कमाल सबसे बड़ी नेकी और बराबरी के नाते से पेश आया, जिसके कारण लोग उसके हाथों बिक गए, और आगामी चुनाव में सब तरह की मदद देने के लिये कटिबद्ध हो गए।

"अपने संगठन को मज़बूत रखना।" कमाल ने उनको समझाते हुए कहा—"दुश्मन दूर हो गया है, पर युद्ध की अभी समाप्ति नहीं हुई है। देश में जयचंदों और द्रोहियों की संख्या बढ़ रही है। वे लोग जो लड़ाई के समय भागे-भागे फिरते थे, अब शासन करने के लिये छल-बल और कौशल से चेष्टा कर रहे हैं। उनमें से अनेकों ऐसे हैं, जो क्षण-भर में अपने स्वार्थों के लिये मुल्क को दुश्मनों के हाथों बेच दे सकते हैं। उनके फंदे में मत फँसना, मुझ पर विश्वास रखना, मेरी बात को मानना, और धोका न खाना। अगर तुम्हें अपनी स्वतंत्रता प्यारी है, तो मुझे हर तरह से इमदाद देना। हम सब मिलकर उस टर्की का पुनर्निर्माण करेंगे, जिसे देश और बाहर के दुश्मनों ने आज तक ख़ूब नोचा है। टर्की पर शासन करने का अधिकार टर्की की जनता को है। टर्की की जनता पीपुल-पार्टी द्वारा, जिसके तुम सदस्य हो, राज-कार्य और रक्षा का कार्य करवा सकती है। तुम्हीं लोग टर्की के सच्चे मालिक हो।"

तुम ठीक कहते हो, तुम ठीक कहते हो, तुम ठीक कहते हो। पीपुल-पार्टी के नेता गाज़ीपाशा की जय हो।

कमाल ने अपने व्याख्यानों में क्रांतिकारी परिवर्तनों का, जो उसके दिमाग़ में थे, कोई ज़िक्र नहीं किया। वह जानता था कि मज़हब को तोड़ने, बुरक़े को हटाने और शिक्षा को फैलाने के नाम पर दक़ियानूसी किसान-मंडल उसका विरोधी हो जायगा।

देश के कोने-कोने में पीपुल-पार्टी की स्थापना हो गई। कमाल ने इस बीच बड़ा परिश्रम किया, बड़ी दौड़-धूप की। उसके अकेले दम का सारा ज़हूरा था। कमाल टर्कीवालों के लिये गांधी-सा प्रिय था। एक-एक किसान उसके साथ था, उसका अंधभक्त था। कृषक-समुदाय से ही फ़ौजवालों का चयन होता था, और यदि उनको आर्थिक सहायता और वेतन ठीक तरह से दिए जाते रहें, तो फिर बग़ावत और कमज़ोरी का कोई खटका ही नहीं था।

इस तरह से सारे प्रबंधों को अपनी देख-रेख में पूरा कर, लोगों की मनोवृत्ति का अध्ययन कर और जनता के बीच अपना मंत्र फूँककर कमाल अपने शत्रुओं, अपने प्रतिद्वंद्वियों से भिड़ने के लिये अंगोरा में आ डटा।

पेरिस में लासेन कान्फ़्रेंस की बैठकें हो रही थीं। कमाल ने अपने चिर-संगी इस्मतपाशा को टर्की का प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। कैबिनेट और एसेंबली से उसने इस संबंध में कुछ पूछा ही नहीं था। महासभा के मेंबरों को कमाल पर गुस्सा चढ़ा हुआ था।

कान्फ़्रेंस की शुरुवात नवंबर में हुई थी। शुरू ही से मामला बिगड़ने लगा। लॉर्ड कर्ज़न अपनी विद्वत्ता, अधिकार और शान से मित्र राष्ट्रों के प्रतिनिधि-मंडल पर हावी थे। इस्मत और कर्ज़न में प्रत्येक बात पर विरोध बढ़ता रहा। एक दूसरे से चिढ़ गए, झगड़ गए, और हफ़्तों वाद-विवाद करते रहे। अंत में फ़रवरी में कान्फ़्रेंस की बैठक उठ गई, और इस्मत अंगोरा चले आए।

मुस्तफ़ा कमाल के लिये कान्फ़्रेंस की सफलता अनिवार्य थी। असफलता सारी विजयों पर पानी फेर देती। इस्मत रास्ते ही में थे कि कमाल आगे बढ़कर इस्कारी शहर में उससे मिला। दोनो अंगोरा के लिये साथ-साथ रवाना हुए। जब गाड़ी अंगोरा-स्टेशन पर पहुँची, तो न तो उनका स्वागत करने के लिये प्रधान मंत्री रऊफ़ बे आए थे, और न कुछ मेंबरान ही थे। कमाल इसे अपना अपमान समझकर जल गया।

मुस्तफ़ा कमाल ने घर पहुँचते ही रऊफ़ को बुलवा भेजा, और जवाब तलब किया। रऊफ़ बे ने बड़ी निर्भयता से कहा कि इस्मत को लासेन कान्फ़्रेंस में भेजते समय मुझसे कब पूछा गया था। मैं वज़ीरे-आज़म हूँ, मैं इस्मत की पेशवाई करने के लिये क्यों जाता। कमाल के रुख़ से दुखी होकर आख़िर रऊफ़ ने इस्तीफ़ा दे दिया, और कमाल तथा इस्मत का विरोधी हो गया।

नौ दिन तक एसेंबली की बैठक होती रही, और सुलह-कान्फ़्रेंस की बातों पर बहस चलती रही। इस्मत का विरोध हुआ, उस पर अविश्वास का प्रस्ताव लाया गया।

इस्मत भला-बुरा जैसा भी था, कमाल का आदमी था। उसने शब्द-शब्द कमाल के हुक्मों को माना था। कमालपाशा ने अपने सारे प्रभाव को लगाकर इस्मतपाशा पर अविश्वास के प्रस्ताव को पास न होने दिया। कुछ मेंबरों को उसने वादे कर दिए, कुछ को डरा-धमकाकर दुरुस्त कर दिया। इस्मतपाशा पर विश्वास का प्रस्ताव पास हुआ, और उन्हें फिर टर्की का प्रतिनिधि बनाकर लासेन भेज दिया गया।

* * *

कमाल पीपुल-पार्टी के संगठन के काम को जी-जान से कर रहा था। वक़्त कम था, किसी समय भी ख़तरे का घंटा बज सकता था। एसेंबलीवालों ने भावी आपदा को पहचान लिया था कि ऐसी ज़बरदस्त पार्टी का नेता बनकर कमाल

चाहेगा, सो करेगा। कमालपाशा के पास उन लोगों ने एक डेपुटेशन भेजा कि पीपुल-पार्टी का सभापतित्व आप छोड़ दीजिए, क्योंकि टर्की-साम्राज्य के प्रधान होने के नाते आप किसी दल विशेष के सभापति नहीं हो सकते।

नहीं हो सकते, क्यों नहीं हो सकते। देश में सिर्फ़ एक ही पोलीटिकल पार्टी है, जिसे पीपुल-पार्टी कहा जाता है। देश के अंदर कोई प्रतिद्वंद्वी पार्टियाँ नहीं हो सकतीं। मैं पीपुल-पार्टी और स्टेट, दोनो ही का सभापति हूँ, और बना रहूँगा।

* * *

कमाल का जवाब एसेंबली को चुनौती थी। लोगों के दिमाग़ का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया। रऊफ़ बे की लीडरी में विरोधी दल इकट्ठा होने लगा।

रहमी, अदनान, क़ाज़िमकारा बेकर, रफ़त, अलीफ़ऊद और नूरुद्दीन-से साथी, जो कंधे से कंधा भिड़ाकर लड़े थे, कमाल के खिलाफ़ हो गए। इश्मत और फ़ेवज़ी के साथ कमाल अकेला पड़ गया, पर पीपुल-पार्टी और फ़ौज में उसका प्रभाव ज़बर-दस्त था।

एसेंबली में कमाल के ख़िलाफ़ वायु-मंडल बनने लगा। रऊफ़ के साथ मेंबरों ने खुले आम टीका-टिप्पणी करना शुरू कर दिया। "वे कमाल की डिक्टेटरशाही न मानेंगे, वह शासन करने के लायक़ नहीं है। अच्छा सिपहसालार है, पर बुरा राजनीतिज्ञ है; बड़ा ज़ालिम है, ख़ूँख़्वार है, दंभी और क्रांति-

कारी विचारों का पुतला है। और, सारी शक्तियों को हथिया-कर अपने में ही उन्हें केंद्रीभूत करनेवाला कमाल कौन होता है। क्या उन्होंने लड़ाइयाँ नहीं जीती हैं? क्या क़ाज़िमकारा बेकरपाशा ने आरमीनियन और रूसी फ़ौजों को नहीं हराया है? रफ़त और रऊफ़ ने ही ग्रीकों के छक्के छुड़ाए हैं—नाम कमाल का हुआ है। कमाल इस्लाम का द्रोही है, कमाल अधर्मी है।"

* * *

पर कुत्ते भूँका करते हैं, हाथी अपनी राह चला जाता है।

* * *

इस्मतपाशा को दूसरी बार लासेन कान्फ़्रेंस में पूरी सफलता मिली। टर्की को जो कुछ चाहिए था, प्रायः सब कुछ मिल गया। उसके बाद मित्र राष्ट्रों का अंतिम फ़ौजी जत्था क़ुस्तुंतुनिया को छोड़कर चला गया। फ़ौज कमाल को देवता की तरह मानती थी। जनता में कमालपाशा के नाम की पूजा होती थी। एक सिर्फ़ एसेंबली ने उसके प्रति अंड़गा-नीति अख़्तियार कर रक्खी थी।

एक समय उसके मुख्य-मुख्य प्रतिद्वंद्वी विदेशों की सैर करने—कोई योरप और कोई अमेरिका—गए हुए थे। कमाल के रुतबे आकाश-दीपक की तरह देश-भर में विकसित हो रहे थे। यही मौक़ा था, जिसकी कमाल—शासन-विधान में परिवर्तन करने के लिये—बहुत दिनों से खोज में था।

टर्की में न तो रऊफ़ वे थे, न क़ाज़िमकारा बेकर थे, न नूरुद्दीन थे और न अलीफ़ऊद। ठीक इसी मौक़े पर कमाल टर्की को प्रजातंत्र बनाने की घोषणा करेगा, और स्वयं उसका प्रथम सभापति होगा।

*　　　　*　　　　*

एक दिन रात में कमाल ने अपने मंत्रिमंडल को चानकाया में बुलाकर दावत दी। जब वे लोग ख़ूब खा-पीकर नाचने-गाने में मस्त होकर शराब पीने लगे, तब कमाल ने अपने मतलब की बातें शुरू कीं। बोला—"देखो, एसेंबलीवाले कितना परेशान करते हैं। हम लोग रात-दिन मरते-खपते रहते और देश का काम करते हैं, पर एसेंबली के सदस्य सदा बाल की खाल निकाला करते हैं। प्रत्येक मेंबर हमारा आक़ा है, जिसके प्रश्नों का उत्तर देना हमारे लिये लाज़िमी है। क्या इस तरह से गवर्नमेंट चल सकती है?"

सब एक स्वर से बोल उठे—"हरगिज़ नहीं, हरगिज़ नहीं।"

"तो फिर तुम सब लोग कल इस्तीफ़ा दे दो। मैं प्रेसिडेंट की हैसियत से मेंबरों से कह दूँगा कि अब आप सब लोग मिलकर राज-काज चलाइए, कोई भी मंत्रिमंडल इस तरह से कार्य-भार नहीं वहन कर सकता। चाहे भी जितनी ख़ुशामदें हों, तुम लोग इस्तीफ़ों को वापस लेना मंज़ूर न करना। फिर देखोगे, कैसा वाय-वैला मचेगा। प्रत्येक मेंबर तुम्हारी ख़ुशामदें करके तुम्हें शक्ति सौंपेगा। अड़ंगेबाज़ों के नेता तो देश के बाहर

हैं। मैं प्रजातंत्र घोषित करके देश को कठिनाई से निकाल ले जाऊँगा।"

* * *

दूसरे दिन कमाल की पार्टीवालों ने एसेंबली में बड़ा हंगामा मचाया। कमाल घर ही पर था, सब मंत्रियों ने एक साथ इस्तीफ़ा दे दिया। विरोधी दल लीडरों की अनुपस्थिति में हक्का-बक्का रह गया। दो दिन भी शासन का कार्य एसेंबली न चला सकी, और न नया मंत्रिमंडल ही चुन सकी। इस्मत, फ़तेह और कमालुद्दीन ने मारे बहस-मुबाहिसे के कुछ न तय होने दिया। आख़िर, पूरे ६० घंटे मीटिंग होते रहने के बाद एसेंबली ने सर्व-सम्मति से एक दरख़्वास्त प्रधान कमालपाशा के पास भेजी कि मंत्रिमंडल बनाइए। आपको पूरे अधिकार हैं, चाहे जिन शर्तों पर बनाइए। पर कमाल चानकाया से बाहर न आया, कहला भेजा कि मेंबर लोग स्वयं ही इसका निर्णय आपस में कर लें। जब फिर भी परस्पर समझौता न हो सका, तो पाशा को दुबारा बुलावा गया। वह इस शर्त पर आया कि जो भी निर्णय, जो भी शासन-विधान वह बतावेगा, वह शब्दशः मंजूर किया जायगा। लोग समझते थे कि मंत्रियों को कुछ अधिक सुबीता दे दिया जायगा, उन्हें क्या पता था कि एसेंबली में बम गिरनेवाला था।

"इस कठिन अवसर पर तुमने मुझे बुलाया है कि मैं ऐसा मंत्रिमंडल और शासन-विधान बनाऊँ, जो देश के लिये

उपयोगी हो। क्या तुम मुझे ऐसा करने के लिये पूरा हक़ देते हो?"

चारो ओर से आवाज़ें आईं—"हाँ-हाँ!"

"क्या तुम लोग मुझ पर पूर्ण विश्वास करते हो?"

उत्तर में कमालपाशा की जय और करतल-ध्वनि सुन पड़ी।

"तब सुनो। वर्तमान शासन-प्राणाली गलत है। ऐसी गवर्नमेंट दो दिन भी नहीं चल सकती है। तुमने खुद इससे खट्टी खा ली है। अतएव मैं निर्णय करता हूँ कि शासन-चक्र बदलकर प्रजा-तंत्र के रूप में परिणत कर दिया जाय, जिसकी ज़िम्मेदारी प्रेसिडेंट के प्रति रहे।"

चालीस फ़ी सदी मेंबरों ने वोट नहीं दिया। वे उठकर चले गए। जो बाक़ी थे, उनमें कमाल के दलवाले, अनुयायी और समर्थक बहुत थे। और एक बात यह भी थी कि एसेंबली के बहुसंख्यक मेंबर लिखित और मौखिक रूप से शासन-प्रणाली में परिवर्तन करने की सारी शक्ति मुस्तफ़ा के हाथों में सौंप चुके थे। कमाल के प्रस्ताव को मंज़ूर करने के सिवा कोई दूसरा रास्ता नहीं था। टर्की प्रजातंत्र राष्ट्र के रूप में घोषित कर दिया गया, और गाज़ी मुस्तफ़ा कमालपाशा उस नवीन टर्की का सर्वे-सर्वा, महाशक्तिशाली प्रेसिडेंट चुना गया, जिसे स्याह और सफ़ेद करने का सारा अख़्तियार था।

प्रजातंत्र का प्रेसिडेंट टर्की का सर्वशक्तिमान् पुरुष था। उसे अपना वज़ीरे-आज़म और मंत्रिमंडल चुनने का स्वयं हक़ था।

वही मंत्रिमंडल का भी प्रेसिडेंट था, एसेंब्ली का भी प्रेसिडेंट था, और पीपुल-पार्टी का भी प्रधान था। ऐसा चतुर्मुखी प्रेसिडेंट अखिल टर्की-साम्राज्य की सारी सेनाओं का कमांडर-इन-चीफ़ भी था।

*　　　*　　　*

गवर्नमेंट अख़बारों के सिवा सारे समाचार-पत्रों के मुखों पर ताले डाल दिए गए। विरोधी देश से बाहर निकाल दिए गए। कमाल सदा से बहुत बात करने का नहीं, पर काम का धनी था। टर्की के किसान भूखों मर रहे थे, उनका वह अन्नदाता बना, जनता अंधों की तरह इधर-उधर भटक रही थी, उसका वह पथ-प्रदर्शक बना, देश को स्वार्थी लोग लूट रहे थे, उनका वह ज़ामिन बना। कमाल-सा वीर, देश-भक्त, स्वार्थ-हीन और योग्य नेता पाकर टर्कीवाले फूले न समाए। उन्हें निश्चय हो गया कि उसके बताए हुए पथ पर चलकर हम मंज़िले-मक़सूद पर जा पहुँचेंगे।

(४६—५१)

मुस्तफ़ा कमाल के पास वे सारी विभूतियाँ थीं, जिनकी उसने आकांक्षा की थी। प्रत्येक गाँव, क़स्बे और शहर में पीपुल-पार्टी शक्तिशाली हो रही थी। फ़ौज और शासन की मशीनरी उसके हाथों में थी। कमालपाशा की आवाज़ टर्की की आवाज़ थी।

लेकिन असली लड़ाई तो अभी बाक़ी थी। कमाल ने अपने मित्रों को स्पष्टतया बतला रक्खा था कि एक दिन टर्की से मज़हबी पागलपन का अंत करना होगा। जब-जब क़ुरान और धर्म की बातें चलतीं, कमाल रोषित हो उठता। वह कहा करता कि "धर्म के लावा ने (लावा एक प्रकार की कँकरीली राख है, जो ज्वालामुखी पर्वतों को ढके रहती है।) राष्ट्र की आत्मा को दबा रक्खा है। वह अपने हाथों इस ढकने को फोड़ डालेगा, और देश की जाज्वल्यमान ज्वालामुखी शक्ति को आगे बढ़ाएगा। देश के राजनीतिक क्षेत्र में फैले हुए विष को वह अपने इंजेक्शन से हटाएगा। जब तक टर्की से मज़हब, धर्म और क़ुरान का लोप नहीं होगा, तब तक टर्की हरगिज़-हरगिज़ उन्नतिशील योरपियन राष्ट्रों की पंक्ति में नहीं बैठ सकेगा।"

"पाँच सौ साल तक टर्की में एक अरबी शेख़ के क़ानून, क़ायदे और यक़ीदे चलते रहते हैं। काहिल, सुस्त, मतलबी मुल्ले टर्की में दीवानी और फ़ौजदारी क़ानून की रचना और निर्णय का काम करते हैं।

उन्होंने शासन-विधान से लेकर जनता के खाने-पीने, जागने-सोने, उठने-बैठने, पढ़ने-लिखने, विचार करने और यहाँ तक कि स्त्री के साथ रहने तक के फ़रमान निकाल रक्खे हैं।

इस्लाम एक चरित्र-हीन अरब का निकाला हुआ मुर्दा सिद्धांत है। शायद रेगिस्तान के रहनेवाले नोमद वग़ैरह फ़िरक़ों के लिये कभी उसकी आवश्यकता रही है, पर किसी उन्नति-शील और विचारशील राष्ट्र के लिये वह फ़िज़ूल-सी चीज़ है।

'ख़ुदा का इलहाम।' अजी ख़ुदा क्या है। ख़ुदा ताला के नाम की कोई चीज़ ही नहीं है। यह वह ज़ंजीर है, जिसके द्वारा मुल्लाओं और सुल्तानों ने अपना स्वार्थ-साधन करते रहने के लिये जनता को मज़बूती से बाँध रक्खा है।

वह राजा, वह शाह और वह सुल्तान, जो धर्म की दुहाई देकर जनता पर शासन किया चाहता है, बुज़दिल है, कमज़ोर है। ऐसे निकम्मे शासक को शासन करने का कोई हक़ नहीं है।

और मुल्ले तथा मौलाना (जैसे पुरोहित और पंडे) ओफ़ ! उनका नाम लेते ही मुझे तो नफ़रत होती है। ये काहिल और अकर्मण्य लोग जनता की शक्ति को चाटे जाते हैं, और

देश के लिये बिल्कुल भार-स्वरूप हैं। किसी-न-किसी दिन मैं इनको मस्जिदों और इमामबाड़ों से कान पकड़कर बाहर कर दूँगा, और उन जगहों में पुस्तकालय, वाचनालय, अनेक सामाजिक सुधार की सभाएँ वगैरह स्थापित करूँगा। इनकी स्वार्थ-साधना बहुत सध चुकी। इनके पागलपन से देश बहुत भुगत चुका।"

कमालपाशा ऐसे-ऐसे विचारों को कलेजे में दबाए टर्की के भाग्य-विधाता के पद पर आसीन हुआ था। कहाँ तक उसे इसमें सफलता मिलेगी, कहाँ तक वह इन विचारों को कार्य-रूप में परिणत कर सकेगा, यह तो आगे आनेवाला ज़माना बतलाएगा।

तुर्क बड़े दक़ियानूस थे। धर्म उनका प्राण था; मज़हब के नाम पर उनका सब कुछ क़ुर्बान था। वे प्राचीनता-प्रिय थे, कोई भी परिवर्तन उन्हें पसद न था। मज़हब तो उनके जीवन और समाज का आधार था, प्रकाश था। यदि धर्म पर किसी ने हाथ डाला, तो नहीं कहा जा सकता कि उसका परिणाम कहाँ तक भीषण होगा।

मुस्तफ़ा कमाल को अपनी तात्कालिक सफलता में स्वयं ही संदेह था। बहुत ही सँभलकर चलने में कल्याण था। जब देश-विदेशों के पत्रकार उससे पूछते कि नवीन प्रजातंत्र का क्या 'धर्म' होगा, तो वह इस प्रश्न का उत्तर कभी साफ़-साफ़ न देता। पीपुल-पार्टी के कार्य-क्रम और सिद्धांतों में भी

मज़हबी ज़िक्र को उसने बचाया था। उसने इस विषय पर कभी कोई सार्वजनिक एलान भी न किया। समय की गति को परखते-परखते जब मौक़ा आएगा, तब ग़ाज़ी मुस्तफ़ापाशा टर्की से, धर्म के ढकोसले का पार्सल बनाकर हिंदोस्तान के मुसलमानों के समीप भेज देगा।

* * *

कमाल के प्रतिपक्षियों को उसके इन ख़यालातों का पूरा पता था। कमाल ने उन्हें बार-बार हराया था, राजनीतिक पाँसा भी उनके ख़िलाफ़ पड़ता रहा था। वे जानते थे कि एक बार अच्छी तरह पैर जमा चुकने पर कमाल को प्रेसिडेंट के महिमामय पद से हटाना असंभव हो जायगा।

अतएव बहुत शीघ्र उन्होंने कमाल के विरोध में यत्र-तत्र सर्वत्र ज़हर उगलना शुरू किया। "कमाल इस्लाम को ख़त्म करना चाहता है, ख़लीफ़ा को निकाल फेकने की उसकी पूरी मंशा है।" ऐसा कहने-सुनने को उन्हें मिसालें भी मिल जातीं। कमाल ने ख़लीफ़ा की सारी शान-शौक़त ख़त्म कर दी थी, वेतन में कमी कर दी थी, ठाट-बाट के साथ घोड़ों और ऊँटों पर सवारी निकाल सकने की मनादी कर दी थी, और कह दिया था कि ऐ ख़लीफ़ा! तेरा पद केवल एक ऐतिहासिक ढकोसला है। तू देश के लिये सफ़ेद हाथी है। देश की गाढ़ी कमाई का बहुत-सा पैसा तुझ पर नहीं ख़र्च किया जा सकता है।

उसके दुश्मन, मुख़ालिफ़ पार्टीवाले इन्हीं बातों का बतंगड़ बनाते फिरते थे। एक दिन शेख़ुल इस्लाम, कमाल के दफ़्तर में, कमाल को मज़हब की महत्त्व-पूर्ण बातें बतलाने आए। यह उनकी सरासर हिमाक़त थी कि ऐसे शेर के पिंजड़े में वह मूर्खानंद हाथ डालने चले थे। परिणाम यह हुआ कि कमाल ने उनका पोथी-पत्रा और क़ुरान वग़ैरह छीनकर दफ़्तर के बाहर फेंकवा दिया, और खड़े-खड़े मौलाना साहब को ऑफ़िस से बाहर निकलवा दिया। इस बात का बहुत प्रोपैगैंडा किया गया था।

कमाल ने टर्की की सुंदरियों को पर्दे से बाहर निकालने का प्रयत्न किया। ये हूरें अहर्निश घर में पड़ी-पड़ी सड़ा करें, और अपने ख़ाविंदों की मार और लातें सहें, यह कमाल को मंज़ूर न था। वह चाहता था, हमारी सुंदरियाँ मुँह खोले, ऊँची एँड़ी का जूता पहने, पाउडर लगाए, अपने चंद्र-मुख से सड़कों की रौनक़ बढ़ाया करें। वह अंगोरा में अँगरेज़ी ढंग के नाच चानकाया में करवाता था, जिसमें टर्की की सुंदरियाँ, योरप की कुमारियाँ और टर्क तथा विदेशी सभी शामिल होकर एक साथ नाचते-गाते थे। उसकी बीवी बड़े ऊँचे विचार-वाली स्वतंत्र प्रकृति की जगन्मोहिनी महिला थी। वह मुँह खोले, फ्राक पहने, अँगरेज़ी भाषा बोलते-चालते अंगोरा की सड़कों और दुकानों पर घूम-फिरकर अपनी बहनों को पर्दे से बाहर आने का प्रोत्साहन दिया करती। वह कमाल के

सारे कामों में सच्ची अर्धांगिनी की तरह सहायक होती रहती थी।

* * *

देश में हवा फैलाई गई कि अंगोरा के शासक तो विधर्मी हैं। ख़लीफ़ा अब्दुलमजीद क़ुस्तुंतुनिया में रहा करते थे। उन्होंने भी इस प्रचार-कार्य में मदद दी। रऊफ़ बे, अदनान, रफ़तपाशा और क़ाज़िमकारा बेकर अंगोरा छोड़कर क़ुस्तुंतुनिया में रहने लगे। जहाँ से प्रोपैगैंडा करने में विशेष सुविधा और सरलता थी। मुस्तफ़ा को बदनाम कर, उसे प्रेसिडेंटी के पद से हटाकर, प्रजातंत्र को तोड़कर, राजतंत्र को स्थापित कर, अब्दुलमजीद-से मूर्ख को शहंशाह बनाकर देश पर शासन करने की इन लोगों की स्कीम थी।

* * *

मुस्तफ़ा कमाल इन बातों से ग़ाफ़िल नहीं था। क़ुस्तुंतुनिया में कमाल के हज़ारों शत्रु और सुल्तानियत के हज़ारों मित्र थे। फिर ऐसे क़ाबिल-क़ाबिल, मशहूर व्यक्ति आंदोलन का संचालन कर रहे थे। यदि ख़लीफ़ा और ये शक्तियाँ सब एक हो गईं, तो प्रजातंत्र को ये लोग मुश्किल में डाल देंगे। कैसे स्थिति को बचाया जाय। यदि ख़लीफ़ा को निकाले देते हैं, तो बग़ावत ज़ोरों की फैलती है; यदि देरी करते हैं, तो दुश्मनों का संगठन बलवान् होता है।

वह इस इंतज़ार में था कि कोई मौक़ा आवे, और वह

मौक़ा इँगलैंड ने शीघ्र ही ला दिया। यद्यपि टर्की के साथ संधि हो चुकी थी, तथापि अँगरेज़ों की यह आंतरिक नीयत थी कि वहाँ सदा हाय-वैला मचा रहे, देश असंगठित रहे, लोग परस्पर लड़ते रहें, जिसमें जल्दी ही स्वार्थ-साधन का मौक़ा मिले। अँगरेज़ों ने उन दिनों ग़ुलाम हिंदोस्तान के मुसलमानों के दायरे से आग़ाख़ाँ-नामक एक व्यक्ति को सातवें आसमान पर चढ़ा रक्खा था। जर्मन-महायुद्ध के समय से संसार के मुस्लिम राष्ट्रों की सहानुभूति अपनी ओर खींचने के लिये आग़ाख़ाँ और अमीरअली को उन्होंने अपना बंदर बनाया था। अपने मालिकों के मुख से 'ताग धिना धिन' का चिर-परिचित राग निकलते ही इन मुस्लिम-द्वय का नाच उसी देश में प्रारंभ हो जाता, जिस देश की ओर इनका आक़ा देख देता। अतएव इन दोनो ने एक पत्र लिखा, जिसमें अपने को हिंदोस्तान-भर के मुसलमानों का प्रधान बतलाया और ख़लीफ़ा की इज़्ज़त तथा पद बनाए रखने के लिये बहुत ज़ोर दिया। और, उस पत्र को इससे पहले कि वह अंगोरा-सरकार के पास पहुँचे, क़ुस्तुंतुनिया के पत्रों में छपवा दिया।

बस, कमाल को मौक़ा मिल गया। "अँगरेज़ फिर से मुल्क में घुसना और विद्वेष की आग भड़काना चाहते हैं। आग़ाख़ाँ अगरेज़ों के एजेंट हैं। ख़लीफ़ा अँगरेज़ों के इशारों पर नाचते हैं।" वग़ैरह-वग़ैरह प्रचार शुरू हुआ। लोग अँग-रेज़ों से बहुत सशंक थे। उन्होंने सब कुछ मान लिया, जो

कुछ कमाल ने कहा। प्रजातंत्र का खुले या परोक्ष विरोध, सुल्तान के प्रति सहानुभूति और फिर से राजतंत्र क़ायम करने की चेष्टा करनेवालों के लिये एसेंबली ने एकमत से प्राण-दंड का क़ानून पास कर दिया।

"यह वक्त है, जब टर्की स्वयं अपनी देख-रेख करेगा। उसे अँगरेज़ों और हिंदोस्तानी मुसलमानों से क्या मतलब है। किसी को हमारे मामलात में दस्तंदाज़ी करने की ज़रूरत ही क्या है। ख़लीफ़ा ने सदियों तक टर्की के किसानों का ख़ून किया है।"

कमाल ने अपनी पार्टी और सरकारी कर्मचारियों की सहायता से देश-भर में ऐसा प्रचार किया कि लोग फिर से बाहरी शत्रुओं का हमला होने की आशंका करने लगे। कमाल ने कई बार टर्की को बचाया था। लोगों को विश्वास था कि इस बार भी कमाल ही हमारी रक्षा करेगा। प्रतिद्वंद्वियों का सारा विरोध फूँक मारते उड़ गया।

पर ख़लीफ़ा का ख़तना कैसे करे, ख़िलाफ़त को कैसे मेटे, सबसे बड़ा यही प्रश्न था। जब तक यह पद बना रहेगा, तब तक प्रजातंत्र का जीवन ख़तरे में पड़ने का अंदेशा रहेगा।

सबसे पहले उसने फ़ौज की नब्ज़ टटोली। फ़ेवज़ी और इस्मत के द्वारा सिपाहियों की मनोवृत्ति जानी। हफ़्तों वह फ़ौजों के सिपाहियों के बीच वार्तालाप और वाद-विवाद करता रहा।

उसे निश्चय हो गया कि जो कुछ वह करेगा, फ़ौज का बच्चा-बच्चा उसमें सहायक होगा।

*   *   *

एसेंबली के दो-एक सदस्य, जो ख़लीफ़ा की ताबड़तोड़ पैरोकारी करते रहते थे, एक रात में मार डाले गए। टर्की के धर्म-मंत्री ने एक व्याख्यान में ख़लीफ़ा की प्रशंसा की, वह निकाल दिए गए, और बतला दिया गया कि यदि फिर कभी ख़लीफ़ा के पक्ष में प्रचार करोगे, तो फाँसी के तख़्ते पर लटका दिए जाओगे।

रऊफ़ बे को उसने कुस्तुंतुनिया से बुलवा भेजा, और प्रजातंत्र, उसके प्रेसिडेंट तथा पीपुल-पार्टी के प्रति ख़ैरख़्वाह बने रहने की क़सम खाने के लिये मजबूर किया। अन्यथा एसेंबली और पार्टी से बग़ावत के इलज़ाम पर निकाल दिए जाने का भय था। स्तंबोल के गवर्नर को तार द्वारा सूचना दे दी गई कि अब्दुलमजीद की फ़ौज-फाटा सब छीन लिया जाय, और निकलने-पैठने के लिये पुरानी पालकी के अलावा और कोई सवारी न रहे। खलीफ़ा की तनख़्वाह घटाकर बहुत ही कम कर दी गई, और उसके सहायकों तथा मित्रों को फ़ौरन् हट जाने की सलाह दी गई। बस, फिर क्या था, सारा मजमा तितर-बितर हो गया, खलीफ़ा की शानोशौक़त दो दिन के अंदर धूल में मिल गई।

कुछ लोगों ने कमाल से आग्रह किया कि आप ख़ुद ही

ख़लीफ़ा बन जाइए। आप विजयी सेनापति और स्वतंत्र देश के सरताज हैं।

कमाल ने कहा—"सब कुछ हूँ, पर ऐसा बेवक़ूफ़ नहीं कि जिस बात की मैं मुख़ालिफ़त कर रहा हूँ, उसी को अपने सर पर ओढ़ लूँ। 'दूजे बैंगन बावरे, अपने बैंगन पथ्य' भला यह मैं कैसे कर सकता हूँ।"

* * *

ख़लीफ़ा के ख़िलाफ़ बड़े-बड़े इलज़ाम थे। कुछ तो सही थे, और कुछ प्रचार-कार्य में मदद देने के लिये बनाए गए थे। फ़ौज और जनतावाले उन्हें देश का शत्रु और अँगरेज़ों का एजेंट समझने लगे थे।

एसेंबलीवाले भी नाराज़ हो उठे। उन्हें भी डर था कि अँगरेज़ देश में फिर घुसकर बना-बनाया खेल बिगाड़ देंगे।

कमालपाशा बहुत दिनों से ऐसे स्वर्ण अवसर की तलाश में था। सारा वायु-मंडल अपने अनुकूल देख ३ मार्च सन् १९२४ को 'प्रजातंत्र की रक्षार्थ ख़लीफ़ा को देश-निकाले'-वाला बिल महासभा में पेश करते हुए बोला—"यदि आज आप लोग इस बिल को मंज़ूर नहीं करते, तो निश्चय रखिए, आप देश को विदेशियों के हाथ बेच देंगे। किसी-न-किसी दिन ख़लीफ़ा को गद्दीनशीन करने के लिये गौरांग महाप्रभु टर्की पर चढ़ आएँगे। क्या ऐसे ख़लीफ़ा को, ऐसी खिलाफ़त को, जो देश की बेहतरी में बग़ावत करे, बनाए रखने में आप मदद

देंगे। ख़लीफ़ा के साथ-ही-साथ आप लोग पुराने राजवंशवालों को भी टर्की छोड़ जाने का हुक्म दे दीजिए, वरना फिर मुझे दोष न दीजिएगा, यदि कोई आफ़त बरपा हो जाय कि वाह कमाल, तुम भी जाग्रत् न रह सके, तुम भी देश की रक्षा न कर सके।"

बिल का एक व्यक्ति ने भी विरोध न किया। ज़मीन तैयार थी, कमाल के एक घंटे के ओजस्वी व्याख्यान ने रही-सही द्विविधा भी दूर कर दी। टर्की की बुनियाद से ख़लीफ़ा और सुल्तान-वंश का बीज ही निकल गया।

उसी रात में स्तंबोल के गवर्नर को ऑर्डर मिला कि दिन निकलने से पहले ख़लीफ़ा मजीद को टर्की से बाहर निकाल दिया जाय। हुक्मनामे को पाकर गवर्नर ने घंटे-भर की भी चैन न ली। पुलिस और फ़ौज की दो टुकड़ियाँ बुलाईं, और ठीक आधी रात में मोटरों पर चढ़ी हुई कमालिस्ट टोली ख़लीफ़ा के दरवाज़े पर पहुँच गई। न किसी ने फ़र्शी सलाम की, और न किसी ने ख़लीफ़ा के आदर में पगड़ी ही उतारी। एक बंडल कपड़ा और थोड़े-से राह-ख़र्च के लिये सोने के सिक्के देकर तमाम मुस्लिम संसार के ख़लीफ़ा—जो धरती पर ख़ुदा की साया समझे जाते थे—बंद गाड़ी में, सिपाहियों के पहरे में, टर्की से बाहर, स्विटज़रलैंड की सीमा में, भेज दिए गए, जहाँ से फिर पता न चला कि वह कहाँ चले गए। उसी तरह दो दिन बाद पुराने शाही ख़ानदान के शाहज़ादे और शाहज़ादियाँ टर्की की सीमा के बाहर खदेड़ दिए गए।

इन सबकी बिदायगी के समय या बाद में टर्की में एक कुत्ता भी न भूँका। न किसी ने मुख़ालिफ़त की, न किसी ने महदर्दी ही ज़ाहिर की। यह तो जैसे का तैसा फल था। कमालपाशा टर्की का सबसे बलवान्, सबसे शक्तिमान्, सबसे भयंकर, सबसे प्रिय और सबसे सुयोग्य शासक था। जनता की निगाहों में उसका दर्जा ख़ुदा के बराबर था।

(५२—५३)

मुस्तफ़ा कमाल का सार्वजनिक जीवन विजयों और सफलताओं से भरा हुआ था, पर गाज़ी का घरेलू जीवन पराजयों और कठिनाइयों से घिरा हुआ था।

मुस्तफ़ा कमाल फ़ौजी व्यक्ति था, अतएव प्रत्येक बात को उसी दृष्टि-कोण से देखता था। पर घर में तो फ़ौजी अनुशासन नहीं चला करता। गार्हस्थ्य जीवन के सुख की कुंजी तो सहनशीलता और समानता है, जिनका कमाल में नितांत अभाव था। जैसे उसने दुश्मनों को जीता था, वैसे घरवालों को जीतना तो असंभव था। दोनो के दृष्टि-कोण में कितना भेद था।

कमाल का स्वभाव बड़ा चिड़चिड़ा था। इतने वर्षों तक लगातार युद्ध-ही-युद्ध में लगे रहने के कारण वह और भी बुलडॉग हो गया था। कुछ-कुछ सुस्ती आ चली थी, जिसे वह शराब पीकर, सुंदरियों के साथ रहकर और नाच-गाकर दूर करने की चेष्टा करता था। उसके व्यक्तिगत जीवन में सुख और शांति का पूर्णतया अभाव था।

उसकी मा वहाँ चली गई थीं, जहाँ से लौटकर आने की कोई आशा ही नहीं थी। दो वर्ष तक वह चानकाया में रहीं, पर अंगोरा की भीषण सरदी ने उनकी तंदुरुस्ती तोड़

डाली। लतीफ़ा अपनी बूढ़ी सास को लेकर, आबोहवा की बदली के लिये, स्मरना गई थी, पर वहीं उनकी क़ब्र बन गई। वह कमाल को बहुत प्यार करती थीं। आख़िर मा थीं। कमाल के अपना सगा कोई न था, सब मर-खप चुके थे, एक दयार्द्र-हृदया जननी थीं, उन्हें भी बदक़िस्मती उठा ले गई। आख़िरी वक्त तक कमाल ज़ुबेदा पर पूर्ण विश्वास करता रहा। अपने मन की बात अगर किसी से न भी कहता, तो ज़ुबेदा से ज़रूर कह डालता। वह उसकी बात को, सीख और डाँट को सुनता भी था, और बड़े प्यार से बहुधा उसकी बातों को मान लिया करता था। सिर्फ़ बूढ़ी मा ही उसकी आलोचना कर सकती थीं, उसे भला-बुरा कह सकती थीं। कमाल जानता था कि ज़ुबेदा की चाह में कोई स्वार्थ या कोई प्रभुत्व की भावना नहीं है। उसकी बातें निरी ममत्व-भरी होती थीं। सुख और दुःख में एक-सा बर्ताव और प्यार करनेवाली केवल मा ही थीं। यदि अंत में कमाल बिल्कुल असफल रहा होता, तो भी वह उसे उतना ही चाहतीं। मा की ग़ैरमौजूदगी कमाल को बहुत खटकी थी।

और लतीफ़ा—सुंदरी, सुनहली, नवेली वह अप्सरा—अफ़सोस! कमाल से जुदा हो चुकी थी। शादी के बाद के कुछ ही महीने स्वर्गीय सुख में बीते थे। कमाल लतीफ़ा के लिये दीवाना और पागल रहता था। जहाँ जाता, अपनी हूर को बगलगीर रखता। कभी-कभी मोटर पर उसे बैठाल स्वयं

हाँकता हुआ अंगोरा की सड़कों से बड़ी दूर, सुदूर पहाड़ियों में, निकल जाता, और जंगल में मंगल मनाता। लतीफ़ा अहर्निश कमाल के साथ परछाईं की तरह रहती थी। घर का सुप्रबंध रखती और हर तरह से कमाल को सुख और आराम पहुँचाने की चेष्टा करती थी।

कहते हैं, उस समय सारी टर्की में वैसी हसीन औरत नहीं थी। क़ुस्तुंतुनिया, अंगोरा और स्मरना प्रभृति स्थानों में उसके रूप की शोहरत थी। उसके रूप के तरकश से समय-समय पर काम के ऐसे अमोघ बाण छूटते थे कि बड़े-बड़े घायल हो जाते थे। और, यदि वह कमालपाशा-जैसे व्यक्ति की बीवी न होती, तो टर्की में हज़ारहा बार छुरे और खंजर चल जाते। टर्की के मनचले युवक लतीफ़ा के नाम की आराधना किया करते थे।

लजीली, सजीली लतीफ़ा रूप की रानी के समान चान-काया के कमरे में जब खड़ी होती, तो प्रकाश फैल जाता, झाड़ जलाने की ज़रूरत ही न रह जाती। आँखें चार होते ही मुस्किरा देती, पाशा का रोम-रोम पुलकित हो उठता—जैसे सारी देह में बिजली दौड़ जाती।

रूप की मिसाल बहुधा चाँद से दी जाती है, पर लतीफ़ा के मुख पर सौ चंद्रमा निछावर हो सकते थे। दूध-सा उज्ज्वल रंग, फूल की पंखड़ियों-सी कोमल त्वचा, सेब-से रंग के मुख-मंडल पर काली-काली अलकों का नज़्ज़ारा कलेजे को चाक-चाक किए देता था। उसकी मद-भरी निगाहों में बड़ा नशा था,

उसकी सलोनी मुस्कान में तबाह कर देनेवाला जादू था। कमाल तन-मन से उस पर फ़िदा था।

वे कैसे सोने के दिन थे, जब अश्विनीकुमार-सा सुंदर कमाल अप्सरा-सी लतीफ़ा के हाथ में हाथ डाले कभी पार्कों, कभी लानों, कभी बागीचों और कभी पहाड़ियों पर विचरा करता था। कभी लताओं के झुरमुट में जाकर विश्राम करता और कभी पहाड़ियों के अंचल में जाकर अपने जीवन को कृतार्थ करता। न कोई देखनेवाला था, न कोई सुननेवाला। उन दिनों उन दोनो के लिये सारा संसार आनंद के सागर में डूबा हुआ था।

* * *

लेकिन यह सब सपने के समान जल्दी ही ख़त्म हो गया। जवानी का पहला उफान आया और चला गया। कशिश कम होने लगी। कमाल-सा भौंरा एक कली में बँधकर रहने से इनकार करने लगा।

उसने शराब की शरण ली, नाचों की शरण ली और अंगोरा की एक-से-एक बढ़कर नाज़नियों से दोस्ती क़ायम की।

"मैं चाहता था, सदा अकेला रहता, जैसे चाहता, वैसे स्वच्छंदता-पूर्वक विचरण करता, न-जाने कहाँ का यह झमेला मेरे गले पड़ गया।" कमाल कहा करता था।

लतीफ़ा—पढ़ी-लिखी, समझदार, तेज़-मिज़ाज लतीफ़ा—भला यह कैसे बरदाश्त करती। उसने उस पर बेवफ़ाई का सच्चा इल्ज़ाम

लगाया, शराब का विरोध किया, और हूरों तथा गिल्मों को मकान में घुसने से मना कर दिया।

लतीफ़ा के मायकेवाले अंगोरा आए हुए थे। वे व्यापार के लिये विशेष सुविधाएँ और हक़ माँग रहे थे। कमाल को यह मंजूर न हुआ, क्योंकि उसकी दृष्टि में सब कोई बराबर थे। लतीफ़ा को कमाल की यह हरकत बहुत बुरी लगी।

आख़िर दोनो के बीच कलह होने लगी। दोनो ही में सहनशीलता की भावना नहीं थी। लतीफ़ा राजनीतिज्ञ थी, स्वतंत्र प्रकृति की थी, और स्त्रियों के समानाधिकार पर सार-गर्भित व्याख्यान दिया करती थी। उसने पाश्चात्य देशों में शिक्षा पाई थी, और फ़्रांस तथा इँगलैंड की हवा खाई थी, अतएव वह मुस्तफ़ा की डिक्टेटर-शिप अपने संबंध में बरदाश्त न कर सकी।

अभाग्य-वश उन दोनो की प्रेम-ग्रंथियों को बाँधनेवाली कोई संतान भी न हुई। यदि उन दोनो के दरम्यान कोई छोटी-सी प्रेम की पुतली (संतान) रही होती, तो संभव था, मज़ा किर-किरा न होता, मामला बहुत दूर तक न बढ़ने पाता। उसकी तोतली बोली, मा और अब्बा के फटे हुए दिलों को सरेस की तरह जोड़ देती, पर ख़ुदा की कुछ और ही मरज़ी थी—डिक्टेटर कमालपाशा पर भी उन्हें अपनी डिक्टेटरी चलानी थी।

घर का जीवन जब असह्य हो गया, तब दोनो ने पृथक् होने का विचार किया। उन दिनों बात-बात पर मतभेद और

झगड़ा हो जाता था। दृष्टि-कोण ही बदल गया था, प्रेम का सरोवर सूख चुका था, कोई दूसरा रास्ता नहीं था।

कमाल ने इस विषय पर न किसी से राय ली, न किसी से सलाह-मशविरा किया। एक दिन सुबह उठकर ख़ुद ही तलाक़नामा लिखा, दस्तख़त किए, और कोर्ट में भिजवा दिया। उसने स्वयं ही एसेंबली को सूचना भेज दी, तथा समाचार-पत्रों और राजदूतों को भी अपने कृत्य से सूचित कर दिया। घंटे-भर के अंदर चानकाया छोड़ जाने का लतीफ़ा को हुक्म हो गया। कमाल की पशुता और हृदय-हीनता का यह एक अजीबो-ग़रीब नज़्ज़ारा था।

* * *

उसके बाद तो फिर कुछ बाँध ही न रह गया। इन्हीं बातों पर उसके मित्रों तक से झगड़ा हो गया। आरिफ़—जो कमाल का लँगोटिया यार था, और प्रत्येक ख़तरे की घड़ी में उसके साथ रहा था—कमाल से ऊबकर, दुतकारा जाकर, बेइज़्ज़त किया जाकर मुख़ालिफ़ पार्टीवालों से मिल गया था। पर कमाल को किसी की कुछ परवा न थी। वह ख़ूँख़्वार भेड़िए की तरह एक ओर देश के दुश्मनों को तरेरता रहता और दूसरी ओर अपने शत्रुओं से बदला लेता रहता। शक्ति और सफलता उसकी चेरी बनी हुई थीं। उसको मारने की दो बार चेष्टा की गई। एक बार उसके भोजन में विष मिलाया गया, और दूसरी बार उस पर बम फेंका गया। ज़हर ने उसके शरीर पर असर

तो काफ़ी किया, पर तबीबों ने कमाल को मरने से बचा लिया। उस समय की हालत देखने लायक़ थी, जब कमाल ज़हर के जोश से फड़फड़ा रहा था। टर्कीवाले रोते थे कि हाय! अब हम कैसे रहेंगे। आदमी, औरतें, बच्चे और बूढ़े पचास-पचास मील से पैदल कमाल की हालत जानने के लिये दौड़े चले आते थे। खैर, कमाल देश की शुभ भावनाओं से अच्छा हो गया, और टर्की के पुनर्निर्माण के कार्य में जी-जान से लग गया।

कमाल का कथन है कि मैं समूचा टर्की हूँ। मेरे नाश करने के माने टर्की को सत्यानाश करने के हैं। यह बात उस दिन जितनी सत्य थी, उतनी ही आज भी सच है। कमाल के विना टर्की चाँद के विना रजनी है।

कमाल किसी को क्षमा करना नहीं जानता है। आरिफ़-जैसे दोस्त को उसने फाँसी लटकवा दिया है। क़ाज़िमक़ारा बेक़रपाशा-जैसे सहायक को उसने ज़लील करके छोड़ दिया है। वह देश में अपने सिवा किसी की शक्ति और हस्ती नहीं देख सकता है।

एक बार फ़रमाबरदार हश्मत को निकालकर फ़तेह बे को वह वज़ीरे-आज़म बना चुका है। हश्मत ख़ामोश, क़ाबिल और मेहनती आदमी है। वह सदा कमाल का मुख्य सहायक रहा है। गाज़ीपाशा कुछ दिनों के लिये उससे चिढ़ गया था, पर उसके विना उसका काम न चला, और तब फिर से अपने उस सच्चे साथी को बुलाकर कमाल ने प्रधान मंत्री के पद पर आसीन किया है।

देश में कई बार अशांति उठ चुकी है। दरवेशों ने कई बार बगावत की है। सुल्तान और ख़लीफ़ा को फिर से गद्दीनशीन

करने की कई बार चेष्टा की जा चुकी है। इँगलैंड कुरदों को उभाड़कर कई बार प्रजातंत्र को मेटने की कोशिश कर चुका है। पर कमाल ने सारे खतरों से टर्की को बचाया है। जब तक कमाल ज़िंदा है, तब तक टर्की का बाल बाँका नहीं हो सकता, टर्कीवालों को यह विश्वास हो गया है। एसेंबली ने सर्व-सम्मति से कमालपाशा को डिक्टेटर की शक्ति दे रक्खी है। उसकी कार्य-शक्ति में सबों को अदम्य विश्वास है "मैंने शत्रुओं को जीता है, देश को शत्रु-हीन कर दिया है, अब मैं जनता को जीतूँगा, क्योंकि जनता के बीच से तमाम बुराइयों, सामाजिक कुरीतियों, गंदे रिवाजों और दक़ियानूसी विचारों को दूर कर देश का पुनर्निर्माण करना है।"

* * *

"पर्दे की प्रथा हट जानी चाहिए। पर्दे को फाड़ फेकूँगा, क्योंकि पर्दे ने महिला-समाज की बुद्धि पर पर्दा डाल रक्खा है। उनका शारीरिक ह्रास पर्दे ने ही किया है। सामाजिक, राजनीतिक, वैदेशिक और साहित्यिक कोई भी ज्ञान स्त्रियों में नहीं। इसका मूल-कारण उनका पर्दे के अंदर रहना है। और, सबसे बड़ी बात यह है कि पर्दा ओटोमन राजवंश तथा मुसलमानियत की निशानी है। इसे ज़मींदोज़ कर देना मेरा मुख्य काम है।"

"तुर्कों की पोशाक कितनी भद्दी, कितनी ढीली-ढाली, पुरानी लबड़धोंधों की निशानी है। ज़मीन तक लटकता हुआ चोग़ा

है, गज़ों लंबी पगड़ी है, या असभ्यों-सी, रीछ-सी बाल-दार टोपी है। चादर गिरती-पड़ती ज़मीन में लिथरती जाती है। यह क्या फ़ौजी क़ौम और सभ्य समाज की पोशाक है।"

*　　　*　　　*

उसने सतर्क होकर काम करना शुरू किया। उसने सबसे पहले अपने शरीर-रक्षकों को अपने हाथों हैट पहनाई। जब उन्होंने कुछ न कहा, तब अपनी ख़ास फ़ौज को उसने योर-पीय पोशाक बाँटी। धूप, धूल और मेह से बचने में यह हैट कितनी मदद देगी, इसकी उसने फ़ौजों में जाकर स्वयं व्याख्या की। सिपाहियों ने कुछ एतराज़ न किया, ख़ुशी-ख़ुशी अपने सेनापति की दी हुई वर्दी पहन ली। फिर तो फ़ौज में हैट, हाफ़शर्ट, हाफ़पैंट, मोज़े और बूट का फ़ैशन चल पड़ा। चंद महीनों के अंदर ही टर्की-सेना अँगरेज़ी सेना के लिबास में सज्जित हो गई।

पुराने ज़माने में पीछे बाल रखाए जाते थे। यह युग आगे की ओर, माथे पर, अँगरेज़ी कट के उम्दा बाल रखने की चाह करता है। उससे मस्तिष्क और सुंदरता दोनो ही को लाभ है। फ़ौजों में शेविंग सैलून खुल गए, सिपाहियों ने अँगरेज़ी कट के बालों को बहुत पसंद किया।

सेना की ओर से निश्चित होकर वह जनता की ओर झुका। (काले समुद्र) के किनारे-किनारे बड़ी दूर तक यात्रा

कर डाली। खुले गले का कोट, पैंट, नेकटाई और हैट में कमालपाशा खूब जँचता था।

साधारण तुर्क के लिये हैट काफ़िर की निशानी थी, यहूदियों और मक्कार ईसाइयों की निशानी थी, पर कमाल ने सभाएँ कीं, और समझाया कि हैट अर्वाचीन काल की सभ्यता की पगड़ी है। यदि हमको सभ्य बनना है, और इसके कोई माने नहीं कि क्यों नहीं बनना है, तो हमको अंतर्राष्ट्रीय और सभ्य पोशाकें पहननी चाहिए। लाल तुर्की टोपी मूर्खता का चिह्न है, इसे तुरंत हटाना चाहिए।

यदि कमाल के अलावा किसी ने यह हरकत की होती, तो वह सरे बाज़ार मार दिया गया होता, उसकी खैरियत न रही होती। पर कमाल जब कहता था कि क्या मैं भी तुम्हारे अनहित की बात कहूँगा, तब लोग सोचने-विचारने लगते थे। कमाल-पाशा टर्की के लिये खुदाई देन है, भली या बुरी जो कुछ वह कहता है, तुर्क बड़ी संजीदगी से उस पर गौर करते हैं, और जहाँ तक मुमकिन होता है, उस पर अमल करते हैं।

पर कमाल तो मुमकिन, शायद और मुनासिब शब्दों को अपनी डिक्शनरी में स्थान ही नहीं देता था। वह जल्दी ही टर्की की पोशाक की कायाकल्प करना चाहता था।

पर टर्क उस ओर से उदासीन रहे। फिर क्या था, कमाल झल्ला उठा। कमाल जानता था कि अपने लोगों को कैसे मनाना और जगाना चाहिए। उसकी निगाहों में टर्की के सारे लोग

मकतब के बच्चे थे, और वह स्वयं था स्कूल-मास्टर। कमाल की धारणा थी कि इन सीधे-सादे मूर्ख बच्चों को जैसा चाहूँगा, ढाल लूँगा।

जब लड़के समझाने से नहीं माना करते, तब अध्यापकगण बेंत की शरण लेते हैं। कमाल भी वही करने लगा। उसके हुक्म के अनुसार एसेंबली ने क़ानून पास कर दिया कि लाल तुर्की टोपी पहनना जुर्म है। दो दिन बाद जगह-जगह की पुलिस ने तुर्की टोपियों की ज़ब्ती शुरू कर दी। जो कोई मुख़ालिफ़त करता, उसकी जगह हवालात में थी।

दक़ियानूसी जनता गुर्रा उठी। जो किसान ऊँची टोपी पहने शहरों व क़स्बों में आते, वे नंगे सर लौटकर जाते। पुलिसवाले उनके सरों से फ़ैज़ (एक तरह की तुर्की टोपी) उतार लेते। एक दीनदार मुसलमान के लिये नंगे सर घर जाना शर्म की बात थी, उससे उसके स्वाभिमान पर ठेस लगती थी।

जनता ने विद्रोह करने पर कमर कसी। वे काफ़िरों की हैट नहीं पहनेंगे। सिवास, इरज़ुरम, मारश और कोई एक दर्जन क़स्बों में सरकारी अधिकारी ईंटों से मारे गए। मुल्ले और मौलवी जो कमाल के चिरशत्रु थे, आगे बढ़े, और जनता को भड़काने लगे। अंगोरा की सरकार मज़हब और नबी की दुश्मन है; क़ुरान में चोटीदार हैट लगाना मना है। एसेंबली में जनरल नूरुद्दीनपाशा इनके प्रतिनिधि बनकर विरोध करने लगे।

क्रांतियाँ ऐसे नहीं हुआ करतीं, विना खून के प्राचीनता नहीं हटा करती। वह विप्लव, जिसकी नींव में खून से सना हुआ गारा नहीं लगा है, कभी स्थायी नहीं हो सकता—कमाल ने ऐसा एलान करते हुए दमन का हुक्म दे दिया।

जनरल नूरुद्दीन वेइज़्ज़ती के साथ एसेंबली से खदेड़ दिए गए। उसने हैट और बूट से लैस तुर्की सैनिकों को विद्रोहियों के दमन के लिये भेजा। कोई सौ-डेढ़ सौ टर्क मारे गए, क़रीब इतने ही क़ैद किए गए। बहुत-से देश से निकाल दिए गए।

मुख़ालिफ़त बंद हो गई। हैट पहन लेने में ही तुर्कों ने ख़ैरियत समझी। प्रत्येक टर्क को हैट की तलाश हुई। किसी गाँव में एक आरमीनियन दुकानदार के यहाँ पर लगी हुई महिलाओं की चटाईवाली हैटें रक्खी थीं। लोगों ने वही पहन लीं। उन्हें तो किसी तरह की हैट चाहिए थी।

आस्ट्रिया से लाखों हैटें मँगाई गईं। दुकानदारों की सारी हैटें एक हफ़्ते के अंदर बिक गईं। फ़ैज़ टर्की से बिदा हो गया, टर्की के प्रत्येक व्यक्ति ने सर पर हैट पहन ली।

उन्हीं दिनों मक्का में सारे दुनिया के मुसलमानों की कान्फ़्रेंस थी। इस सभा में कमाल ने अपने मित्र इदिब सरवत को, जो सदा हैट पहनता था, प्रतिनिधि बनाकर भेजा। मध्य एशिया, आफ़्रिका, अरब, हिंदोस्तान और मलाया प्रभृति देशों से बड़े-बड़े दीनदार मुसलमान आए थे, जो क़ुरान का शब्द-शब्द पढ़कर ज़िंदगी के क़दम बढ़ाते थे। कमाल के डर के मारे

सबने इदिब का बड़े आव-भगत के साथ स्वागत किया। न तो उसकी बेइज़्ज़ती हुई, और न वह मार ही डाला गया। योरपियन पोशाक का टर्की में प्रचार हो गया।

* * *

इसके बाद कमाल ने मज़हब पर हमला किया। यह खुदा क्या, यह बाँग देना क्या, यह मस्जिदों में जाना क्या। यह सब बुज़दिली और मूर्खता की निशानी है। नवीन टर्की को ऐसे पोच विचारों की ज़रूरत नहीं है।

धर्म, मज़हब अपना-अपना व्यक्तिगत है, इससे राष्ट्र से कोई वास्ता नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति किस मज़हब में शामिल होकर रहेगा, यह उसके स्वयं सोचने की बात है। मेरी दृष्टि में तो धर्म एक फ़िज़ूल-सी चीज़ है।

कमालपाशा के विचार पीपुल-पार्टी के लिये आदर्श का काम करते थे। धर्म के ख़िलाफ़ बड़ा ज़बरदस्त प्रोपैगैंडा उठा। लोगों ने मस्जिदों में जाना बंद कर दिया। सड़कों पर खुले आम धर्म के विरुद्ध वाद-विवाद होने लगा। धर्म का न मानना टर्की में एक फ़ैशन हो गया।

* * *

लेकिन जब तक दरवेश, इमामबाड़े और मुल्लाओं के बड़े-बड़े विहार खुले हुए हैं, तब तक इस सुधार की नींव मज़बूत नहीं। इन लोगों के पास काफ़ी धन-दौलत भी थी। त्योहारों में मज़हब के नाम पर इन्हें जनता से बड़ी रक़म मिला करती

थी। एसेंबली में एक रात एक बिल पास करके मौलानाओं के धर्म-मंडलों को ग़ैर क़ानूनी क़रार दे दिया गया, दरवेशों को सड़कों पर निकाल दिया। "ज़िंदा रहना है, तो हराम की रोटियाँ तोड़ना बंद कर कुछ काम करो।" उनकी जायदादें ज़ब्त कर ली गईं, धन-दौलत छीनकर सरकारी ख़ज़ाने में जमा कर दी गई। कमालपाशा ने बात कहते धर्माडंबर और दक़ियानूसी शैलो की टर्की से इति कर दी।

*　　*　　*

टर्की में पर्दा फाड़ फेका गया है। कमाल की बीबी लतीफ़ा ने पर्दे के विरुद्ध घोर आंदोलन किया था। स्त्रियों को समानता के अधिकार दिलाने में भी उसका बहुत बड़ा हाथ था। हज़ारों विदुषी महिलाओं ने स्त्री-समाज की दयनीय गति सुधारने में उसका साथ दिया था। एसेंबली ने स्त्रियों के समानाधिकार का क़ानून पास कर दिया। बुरक़ा हट गया है। ऊँची एँड़ी का जूता और अँगरेज़ी वेश-भूषा प्रचलित हो पड़ी है। क़ुस्तुंतुनिया की सड़कों पर मुँह खोले हुए टर्की की हूरों के दल-के-दल नज़र आते हैं। वे ऑफ़िसों में भी काम करती हैं, टाइप करती हैं। वहाँ की स्त्रियाँ अब आर्थिक प्रश्न के लिये पुरुषों पर निर्भर नहीं हैं। वे पुरुषों की दासी भी नहीं हैं। स्त्री और पुरुष टर्की में दो समान अंग समझे जाते हैं। यदि तुर्क लोग अँगरेज़ी ढंग के बाल माथे पर रखाने लगे हैं, तो स्त्रियाँ भी बाल कटाने के सैलूनों में धड़धड़ाती हुई जाने लगी हैं। बाब, सिंगिल

और छोटे बालों के रखाने का स्त्रियों में भी फ़ैशन चल पड़ा है, यद्यपि अन्यान्य योरपीय सुंदरियों की तरह वहाँवाली रमणियाँ भी फिर से लंबे बाल रखाने लगी हैं। कहने का तात्पर्य यह कि उनके दृष्टि-कोण में नवीनता आ गई है। महिलाओं ने राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, दैनिक रहन-सहन और फ़ैशन के क्षेत्रों में बिल्कुल क्रांति मचा दी है। हाँ, टर्की में अभी ऐसी-ऐसी जगहें भी मिल सकती हैं, जहाँ नई टर्की की आवाज़ नहीं पहुँची है, पर शहरों से क़स्बों में, कस्बों से गाँवों में और गाँवों से झोपड़े-झोपड़े में दीपक की ज्योति धीरे-धीरे पहुँच रही है, पहुँचने लगी है, और अपना प्रकाश फैला रही है। कूप-मंडूक एशियाटिक पूर्वी देशों के लिये टर्की की प्रगतिशील जागृति और उन्नति उदाहरण, मिसाल और आदर्श का काम दे सकती है, क्योंकि इसी में उनका कल्याण है।

"टर्की में बना सामान ख़रीदो, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करो, स्वदेशी से प्रेम करो। देश के वाणिज्य-व्यवसाय की तरक्क़ी करो। मैनचेस्टर के, देश-विदेशों के कपड़े का बाइकाट करो। केवल स्वदेशी वस्त्रों से अपने शरीर को ढको। यदि इतना खयाल नहीं रक्खोगे, तो देश का वस्त्र-व्यवसाय मर जायगा, मुल्क तबाह हो जायगा। छिः-छिः! लज्जा ढकने के लिये और कफ़न के लिये विदेशों के कपड़े का व्यवहार कैसा? जो भी असल तुर्क होगा, जिसे जर्रा-भर भी मुल्क की बेहतरी का ख़याल होगा, वह कभी विलायती कपड़ा नहीं पहनेगा।" कमाल बार-बार यही कहा करता था।

* * *

झुककर सलाम करने का, बेहूदा, गुलामियत से भरा हुआ, तरीक़ा टर्की से उठा दिया गया। ज़रा-सा टोप को उठाकर सलाम देना और सलाम लेना लोगों को सिखलाया गया। पुराने तरीक़े से स्वाभिमान नष्ट होता था, सलाम करनेवाला अपने को छोटा और नीचा समझता था।

* * *

टर्की फ़ॉर दी टर्क्स (टर्की तुर्कों के लिये है) कमालपाशा की सबसे बड़ी आवाज़ है।

हम प्रत्येक़ वस्तु और विषय को एक तुर्क की आँखों से देखना चाहते हैं। हम प्रत्येक बात को टर्की में राष्ट्रीयकरण करना चाहते हैं।

क़ानून बना। टर्की-ज़बान में विदेशी भाषाओं के हज़ारों शब्द भरे पड़े थे, अरबी, फ़ारसी और पश्तो ने भाषा के दरवाज़े तंग कर रक्खे थे। वे सब निकाले गए। टर्की-भाषा की बुनियाद तार-तार थी। वह ज़बान ज़िंदा की गई। किताबें, गाने और सरकारी कागज़ात असल टर्की-भाषा में लिखे जाने लगे।

क़ुरान का शुद्ध तर्जुमा टर्की में किया गया। जो भी मस्जिद में जाकर नमाज़ पढ़े, उसे टर्किश भाषा की शब्दावली व्यवहार करने का हुक्म हो गया।

चिट्ठियों पर लगाने के लिये नए टिकट बने। कमालपाशा उन पर ख़ूँख़्वार भेड़िए की तरह बैठा हुआ संसार की ओर ताक रहा है। उन पर टर्की अक्षरों में ही मूल्य लिखा जाने लगा है।

विदेशियों के स्कूलों, ख़ासकर ईसाई-पादरियों के विद्यालयों, के ख़िलाफ़ वायु-मंडल बनाया गया। लड़कों ने वहाँ जाना बंद कर दिया। सरकारी मकतबों में नई शैली से, नई ज़बान में पढ़ाई का काम शुरू हुआ।

व्यापारियों के लिये टर्की-भाषा में ही पत्र-व्यवहार करने और

हिसाब-किताब रखने का हुक्म हो गया। चाहे वह अँगरेज़ हो, या यहूदी या जर्मन, उसे टर्की-लिपि में लिखना-पढ़ना पड़ता था।

कमाल ने शिक्षा-प्रचार के लिये अटूट परिश्रम किया है। भाषा की टेढ़ी-मेढ़ी लिपि बदलकर रोमन अक्षरों में कर दी गई है। पहले उसने स्वयं रोमन लिपि का अध्ययन किया, फिर उसके साथियों ने सीखी, और जब सरकारी विभाग उस लिपि के इस्तेमाल में पारंगत हो गया, तब अशिक्षा के ख़िलाफ़ उसने लड़ाई छेड़ दी। कभी उसके हाथ में बंदूक़ और तलवार रहती थी, पर अब चाक खड़िया और पुस्तक ही उसकी सर्वेसर्वा रहती हैं। शिक्षा का युग है। शारीरिक शक्ति का वह महत्त्व नहीं है, जो मस्तिष्क के विकास का है। अशिक्षित मनुष्य कूप-मंडूक के समान पशुओं की श्रेणी में रहकर जीवन पार करता है। संसार के ज्ञान और विज्ञान का उसे कुछ पता नहीं रहता है। अतएव कमाल ने सारे देश-भाइयों को शिक्षित करना विचारा है। बड़ी तेज़ी से शिक्षा का काम आगे बढ़ रहा है। शिक्षा अनिवार्य और निःशुल्क रक्खी गई है। कमाल स्वयं एक हाथ में किताब और दूसरे में खड़िया लिए महल्लों और चौराहों पर खड़े लोगों को लिखना-पढ़ना सिखलाया करता है। सारी बातों को बाला-ए-ताक़ कर वह विद्या-दान के काम में जुट पड़ा है। उसे आशातीत सफलता भी मिल रही है, निरक्षरता मिट रही है। विज्ञान की तरक़्क़ी हो रही है। प्रतिवर्ष हज़ारों तुर्की विद्यार्थियों का क़ाफ़िला उच्च शिक्षा के लिये जर्मनी जाया करता है।

कमाल ने क़र्ज़ लेकर, ख़ज़ाने से बचाकर अपना और साथियों का मासिक वेतन काटकर सुशिक्षा में करोड़ों रुपया लगाया है। शिक्षा, विद्या और विज्ञान ही भविष्योन्नति की निशानी है। जहाँ छ फ़ीसदी साक्षर नहीं थे, वहाँ ६० फ़ीसदी शिक्षित हो चुके हैं। कमालपाशा मरते दम तक १०० फ़ीसदी टर्कों को शिक्षित कर जाना चाहता है।

पुनर्निर्माण

पुनर्निर्माण

कमालपाशा के शासन-काल में टर्की की चतुर्मुखी उन्नति हुई है, और हो रही है। रूस की लाल क्रांति का प्रभाव सारे विश्व पर पड़ा है। उसके आर्थिक संगठन और पुनर्निर्माण के कार्य-क्रम तथा पंचवर्षीय योजना ने संसार-भर को अपनी ओर आकर्षित किया है, अतएव टर्की ने भी उससे सबक़ लिया है। जनता की, ग़रीबों की, उन्नति और आर्थिक सुधार की कौन-सी ऐसी अर्वाचीन योजना है, जिसकी रूसी प्रोग्राम से नक़ल नहीं की गई है। यह बात दूसरी है कि लोग बोल्शेविज़्म के नाम से भागते हैं, और अपने कार्य-क्रम में यद्यपि परोक्ष में उसकी योजनाओं को अपनी परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तित कर स्थान देते हैं, तथापि उसका रूसी नामकरण करने से डरते हैं। जो भी हो, टर्की के मानसिक परिवर्तन और प्रगतिशील पुनर्गठन में सोवियट रूस के सिद्धांत टर्किश खोल ओढ़े बड़ी तेज़ी से अपना रचनात्मक काम कर रहे हैं।

*　　*　　*

कोई सौ वर्षों से योरपवाले टर्की के शरीर पर जोंक की तरह चिपटे हुए थे। सुल्तान मूर्ख होते थे, उनके वज़ीर और कारकुन स्वार्थी होते थे, अतएव विदेशवाले टर्की को मनमानी

तौर से लूटते थे। योरपियन राष्ट्रों के एजेंट ग्रीक और आरमीनियन थे, जो टर्की के जन्मजात शत्रु थे।

* * *

राष्ट्रीय हित का सबसे पहला काम जो कमाल ने किया, वह था किसानों के बहुत बड़े समुदाय को मैसीडोनिया से अंगोरा ले जाकर आबाद करने का। अनातोलिया का प्रदेश ज़रखेज़ था, कार्य-शक्ति के अभाव से वीरान पड़ा रहता था, अतएव वहाँ की आबादी बढ़ाना ही श्रेयस्कर था। लासेन कान्फ्रेंस की शर्तों के अनुसार टर्की-साम्राज्य से कोई १३,५०,००० ग्रीक अपने मुल्क को चले गए थे, बदले में टर्की को कोई ४,३२,००० तुर्क मिले थे। इनकी बहुत बड़ी संख्या को कमाल सरकारी व्यय से सहूलियतें और सहायता देकर अंगोरा में बसाने लगा, जिसके कारण शीघ्र ही अंगोरा के बाज़ार गुलज़ार हो गए, वीरान प्रदेशों में खेत लहलहाने लगे, पहाड़ों से खनिज पदार्थ खोदे जाने लगे। देश का पैसा देश ही में रहने लगा। सब मिल-जुलकर सामूहिक उन्नति के कार्य में सहयोग देन लगे।

टर्की में सेना के पुनःसंगठन का काम पूरा हो चुका है। टर्की की फ़ौज किसी भी पाश्चात्य राष्ट्र के टक्कर की है। किसानों के टैक्सों में बहुत कमी की जा चुकी है, और उन सबको सैनिक शिक्षा दी जाती है। जहाज़ी बेड़े को भी शक्तिशाली बनाने का प्रबल प्रयत्न हो रहा है। यद्यपि किसी देश

से शत्रुता बढ़ने या लोहा बजने का कोई फ़िलहाल मौक़ा नहीं है, फिर भी आत्मरक्षार्थ सब प्रकार से तैयार रहना ही इस युग में अच्छा है। राष्ट्रीय हित का कोई विभाग ऐसा नहीं है, जिसे कमाल ने अदम्य उत्साह के साथ टकराया न हो। और, चूँकि उन्नति और सुधारों के मूल में स्वदेश-भक्ति और राष्ट्रीयता की तरंगें हिलोरें मार रही हैं, अतएव मुल्क का क़दम बड़ी तेज़ी से आगे बढ़ रहा है। हफ़्तों का काम दिनों में, और दिनों का काम घंटों में पूरा हो रहा है। जो कुछ देरी हो रही है, उसका मूल-कारण रुपए की कमी है।

टर्की की पुनर्निर्माण रूपी पुस्तक का असली परिच्छेद २४ जुलाई सन् १९२३ की लासेन की संधि से प्रारंभ होता है। लासेन के सुलहनामे के साथ ही व्यापारिक संधि भी हुई थी, और दर्रे-दानियाल की स्ट्रेटों की बाबत पैक्ट भी बना था, जिनके द्वारा टर्की को आर्थिक संगठन में बहुत इमदाद मिली। बाहरवाली विदेशी शक्तियाँ थोड़े-से फ़ौजी नेताओं द्वारा आर्थिक पुनर्निर्माण के कार्य का होना असंभव मानती थीं। ये फ़ौजी लोग सेना में भले ही सफल रहे हों, पर अर्थ-शास्त्र के काम में बिल्कुल विफल रहेंगे—ऐसी उनकी धारणा थी। ग्रीक और आरमीनियन व्यापारियों की टर्की से विदायगी टर्की के लिये बड़ी हानिकर समझी जा रही थी। लोग ऐसा समझते थे कि आर्थिक प्रश्नों के समझने और सुधारने में इन दोनो की सहायता टर्की के लिये अनिवार्य थी। पर बात

बिल्कुल उल्टी ही थी। दोनो विदेशी क़ौमें एक ओर योरप के आयात और दूसरी ओर टर्की के निर्यात पर क़ब्ज़ा जमाए थीं। किसानों के पास पैसा बहुत कम था, अतएव बनी हुई चीज़ों का बदला अनाज और कपास के ज़रिए से ही होता था। कच्चा माल मोल लेते समय उन एजेंटों के दूसरे ही बाँट रहते, और पक्का विदेशों से आया हुआ माल बेचने में वे भरपूर क़ीमतें लेते। उन दिनों टर्की में सब तरह का विदेशी माल काफ़ी तादाद में खप रहा था। एक ओर विदेशी माल की सारी क़ीमत इँगलैंड, फ़्रांस और जर्मनी चली जाती, और दूसरी ओर कमीशन-एजेंटो और बीच के मुनाफ़े की मोटी रक़म ग्रीस और आरमीनिया पहुँच जाती। बेचारे किसानों की मिट्टी ख़राब थी। दरिद्रता दिन-पर-दिन बढ़ रही थी। आरमीनियनों और ग्रीकों के पास बड़ी-बड़ी हवेलियाँ और बहुमूल्य मोटरें थीं, जब कि टर्की की जनता फटे हाल झोपड़ियों में, रूखा-सूखा चबेना चबाकर अपने गर्दिश के दिन काट रही थी। थोड़े में, सारांश में, पाठकों को यह मान ही लेना चाहिए कि वर्तमान युग में विदेशी चीज़ों को अपने मुल्क में मँगाने से जहाँ एक ओर निर्धनता बढ़ती है, वहाँ दूसरी ओर बेकारी भी भयावह रूप धारण करती है—टर्की में भी दोनों ही समस्याएँ थीं।

टर्की की नई सरकार यह ख़ूब जानती थी कि योरपियनों में व्यापार का कितना लोभ है। वह व्यापारी-मंडल ऐसा है, जो

शीघ्र ही शासक-मंडल बन जाता है। राजनीतिक प्रतिस्पर्धा शीघ्र ही चल पड़ती है, और बेचारा कमज़ोर राष्ट्र उसके बीच में पकड़र धीरे-धीरे पिसता और घुलता रहता है। अतएव कमाल की सरकार ने अपनी स्थापना के प्रारंभिक काल से ही यह नियम बना दिया है कि कोई भी विदेशी, विना ५० फ़ी-सदी टर्की की पूँजी लगाए, कोई भी व्यापार, मिल या कारखाना नहीं खोल सकता है। ५० फ़ीसदी का आँकड़ा कम-से-कम है। टर्की की सरकार उसी विदेशी कारखाने को सुविधाएँ देती है, जिसमें टर्की का मूल-धन ६० से ७० फ़ीसदी तक लगा होता है। क़ानूनन् सारे विदेशियों के लिये, जो वहाँ व्यापार करें, टर्की-भाषा पढ़ना आवश्यक है, क्योंकि सारा काम-काज और लिखा-पढ़ी देश की भाषा में होना अनिवार्य रक्खा गया है।

निर्यात के उन पदार्थों को जिनका संसार के बाज़ारों में महत्त्व है, टर्की की सरकार ने अपने ही अधीन रक्खा है। तंबाकू, सारे खनिज पदार्थ सरकार के स्वाधीन हैं। विदेशी मशीनरी को देश में लाने के लिये ३० फ़ीसदी रेल-भाड़े की छूट रक्खी गई है, क्योंकि अभी तक टर्की में मशीनों के बना सकने की कोई बड़ी आयोजना पूरी नहीं हो पाई है।

* * *

टर्की की आर्थिक स्थिति बड़ी शोचनीय थी, जब क़माल ने शासन की बागडोर अपने हाथों में ली थी। बड़ी-बड़ी शक्तियों

ने फ़ौरन् ही अपने क़र्ज़े की अदायगी चाही। लेनदारों में फ़्रांस का रुपया सबसे ज़्यादा था, और उसका व्यवहार भी कड़ा था। शाहों के शासन-काल में फ़्रांस ने कोई सत्तर लाख स्वर्ण-फ़्रैंक का क़र्ज़ा राज्य, म्युनिसिपैलिटियों और व्यापारियों को दे रक्खा था। व्याज की दर बहुत ज़्यादा थी। जिन व्यवसायों में फ़्रांस का रुपया लगता था, प्रायः उन सबकी बागडोर फ़्रेंच व्यापारियों के हाथ में थी। दूसरा नंबर इँगलैंड का था, और फिर बेल्जियम तथा नादेरलैंड की रक़में थीं। जर्मनी और आस्ट्रिया के क़र्ज़ ग़ैर क़ानूनी क़रार दिए जा चुके थे, पर वारसलेज़ की संधि के अनुसार मित्र राष्ट्र उन रक़मों को माँग रहे थे।

लेनदार रक़मों की वसूलयाबी की जल्दी कर रहे थे, पर टर्की के पास फूटी कौड़ी नहीं थी। तुर्कों के अर्थ-मंडल ने पेरिस में उन व्याजख़ोरों से भेंट की, और बड़े झंझटों के बाद एक शर्तनामा बना, जिसके अनुसार धीरे-धीरे बहुत वर्षों में टर्की ने सारा रुपया देना मंज़ूर किया। यह समझौता पेरिस में १३ जून सन् १९२८ में हुआ था, जिसे अंगोरा की महासभा ने १२वीं दिसंबर सन् २८ में पास किया था। सन् १९३० के नवंबर में पेरिस और अंगोरा में कुछ तो रक़म की अदायगी में देरी के कारण और कुछ राजनीतिक मतभेद के कारण चख़-चख़ हो गई थी, पर बाद में शांति हो गई। मित्र राष्ट्रों के क़र्ज़े के कुछ आँकड़ों का विवरण इस प्रकार था, जिसे उन्होंने टर्की, बाल्कन स्टेट्स और अरब के ताल्लुक़ इस भाँति निकाला—

	१७ ऑक्टोबर सन् १९१२ से पहले का क़र्ज़	१७ ऑक्टोबर सन् १९१२ के बाद का क़र्ज़
टर्की	६०. २५ प्रतिशत	७६. ५४ प्रतिशत
बाल्कन स्टेट्स	२१. २४ प्रतिशत	०. ७१ प्रतिशत
अरब-प्रदेश	१८. ५१ प्रतिशत	२२. ७५ प्रतिशत

* * *

देश के अर्थ-शास्त्र-विशेषज्ञों की एक अर्थ-समिति अंगोरा में क़ायम की गई है, जिसका कर्तव्य देश के आर्थिक पुनर्निर्माण के काम की देख-रेख, उन्नति और सुधार करना है। इस कौंसिल का प्रधान मंत्री डॉ० नूरुल्ला है, जो बैंकर्स ट्रस्ट का प्रेसिडेंट है, जिसने युद्ध के बाद टर्की को दिवालिया होने से बचाया है। यह अर्थ-समिति राष्ट्र के मंत्रियों से बहुत निकट संपर्क बनाए रहती है। इसके अधिकारी बड़े-बड़े क़ाबिल-माहिर लोग हैं, जिनकी तुलना पाश्चात्य अर्थ-विशेषज्ञों से की जा सकती है।

पुनर्निर्माण के कार्य-क्रम में आर्थिक जीवन की प्रत्येक दिशा का ज्ञान रक्खा जाता है। जनता में वाणिज्य-व्यापार और कला-कौशल का अच्छा प्रचार हो रहा है। सरकार की ओर से अच्छे, ईमानदार फ़र्मों को आर्थिक सहायता भी दी जाती है, जो या तो बिना ब्याज रहती है, या उस पर एक या दो फ़ीसदी का सूद लिया जाता है।

टर्की के इतिहास में पहली बार राष्ट्रीय और तिजारती बैंकों की स्थापना हुई है। यद्यपि सुल्तान के काल में भी एक-दो बैंकें थीं, पर उनका लक्ष्य सार्वजनिक सहायता नहीं था, उनका मूल-धन प्रायः सुल्तान या अधिकारियों के व्यक्तिगत ख़र्चों और व्यापारों में लगता रहता था।

टर्की का सबसे पुराना बैंक ओत्तमन बैंक है, जिसे सन् १८६३ ईस्वी में सरकारी ख़रीता मिला था। १६ मार्च सन् १९३५ में उसका विशेषाधिकार समाप्त हो जायगा। बैंक का मूल-धन एक करोड़ पौंड समझा जाता है।

दूसरा प्रसिद्ध बैंक ज़ीरात बैंक है, जिसका प्राप्य मूल-धन दो करोड़ दस लाख पौंड है। इसकी ३०० शाखाएँ हैं, जिनमें २००० से ऊपर टर्की अफ़सर काम करते हैं। ख़र्चा बहुत कम है, पर यह बैंक किसानों को बहुत बड़ी इमदाद देता है।

अभी हाल में कला-कौशल और खनिज पदार्थों की उन्नति के लिये बैंक खुला है, जिसका मूल-धन छ करोड़ टर्किश पौंड है। एक ट्रस्टी बैंक है, जिसकी लागत २० करोड़ टर्किश पौंड है। राष्ट्रीय आर्थिक पुनर्निर्माण बैंक का मूल-धन भी यथेष्ट है। ध्यान रहे कि दस टर्किश पौंडों की क़ीमत एक अँगरेज़ी पौंड के बराबर होती है।

इस द्रव्य का बहुत-सा हिस्सा मिश्र के विख्यात खेदिव अब्बास हिल्मी ने लगाया है। कुछ बड़े-बड़े टर्की के व्यापारियों का भी पूर्ण सहयोग है।

इन बैंकों की आर्थिक अवस्था बहुत अच्छी है। विश्वास भी काफ़ी है। ईमानदारी से काम होता है। नए नोटों का बनाना बड़ी सख़्ती और पाबंदी से अंतरराष्ट्रीय नियमों के अनुसार होता है।

सन् १९२८ में देश की व्यापारिक अवस्था टर्की के लिये ४५,०००,००० टर्किश पौंडों से हितकर रही। आँकड़े इस प्रकार रहे—

	आय	व्यय
आयात और निर्यात	२५९.७	२०९.०
तनख़्वाहें	५.३	९.८
व्याज	८.३	०.७
विदेशी हुंडी ट्रांसफ़र प्राइवेट	७.२	४.४
विदेशी हुंडी ट्रांसफ़र सरकारी	३.१	५.३
रुपए का विदेशों में भेजना और मँगाना	....	९.४
	२८३.६	२३८.६

सरकारी बजट की अवस्था इस प्रकार रही है—

	ख़र्च	आय	कमी	ज़्यादती
१९२५	१८३.९३३	१५३.०४७	३०.८८६	×
१९२८	२०७.१११	२०७.१७३	×	०.०७२
१९३१	१८०.०००	१८०.०००	—	—

जिन विभागों या व्यापारों पर सरकार का अधिकार है, उनकी आमदनी की तालिका इस प्रकार है—

तंबाकू	....	२२
नमक	....	१०
शकर	(१९३० से छोड़ दी गई)	५
पेट्रोलियम	(,, ,,)	५
दियासलाई	....	२
शराब वग़ैरह	....	५
विस्फोटक पदार्थ	....	१
डाक और तार	....	७

प्रारंभ ही से कमाल की सरकार ने इस बात का अनुभव किया है कि देश में अच्छे बंदरगाहों, रेलों और सड़कों की बड़ी कमी है।

कमाल के शासनारूढ़ होने के समय अंगोरा-बगदाद-स्मरना रेलवे के सिवा कोई रेल न थी। पूर्वीय अनातोलिया के क्षेत्र में रेलवे-लाइन न होने से राज्य को बड़ी असुविधा और क्षति होती थी। गत युद्ध के समय, जब रूस के साथ विग्रह चल रहा था, तब, टर्की को बड़ी कठिनाई पड़ी थी।

प्रजातंत्र सरकार ने स्वेडेन और जर्मनी के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध फ़र्मों को ठेका देकर रेल-पथ की बहुत कुछ तरक्क़ी कर ली है। अंगोरा-प्रदेश में रेल बिछ गई है। पूर्वीय अंगोरा के पहाड़ी प्रदेश में भी लाइन बनने की स्कीम तैयार है। हैदरपाशा-बंदरगाह

से क़ुस्तुंतुनिया तक; इश्मद इस्करी शहर कोनिया, काराहेसर वग़ैरह को अंगोरा से जोड़ दिया गया है। मरसीनिया से भूमध्य महासागर तक लाइन निकल गई है। स्तंबोल से अंगोरा की लाइन बड़े महत्त्व की समझी जाती है। इतनी दूरी का सफ़र टर्की एक्सप्रेस सिर्फ़ नौ घंटे में तय कर देती है। लंदन-अनातोला-एक्सप्रेस सोने और खाने की गाड़ियों से सुसज्जित रहती है, जिससे विदेशों से आनेवाले यात्रियों को कोई कष्ट नहीं होता है। टर्की की गाड़ियाँ समय की ख़ूब पाबंदी रखती हैं, और उनके लेट होने की बहुत कम नौबत आती है। कमाल का हुक्म है कि काकेशिया तक, रुस तक, ब्लैक सी के किनारे तक टर्की की रेल फैल जानी चाहिए, अतएव रेल बनाने का काम बड़ी तेज़ी से हो रहा है।

टर्किश गवर्नमेंट ने जल-मार्गों में भी बहुत सुधार किया है। कैबिनेट ने एक करोड़ पौंड (अंगरेज़ी) अच्छे बंदरगाहों के निर्माण में व्यय करने का निश्चय किया है, जिससे मुल्क की तिजारत की तरक़्क़ी हो सके। ब्लैक सी के किनारे समसुन और इरेगला के दो अच्छे बंदर बन चुके हैं, अनातोलिया के उत्तर में भी अच्छे समुद्री किनारे तैयार हो रहे हैं। मरसीना-नामक बंदरगाह अनातोलिया के दक्षिण में बहुत विख्यात है, जिसके ज़रिए से तिजारत को तरक़्क़ी पहुँची है, सहूलियत के साथ-साथ भाड़े में बहुत बचत होती है।

पार्लियामेंट ने सड़कों और पुलों के निर्माण की ओर काफ़ी

ध्यान दिया है। ५००० किलोमीटर से ज़्यादा दूरी की सड़कें बन चुकी हैं, या उन पर काम लगा हुआ है। ⅔ सड़कें सीमेंट की नए तर्ज़ की बिल्कुल नई और पक्की बनी हैं, जिनके टूटने का अंदेशा नहीं है। हल्का-सा रोड-टैक्स भी लगाकर नई-नई सड़कों को बनाते चले जाने का सरकारी मत है।

मोटर और मोटर लारियों का चलन ख़ूब बढ़ रहा है। अच्छी सड़कों के कारण मोटरों की यात्रा में कोई असुविधा नहीं होती है। सरकारी रेलों से लारियाँ किराए में चढ़ा-ऊपरी करके सस्ती पड़ने लगी हैं, पर गवर्नमेंट इसकी कुछ परवा नहीं करती है।

म्युनिसिपैलिटियाँ नई इमारतों के बनाने का काम जारी किए हैं। मिसाल के तौर से, अंगोरा में पहले सिर्फ़ ४०,००० प्राणी रहते हैं, अब उनकी संख्या एक लाख से ऊपर पहुँच गई है। नए दफ़्तर, नए मकान, नए क्वार्टर निरंतर बनते चले जा रहे हैं। नवीन पाश्चात्य ढंग की इमारतें बन रही हैं। यात्री को अंगोरा में पहुँचकर यह भ्रम हो जाता है कि वह एशिया-माइनर के किसी भाग में खड़ा है, या योरप की सड़कों पर टहल रहा है।

सफ़ाई और पानी का बहुत अच्छा इंतज़ाम है। जल के लिये नई प्रणाली के पंपों का इस्तेमाल किया जा रहा है। अंगोरा में सदा से पानी की कमी थी, अतएव उस न्यूनता को पूरा करने के लिये एक बहुत बड़ा और गहरा तालाब खोदा गया है।

उसकी सतह फोड़ दी गई है। बिल्कुल झील या छोटे समुद्र की तरह उसकी विशालता और परिधि है। उससे वाटर-सप्लाई और आबपाशी के कार्य में बड़ी सहायता मिली है। कई करोड़ टर्किश पौंडों की लागत से यह जलाशय बना है।

निस्संदेह इस पुनर्निर्माण के कार्य ने टर्की के हज़ारों व्यक्तियों को कार्य और रोज़गार दिया है। इसके सहारे ईंट, गारा, चूना, सीमेंट, टाइल वगैरह बनाने की मिलें खुल गई हैं। आजकल ट्राम, बिजली के कारख़ाने तथा अस्पताल वगैरह बनाने की ओर सरकार जनता का ध्यान आकर्षित कर रही है। रुपए की कमी के कारण इन मदों में पूरी कार्यवाही नहीं हो सकी है, यद्यपि कई बड़े शहरों में बिजली की कलें वगैरह की स्थापना हो चुकी है।

लासेन की संधि की स्याही मुश्किल से सूखने पाई थी कि तमाम विदेशी फ़र्म और सट्टेबाज़ योरप तथा अमेरिका से आ डटे, और भिन्न-भिन्न लाइनों के लिये ठेके माँगने लगे। इन विदेशी व्यापारियों ने उन दरों पर टेंडर दिए, जो उनकी लागत से भी कम थे, क्योंकि वे घूस वगैरह देकर अपने जैसे-तैसे काम को सरकारी दफ़्तर से पास करा लेने की स्कीमें बनाए थे। वे शाहों और सुल्तानों का ज़माना देखे हुए थे, कमाल और राष्ट्रीय दलवालों को, जिनके लिये एक पैसा खाना हराम था, वे भली भाँति नहीं जानते थे। सुल्तानियत के उठते ही बख़्शीश की रस्म भी टर्की से उठ गई थी। कमालिस्ट गवर्नमेंट बड़ी

सख़्ती और ईमानदारी से काम चला रही थी। ज़रा-सा ग़बन या बेईमानी साबित होते ही बड़े-से-बड़े अफ़सर को सज़ा दी जाती। जल-सेना-विभाग के मंत्री मुहम्मद इकशान तथा दूसरे अफ़सरों को सन् १९२७-२८ में ग़बन के अपराध में कड़ी-कड़ी सज़ाएँ दी गईं, जिससे लोग चौकन्ने हो गए। टर्की के सरकारी काम जिस ख़ूबी और नेकनीयती से चल रहे हैं, उस सचाई से बहुत कम मुल्कों में चलते होंगे। और, अब तो टर्क राष्ट्रीय भावनाओं से जाग्रत् होकर स्वयं ही देश के लाभालाभ का विचार कर ऐसे अपराधों में बहुत ही कम शरीक होते हैं, क्योंकि वहाँ की कठोर न्याय-प्रिय अदालतों में ऐसे मुक़दमे बहुत कम पेश होने को आते हैं।

टर्की की आय के दो मुख्य साधन हैं—एक तो खेती, और दूसरे खनिज पदार्थों की खुदाई। सुल्तान के शासन-काल में न तो वैज्ञानिक तौर-तरीक़े ही बतलाए जाते थे, और न अच्छी खाद, अच्छे औज़ार वग़ैरह का ही कोई इंतज़ाम था। खनिज पदार्थ यों ही पड़े थे।

कृषि वहाँ तीन विभागों में विभाजित है—पहली अन्न की पैदावार, जिससे जनता का पेट भरे, दूसरे तंबाकू, रुई, अफ़ीम, अंजीर और फल, और तीसरे पशु-पालन, डेरी फ़ार्म, भेड़ों का पालना, जिनके द्वारा ऊन और खाल उपलब्ध हो सके। दुनिया में बढ़ती हुई सिगरेट की माँग के कारण टर्की की तंबाकू की पैदावार ख़ूब बढ़ रही है, और उसमें किसानों को

मुनाफ़ा भी है। टर्की की तंबाकू सारे संसार में मशहूर है। अच्छी दर पर उसकी खपत का इंतज़ाम सरकारी सहायक डिपार्टमेंट देश-विदेशों से लिखा-पढ़ी करके स्वयं ही कर देता है, जिससे किसान लुटने से बच जाता है। और, इसीलिये तंबाकू के निर्यात को सरकार ने अपने हाथों में ले रक्खा है।

ज़ैतून और ज़ैतून का तेल भी टर्की से बाहर ख़ूब भेजा जाता है। स्मरना उसका केंद्र है।

पशुओं की वृद्धि, उनकी नस्ल और उनके स्वास्थ्य पर बहुत ध्यान दिया जाता है। आस्ट्रेलिया, इँगलैंड और अमेरिका से घोड़े, बैल, भेड़ें और गाएँ बहुतायत से मँगाई गई हैं। टर्की की सरकार पशु-पालन की विधि और उनकी तरक़्क़ी की बातों पर बराबर प्रकाश डालती रहती है।

* * *

पश्चिमीय अनातोला में कितनी ही धातुओं की खानें हैं। ताँबा अरधाना में और कोयला ज़ंगुलदक, जिदो तथा ब्लैक सी के किनारों पर ख़ूब मिलता है। चूँकि अब रेलवे बन गई है, इस वास्ते इन प्रदेशों के खनिज पदार्थों को देश के प्रत्येक भाग में ले जाने की सहूलियत है।

नमक भी बहुत निकलता है। किनारे के समुद्रों, खाड़ियों तथा अनातोला के पहाड़ों में नमक की बहुतायत है।

वहाँ शीशा, पारा, पेट्रोल, अल्मोनियम और चपड़ा वग़ैरह भी पाया जाता है।

इन सबमें पेट्रोलियम बहुत लाभ-प्रद और उपयोगी साबित हुआ है। अभी टर्की में, मेसोपोटामिया और मोसल में, बहुत पेट्रोलियम सुरक्षित है, जो अनेक कारणों से नहीं खोदा गया है। कहते हैं, उसकी मिक़दार इतनी है कि ५० वर्ष तक सारे पूर्व को सप्लाई किया जा सकता है।

टर्की ने अब अपने जहाज़ बनाए हैं, जो १०,७००,००० टन से ज़्यादा के हैं। टर्की का समुद्री किनारा बहुत बड़ा है, अतएव इतने जहाज़ों से काम पूरा नहीं पड़ता है। केवल ४५ प्रतिशत काम टर्की के जहाज़ कर पाते हैं, बाक़ी ५५ फ़ीसदी व्यापारिक काम विदेशी जहाज़ों द्वारा हो रहा है। आशा है, दो-तीन वर्षों के अंदर ही टर्की का बेड़ा ७५ फ़ीसदी काम कर लेने लायक़ हो सकेगा, क्योंकि अभी कई बड़े-बड़े जहाज़ों का निर्माण हो रहा था, जिनके लिये इटली और जर्मनी ऑर्डर गया है। संक्षिप्त में टर्की के पुनर्निर्माण का यही वर्णन है।

* * *

टर्की में समाचार-पत्रों की खूब उन्नति हो रही है। स्तंबोल और अंगोरा में बड़े-बड़े विशाल प्रेस हैं, जो बड़े सुसंगठित, राजनीतिक दृष्टि से बड़े शक्तिशाली और सार्वजनिक शिक्षा के लिये बड़े उपयोगी हैं।

टर्की के समूचे इतिहास में अखबार इतने शक्तिशाली कभी नहीं थे, जितने आज हैं। वे प्रबंध और संपादन बिल्कुल

योरपियन ढंग से करते हैं। उनके संवाददाता योरप के सारे बड़े-बड़े नगरों में रहते हैं, जो बहुत जल्द सही-सही ख़बरें अपने क़ुस्तुंतुनिया-ऑफ़िस को भेजा करते हैं। टर्की की तार की सर्विस एकदम नवीन और वैज्ञानिक है, रेडियो का उपयोग भी ख़ूब है। मासिक और साप्ताहिक पत्रों की संख्या भी काफ़ी बढ़ रही है। इस समय वहाँ कोई १५० समाचार-पत्र और १०० के क़रीब मासिक, पाक्षिक और साप्ताहिक निकल रहे हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है—

भाषा	समाचार-पत्र	मैगज़ीन
तुर्की	१२७	८९
फ़्रेंच	७	२
ग्रीक	५	१
स्पेनिश	३	१
आरमीनियन	५	५
जर्मन	१	
इटालियन	१	
रूसी	१	१

दैनिक पत्र योरप की बनी हुई नई रोटरी मशीनों पर छपने के कारण ख़बरें बहुत शीघ्र देते हैं। जो घटना योरप में दोपहर में घटित हुई, उसे टर्की के दैनिक तीन बजे तक प्रकाशित कर डालते हैं। एक-एक पत्र के दर्जनों संस्करण प्रकाशित हो रहे हैं।

टर्की के पत्रकार ही प्रकाशक भी हैं। जहाँ से दैनिक या मासिक निकलते हैं, प्रायः वहीं से पुस्तकें भी निकलती हैं। टर्की में जंगलात बहुत हैं, अतएव सरकार ने कागज़ बनाने के लिये काले समुद्र के किनारे पेपर-मिल खोले हैं। कई और कागज़ के कारख़ाने खुलनेवाले हैं। सन् १९२९ की पहली जनवरी से टर्की-भाषा लैटिन हरूफ़ों में लिखी जाने लगी है। इससे प्रकाशन-कार्य को बड़ी सरलता और प्रोत्साहन मिला है, क्योंकि अरबी-भाषा के नुक़्तों, अनुस्वारों व तरह-तरह के मिलवाँ अक्षरों के कारण बहुत देरी और दिक़्क़त होती थी। यह कमालपाशा-जैसे दिग्गज ही का काम है, जिसे भाषा की लिपि तक बदल देने में सफलता मिली है।

लैटिन-लिपि के बढ़ते हुए प्रचार के कारण टर्की में टाइप-राइटरों की माँग बहुत बढ़ गई है। पहले ही साल गवर्नमेंट ने ऑर्डर देकर ६००० टाइपराइटर विदेशों से मँगाए थे। कमाल-पाशा ने चेष्टा की है कि टाइपिस्ट के काम पर ज़्यादातर स्त्रियाँ ही रक्खी जायँ। गवर्नमेंट ऑफ़िसों में तो टाइप करने का सारा काम महिलाओं ही के हाथ में है। टर्की से बुरक़ा बिदा हो चुका है, अतएव आर्थिक स्वतंत्रता के साथ-ही-साथ इस कार्य ने स्त्रियों में शिक्षा का भी अच्छा प्रचार किया है।

* * *

कमाल ने जितने सुधार किए हैं, और जितनी नियामतें

बख़्शी हैं, उन सबमें स्त्रियों की स्वतंत्रता का सबसे बड़ा महत्त्व है। कमालपाशा ने स्कूल-मास्टर की तरह, सच्चे सुधारक की तरह, कोड़ा लेकर टर्की की सामाजिक कुरीतियों को दूर किया है, और स्त्रियों को—पराधीनता और पर्दे की बेड़ियों में कसी हुई स्त्रियों को—स्वाधीन जगत् का स्वाद चखाया है। आधा अंग अंधकार में पड़ा रहे और आधा प्रकाश में, तो अर्धांग गलता जायगा, और उसका दूषित प्रभाव प्रकाश में रहनेवाले शेषांग पर भी ज़रूर पड़ेगा। वह समाज और वह जाति कभी उन्नति कर ही नहीं सकती, स्वाधीनता पा ही नहीं सकती, जो अपनी ललनाओं को कूप-मंडूक बनाए रखने और पर्दे में ढके रखने का अनुचित और अमानुषिक प्रयास करती है। स्वयं स्वाधीनता चाहो, और अपने आश्रितों को पिंजड़े में डाले रखने का ज़ुल्म करो। जो ऐसा करते हैं, वे अपनी आत्मा को धोका देते हैं, और परमात्मा उनके पापों का फल उन्हें अवश्य देता है। भला ग़ुलाम, दब्बू, पर्दानशीन औरतें स्वतंत्र प्रकृति के, स्वाधीन भावनाओं के बच्चों को कैसे जन सकती हैं। घर की चहारदीवारी उनके स्वास्थ्य को चौपट कर डालती है. पर्दे की प्रथा बुद्धि पर, विवेक पर और दुनिया के प्रकाश पर बिल्कुल पर्दा डाले रहती है। संसार में क्या हो रहा है, अन्यान्य देशों की स्त्रियाँ शारीरिक और मानसिक क्षेत्रों में कितना आगे बढ़ चुकी हैं, यह वे ही देख सकते हैं, जिनकी हिये की आँखें फूटी नहीं हैं। उन स्वाधीन महिलाओं के बच्चों की

तुलना जब पराधीन स्त्री-जगत् के लाड़लों से की जाती है, तो अंतर स्पष्ट दिखाई पड़ता है। मानो वे शासन करने के लिये ही जन्म लेते हैं, और ये दबकर रहने, शासित होने और उनके गुलाम बनने के लिये। दोनो के स्वास्थ्य और विचार आकाश-पाताल के अंतरवाले होते हैं। जहाँ एक ओर योरप का बालक अकेला संसार-भ्रमण कर आता है, दुनिया के भूगोल, इतिहास, पैदावार और व्यक्तियों का ज्ञान रखता है, देश-भक्त होता है, वहाँ हिंदोस्तानी लड़का दुबला-पतला, किताबों का कीड़ा, रातो-दिन मा-बाप की फटकारें सुननेवाला, स्वार्थी, स्वाभिमान-शून्य और संकुचित दृष्टिवाला होता है। कमाल ने इन्हीं पहलुओं पर विचार कर क़ानूनन् स्त्रियों को स्वतंत्रता का अधिकार दिलवाकर बुरक़ा और बेवक़ूफ़ी को टर्की से निकाल फेंका है।

पहले की टर्की में अमीर-उमरा व साधारण प्रजा भी हरम और बीवियों का क़ाफ़िला रखती थी। अब टर्की से बहु विवाह-प्रथा उठ गई है, और एक से अधिक बीवी रखना जुर्म में शुमार है।

टर्की में तलाक़ जायज़ है। स्त्री और पुरुष को समानता का अधिकार है।

अख़बारों को देखने से पता चलता है कि समाचार-पत्र महिलाओं की मतलब की कितनी बातें छापने लगे हैं। लाखों महिलाएँ नित्य समाचार-पत्र पढ़ती और उनमें अपने

विनोद तथा उपयोग की सामग्री ढूँढ़ती हैं। बाल कटाने के अच्छे सैलूनों, तेल, पामेड, वैसलीन, हैज़लीन-ब्यूटी, क्रीम वग़ैरह के विज्ञापन बहुतायत से टर्की के दैनिक पत्रों में देखने को मिलते हैं।

स्त्रियाँ शिक्षा और साहित्य के क्षेत्र में भी बढ़ रही हैं। छोटे बच्चों को पढ़ाने में वे बड़ी कुशल पाई गई हैं।

इन भावनाओं से, नई स्वतंत्रता और नई उमंगों से, कुछ बुराइयाँ भी फैली हैं, जो अनिवार्य हैं। बालक-बालिकाओं के भेद के हटने, उनके साथ रहने, साथ पढ़ने और साथ खेलने से, युवक-युवतियों में फ़ैशन के बढ़ने से, कोई सामाजिक रोक-टोक न होने से, स्कूलों-कॉलेजों की शिक्षा से, पब्लिक में नाचने-गाने से, डैंसों में साथ शरीक होने से, परस्पर का आकर्षण बढ़ा है। जिसे पूर्वीय देशवाले दुश्चरित्रता समझते हैं, वह भी बढ़ी है, और प्रेम की पहली उमंगों का प्रवाह ख़ूब आगे चढ़ा है। युवक और युवतियाँ गले में हाथ डाले कुंजों और बागीचों में आनंद से किलोलें करती फिरती हैं। फ़ैशन की भी ख़ूब वृद्धि हुई है। हाँ, वेश्यागमन में कमी हुई है। ग्रीक देश की हज़ारों वेश्याएँ, जो टर्की के युवाओं से लाखों रुपया साल में ठग ले जाया करती थीं, अब देश में नहीं आने पाती हैं, और न युवक उनकी क़द्र ही करते हैं। पर इन थोड़ी-सी बुराइयों के कारण, जिनका प्रवेश स्वाधीनता के प्रथम चरण में अनिवार्य था, महिलाओं की ग़ुलामी बनाए रखना ख़ुदा का

ग़ज़ब होता। यह उफान अब तो बहुत कुछ कम हो गया है, दुराचार का दौरदौरा घटकर कोमलता और प्रेम के दायरे में आता जाता है। पूर्वीय देशों के मूर्ख लोग, जो युवक और युवतियों के बिल्कुल बाइकाट के क़ायल हैं, और उनका सहयोग और साथ रहना अक्षम्य अपराध समझते हैं, तो अब भी टर्की-समाज की रीति-नीति को बुरा कहेंगे, पर जो वर्तमान संसार की प्रगति और हवा के रुख़ को देख रहे हैं, वे टर्की की महिला-समाज की गति-मति को सराहे बिना न रहेंगे। व्यभिचार और पापाचार पर्दे के अंदर ही ज़्यादा होते हैं, यह लोग ख़ूब समझ लें। टर्की की महिलाएँ क़ानूनन् सुरक्षित कर दी गई हैं। उन्हें अपना पति स्वयं चुनने का अधिकार है। विवाह में मिली हुई, दहेज में प्राप्त सारी वस्तुओं पर पत्नी का अधिकार रहता है। स्त्री और पुरुष दोनो ही को समुचित कारण दिखलाकर पृथक् हो जाने का अधिकार है। जो पति अपनी पत्नी पर ज़ुल्म करे, मारे-पीटे, और गुस्ताख़ी से पेश आवे, उसके लिये छ महीने के जेलख़ाने की सज़ा है। पुराने ज़माने के मुल्लाओं की तलाक़-प्रथा स्त्रियों पर कितना ज़ुल्म ढाती थी, पुरुष की आवाज़ सर्वे-सर्वा थी, और बेचारी स्त्री बुरक़ा ओढ़े, बिन बोले, बिना सफ़ाई दिए, बिना अपने ख़ाविंद के अत्याचारों का इज़हार किए अन्याय की चक्की में पीस दी जाती थी। नवीन टर्की की उपदेश-पूर्ण पुस्तक से हम लोग सबक़ के कै वर्क़ लेते हैं, यह देखने और समझने की बात है। "यत्र नार्यस्तुः पूज्यन्ते रमन्ते तत्र

देवता:"-वाली अपनी पुरानी उक्ति का स्मरण करते हुए अब हम पाठकों से विदा लेते हैं।